स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

जून, 2020
I.S.S.N. : 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Cover 11

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग, प्रभारी वि.सा.प्र.

श्री एस. आर. ढलेटा,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं
विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु
गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

श्री ए. के. अवस्थी,
सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं डीन, विधि
संकाय लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

श्री एल. आर. सिंह,
प्रोफेसर एवं डीन इलाहाबाद
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

श्री असलम खान,
संपादक

सहायक संपादक : श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

ISSN 2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2020 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा.................................. द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

जून, 2020 अंक - 6

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

अविनाश शुक्ला

सत्यमेव जयते

विधि साहित्य प्रकाशन

(2020) 1 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on Website ➡ https://bharatkosh.gov.in/product/product

---

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्च न्यायालयों द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो अधिवक्ताओं, विधि छात्रों, न्यायाधीशों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

मैं, इस संपादकीय के माध्यम से आपका ध्यान इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा **सर्राफ राज मोहम्मद** बनाम **अध्यक्ष, नगरपालिका परिषद् और एक अन्य** [(2020) 1 सि. नि. प. 744 = ए. आई. आर. 2020 इलाहाबाद 175] वाले मामले की ओर आकर्षित करना चाहता हूं । इस मामले में माननीय न्यायालय ने माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11 का निर्वचन करते हुए अभिनिर्धारित किया कि अधिनियम की धारा 11 मात्र उस प्रक्रिया को अधिकथित करती है, जिसके द्वारा माध्यस्थम् अधिकरण का गठन किया जाता है और इस धारा का अवलंब लिए जाने के लिए पक्षों के मध्य निष्पादित कार्य आदेश में माध्यस्थम् खंड की विद्यमानता अनिवार्य है । कार्य आदेश में माध्यस्थम् खंड की अनुपस्थिति में न्यायालय किसी भी पक्ष को विवाद का निपटारा माध्यस्थम् द्वारा कराने के लिए विवश नहीं कर सकता, जब तक कि दोनों पक्ष इसके लिए स्वेच्छापूर्वक सहमति प्रदान न कर दें ।

पत्रिका में समायोजित सामग्री और गुणवत्ता के संबंध में सभी पाठकों के विचार अपेक्षित हैं । अगली पत्रिका के संपादन के समय उनके विचारों पर ध्यान दिया जाएगा ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

जून, 2020

निर्णय-सूची

पृष्ठ संख्या

आकाश एजुकेशनल सर्विसेस लिमिटेड **बनाम** साहित सीतल सिंह बाजवा और अन्य	797
गगन सिंह और एक अन्य **बनाम** हेमराज और अन्य	844
धर्मेन्द्र रघुबंशी **बनाम** राधा गोयल	832
बांके बिहारी डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड (मैसर्स) **बनाम** फैसन वर्ल्ड	738
राधाबाई और एक अन्य **बनाम** जी. भीमन **उर्फ** भीमा और अन्य	821
विजय पाल सिंह (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि अजय पाल सिंह **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य	727
सदानंद सिंह कंस्ट्रक्शन **बनाम** प्रबंध निदेशक, एन. बी. सी. सी.	815
सर्राफ राज मोहम्मद **बनाम** अध्यक्ष, नगरपालिका परिषद् और एक अन्य	744
सुपर कैसेट्स इंडस्ट्रीज **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य	750
सुष्मिता साहा मजूमदार **बनाम** सुशांत साहा	773

संसद् के अधिनियम

वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) अधिनियम, 1963 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 24

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 28)

– धारा 4क [सपठित औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 और 2क] – स्थानांतरण आदेश के अननुपालन के कारण कर्मकार की सेवा समाप्ति आदेश की विधिमान्यता – सेवा समाप्ति आदेश सेवा-शर्तों के प्रतिकूल पाया जाना – श्रम न्यायालय स्थानांतरण आदेश के अननुपालन के बाबत आरोप पर आधारित बर्खास्तगी की विधिमान्यता को निर्णीत करते हुए स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता पर भी विचार कर सकता है, यद्यपि निदेश उसके स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता पर विचार किए जाने के बाबत न हो ।

सुपर कैसेट्स इंडस्ट्रीज बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 750

– धारा 4क [सपठित औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 और 2क] – स्थानांतरण आदेश के अननुपालन के कारण कर्मकार की सेवा समाप्ति आदेश की विधिमान्यता – सेवा समाप्ति आदेश सेवा-शर्तों के प्रतिकूल पाया जाना – बर्खास्तगी आदेश और स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता को पृथक् नहीं किया जा सकता – श्रम न्यायालय द्वारा इन दोनों का विनिर्धारण एक साथ किया जाना चाहिए ।

सुपर कैसेट्स इंडस्ट्रीज बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 750

पृष्ठ संख्या

परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36)

– विलंब क्षमा किया जाना – असामान्य और सामान्य विलंब के मध्य विभेद – परिसीमा विधि का अधिदेश पक्षों के लिए न्याय के द्वार को बंद या गुणागुण पर न्यायनिर्णयन किए जाने से इनकार करना नहीं है – विधि न्यायालयों का यह निरंतर प्रयास होना चाहिए कि वे गुणागुण पर विवाद्यकों का न्यायनिर्णयन करें और सारभूत आधार पर न्याय का संवितरण करें ।

विजय पाल सिंह (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि अजय पाल सिंह बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 727

– विलंब क्षमा किया जाना – असामान्य और सामान्य विलंब के मध्य विभेद – न्यायालयों को विलंब क्षमा से संबंधित मामलों में उदार, व्यवहारिक और न्यायोन्मुख दृष्टिकोण अपनाना चाहिए – न्यायालयों को ऐसे मामलों में रूढ़िवादी दृष्टिकोण से बचना चाहिए और प्रक्रिया के दासत्वभाव से परहेज करना चाहिए ।

विजय पाल सिंह (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि अजय पाल सिंह बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 727

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1)

– धारा 65 और 66 – द्वितीयक साक्ष्य – न्यायालय के समक्ष विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में अभिलेख पर स्वीकार किए जाने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया जाना और विपक्षी को इसकी सूचना न दिया जाना – इस आधार पर न्यायालय आवेदन को अस्वीकृत नहीं कर सकता, विशेष

पृष्ठ संख्या

रूप से तब जब वादी का यह विनिर्दिष्ट पक्षकथन भी नहीं है कि द्‍वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किए जाने के लिए ईप्सित दस्तावेज प्रतिवादी के कब्जे में है ।

गगन सिंह और एक अन्य बनाम **हेमराज और अन्य** 844

– धारा 65 और 66 – घोषणात्मक वाद में विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत किया जाना – वादी द्‍वारा सुस्पष्टतः अभिकथित किया जाना कि दोनों पक्षों ने विक्रय विलेख के निष्पादन के पश्चात् मूल विक्रय विलेख संबद्ध राजस्व प्राधिकारियों को हस्तगत कर दिया था – वादी के इस कथन को प्रतिवादी द्‍वारा सुस्पष्ट रूप से विवादित न किया जाना – यदि विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति को प्राथमिक साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जाता है, तो इससे प्रतिवादी के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा, विशेष रूप से तब जब उसे समुचित प्रक्रम पर इस दस्तावेज के खंडन का अवसर प्राप्त होगा ।

गगन सिंह और एक अन्य बनाम **हेमराज और अन्य** 844

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26)

– धारा 11 – मध्यस्थ की नियुक्ति – कार्य आदेश में माध्यस्थम् खंड का समाविष्ट न होना – 1996 की अधिनियम की धारा 11 मात्र उस प्रक्रिया को अधिकथित करती है, जिसके द्‍वारा माध्यस्थम् अधिकरण का गठन किया जाता है और इस धारा का अवलंब लिए जाने के लिए कार्य-आदेश में माध्यस्थम् खंड की विद्‍यमान्यता अनिवार्य है – माध्यस्थम् खंड की

पृष्ठ संख्या

अनुपस्थिति में न्यायालय किसी भी पक्ष को विवाद का निपटारा माध्यस्थम् द्वारा करने के लिए विवश नहीं कर सकता, जब तक कि दोनों पक्ष स्वैच्छिक रूप से सहमत न हों ।

सर्राफ राज मोहम्मद बनाम **अध्यक्ष, नगरपालिका परिषद् और एक अन्य** 744

– धारा 11(4) – मध्यस्थ की नियुक्ति और अधिकारिता – करार में विवाद के निपटारे के लिए माध्यस्थम् खंड का विद्यमान न होना – करार में माध्यस्थम् के बाबत नकारात्मक में उल्लेख होना – यह तथ्य कि दोनों पक्ष करार के अंतर्गत परिकल्पित विवाद निस्तारण प्रणाली के निबंधनों के अनुसार विवाद का समाधान कर पाने में विफल रहे और माध्यस्थम् द्वारा विवाद का समाधान किए जाने की शर्त नकारात्मक में है – उच्च न्यायालय को माध्यस्थम् द्वारा विवाद के निपटारे की अधिकारिता प्रदत्त नहीं होती ।

सदानंद सिंह कंस्ट्रक्शन बनाम **प्रबंध निदेशक, एन. बी. सी. सी.** 815

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47)

– धारा 20 [सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 1, नियम 10] – विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद – तृतीय पक्ष द्वारा वाद में पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के लिए आवेदन – यदि तृतीय पक्ष द्वारा वादग्रस्त संपत्ति के स्वत्व और हित के संबंध में उचित

पृष्ठ संख्या

और तर्कसंगत साक्ष्य प्रस्तुत किए जाते हैं, तो उसे वाद के पक्ष के रूप में संयोजित किया जा सकता है ।

धर्मेन्द्र रघुबंशी बनाम **राधा गोयल** 832

संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9)

– धारा 27 – कारबार के निर्बंधन के प्रयोजनार्थ संविदा – प्रत्यर्थियों की प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी के प्रयोजनार्थ याची का कोचिंग सेंटर चलाने के लिए फ्रेंचाइजी के रूप में नियुक्ति – संविदा की शर्तों के अंतर्गत याची समान पाठ्यक्रम के प्रयोजनार्थ कोई अन्य कोचिंग सेंटर आरंभ करने से दो वर्षों की अवधि तक निषिद्ध थे – संविदा में इस बात का उल्लेख न होना कि संविदा की समाप्ति के पश्चात् प्रत्यर्थी आरंभिक फ्रेंचाइजी करार के व्यतीत हो जाने की तारीख तक समान पाठ्यक्रमों के लिए कोचिंग सेंटर नहीं चला सकते – फ्रेंचाइजी करार समाप्त किया जाना – प्रत्यर्थी को समान पाठ्यक्रमों को चलाने के प्रयोजनार्थ कोई अन्य कोचिंग सेंटर आरंभ करने से निषिद्ध नहीं किया जा सकता ।

आकाश एजुकेशनल सर्विसेस लिमिटेड बनाम **साहित सीतल सिंह बाजवा और अन्य** 797

सुखाचार अधिनियम, 1882 (1882 का 5)

– धारा 15 – प्रतिवादियों द्वारा सुखाचार का दावा करते हुए आवागमन के मार्ग का दावा – आवश्यकता के आधार पर सुखाचार का दावा – वादी यह साबित किए जाने के बाबत कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत कर

पृष्ठ संख्या

पाने में विफल रहे कि उन्होंने उपसेवी भूमि स्वामी की जानकारी में 20 वर्ष से अधिक की अवधि तक शांतिपूर्वक फुटपाथ का उपभोग किया – यदि वादी को अपनी संपत्ति में आवागमन के लिए आनुकल्पिक मार्ग उपलब्ध है, तो वह सुखाचार के अनुतोष के हकदार नहीं है ।

राधाबाई और एक अन्य बनाम **जी. भीमन** उर्फ **भीमा और अन्य** 821

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 7, नियम 11(घ) [माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 8] – वादपत्र का निरस्तीकरण – मकान मालिक द्वारा विधि के अंतर्गत अपनाई गई प्रक्रिया के सिवाय किराएदार को बेदखल किए जाने से निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ व्यादेश के लिए फाइल किए गए वाद को निचले न्यायालय द्वारा विधि द्वारा बाधित अभिनिर्धारित किया जाना – किराएदारी करार में समाविष्ट माध्यस्थम् खंड में ऐसे किसी खंड का समाविष्ट न होना, जिसके अंतर्गत सिविल वाद में अनुतोष की ईप्सा नहीं की जा सकती – वादपत्र अस्वीकृत किए जाने योग्य नहीं था ।

बांके बिहारी डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड (मैसर्स) बनाम **फैसन वर्ल्ड** 738

– आदेश 7, नियम 11(घ) [माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 8 और रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 17] – किराएदार द्वारा व्यादेश के लिए फाइल किए गए वाद के वादपत्र का निरस्तीकरण – मकान मालिक द्वारा यह दावा किया

पृष्ठ संख्या

जाना कि किराया करार में माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है, इसलिए वाद 1996 के अधिनियम की धारा 8 द्वारा बाधित है और चूंकि यह करार पट्टा करार है इसलिए इसका रजिस्ट्रीकरण आवश्यक था – चूंकि अरजिस्ट्रीकृत करार का कोई महत्व नहीं होता, अत: वादपत्र निरस्त किए जाने योग्य नहीं था ।

बांके बिहारी डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड (मैसर्स) बनाम **फैसन वर्ल्ड** 738

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

– धारा 13(1) (i-क) (i-ख) – पति द्वारा क्रूरता और परित्याग के आधार पर विवाह-विच्छेद की याचिका – पति द्वारा यह अभिकथित किया जाना कि पत्नी के अपने सहकर्मियों के साथ अवैध संबंध थे, वह उसके साथ शारीरिक संबंध बनाने से इनकार करती थी और विवाह पूर्व उपनाम का प्रयोग विवाह के पश्चात् भी करती रही – पति द्वारा विवाह-विच्छेद याचिका में किसी ऐसे व्यक्ति का उल्लेख न किया जाना जिसके साथ पत्नी के अवैध संबंध रहे हों – पत्नी द्वारा विवाह पूर्व उपनाम का प्रयोग गलत नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि वह कामकाजी महिला है – पति द्वारा क्रूरता और परित्याग का पक्षकथन साबित करने में असफल रहना और पत्नी को वैवाहिक घर वापस लाने का कोई प्रयास न किया जाना – विवाह-बंधन को पृथक्-पृथक् घटनाओं के आधार पर भंग नहीं किया जा सकता – विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान नहीं की जा सकती ।

सुष्मिता साहा मजूमदार बनाम **सुशांत साहा** 773

विजय पाल सिंह (मृतक) द्वारा विधिक प्रतिनिधि अजय पाल सिंह

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

(2020 की अपीली रिट याचिका संख्या 1831)

तारीख 3 मार्च, 2020

न्यायमूर्ति अजय भनोट

परिसीमा अधिनियम, 1963 (1963 का 36) – विलंब क्षमा किया जाना – असामान्य और सामान्य विलंब के मध्य विभेद – परिसीमा विधि का अधिदेश पक्षों के लिए न्याय के द्वार को बंद या गुणागुण पर न्यायनिर्णयन किए जाने से इनकार करना नहीं है – विधि न्यायालयों का यह निरंतर प्रयास होना चाहिए कि वे गुणागुण पर विवाद्यकों का न्यायनिर्णयन करें और सारभूत आधार पर न्याय का संवितरण करें ।

परिसीमा अधिनियम, 1963 – विलंब क्षमा किया जाना – असामान्य और सामान्य विलंब के मध्य विभेद – न्यायालयों को विलंब क्षमा से संबंधित मामलों में उदार, व्यावहारिक और न्यायोन्मुख दृष्टिकोण अपनाना चाहिए – न्यायालयों को ऐसे मामलों में रूढ़िवादी दृष्टिकोण से बचना चाहिए और प्रक्रिया के दासत्वभाव से परहेज करना चाहिए ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि याची के पिता स्वर्गीय विजय पाल सिंह ने 2001 की प्रथम अपील संख्या 395 में फाइल करते हुए विद्वान् निदेश न्यायालय द्वारा पारित आदेश को चुनौती दी थी । याची के पिता ने निदेश न्यायालय द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध इस न्यायालय के समक्ष प्रथम अपील फाइल की पैरवी कर रहे थे । प्रथम अपील इस न्यायालय द्वारा तारीख 9 अक्तूबर, 2014 के निर्णय और

आदेश द्वारा निर्णीत कर दी गई थी । इस न्यायालय द्वारा तारीख 9 अक्तूबर, 2014 के उक्त आदेश के अनुसार मामले को विद्वान् निदेश न्यायालय को प्रतिप्रेक्षित कर दिया गया था । याची के पिता की मृत्यु वर्ष 2012 में हो गई । प्रथम अपील का अभिलेख वर्ष 2017 में निदेश न्यायालय भेज दिया गया । याची ने 2017 के प्रकीर्ण वाद संख्या 557 में विद्वान् निदेश न्यायालय के समक्ष निदेश सुने जाने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया । तत्पश्चात् निदेश की सुनवाई आरंभ हो गई । याची मामले के अभिलेखों का अवलोकन तारीख 4 नवंबर, 2019 को विद्वान् निदेश न्यायालय के समक्ष कर सका । उस तारीख को याची को प्रथमत: ज्ञात हुआ कि उसके पिता की मृत्यु के पश्चात् उसकी तरफ से कोई प्रतिस्थापन आवेदन फाइल नहीं किया गया है । याची ने यह तथ्य ज्ञात होने के तुरंत पश्चात् मृतक पिता/विजय पाल सिंह के स्थान पर अपना नाम प्रतिस्थापित किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रतिस्थापन आवेदन फाइल किया । उक्त प्रतिस्थापन आवेदन के समर्थन में कारित विलंब क्षमा किए जाने के लिए परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अधीन आवेदन भी फाइल किया गया । विद्वान् निदेश न्यायालय ने विलंब क्षमा किए जाने के लिए फाइल किए गए आवेदन को अस्वीकृत करते हुए तारीख 13 दिसंबर, 2019 के आक्षेपित आदेश द्वारा निष्कर्ष अभिलिखित किए, कि याची के पिता की मृत्यु तारीख 29 सितंबर, 2012 को हुई थी । इस न्यायालय ने 2001 की प्रथम अपील संख्या 395 तारीख 9 अक्तूबर, 2014 को पारित आदेश द्वारा निर्णीत कर दी थी, याची ने अपने पिता की मृत्यु के सात वर्षों के पश्चात् प्रतिस्थापन आवेदन फाइल किया है, अत: यह असामान्य विलंब क्षमा किए जाने योग्य नहीं है । इस निर्णय से व्यथित होकर याची ने प्रस्तुत रिट याचिका फाइल की । याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – परिसीमा विधि का प्रयोजन यह सुनिश्चित करना है कि पक्ष अपने लक्ष्यों के प्रति सावधान रहें और अपने दावे समयसीमा के भीतर फाइल करें । परिसीमा विधि संयम के कानून होते हैं । वे प्राय: वादकारियों की उदासीनता के कारण कारित होने वाले असामान्य विलंब के मामलों में लागू होते हैं । परिसीमा विधि का अधिदेश पक्षों के लिए

न्याय के द्वार को बंद करना या गुणागुण पर न्यायनिर्णयन किए जाने से इनकार करना नहीं है । इसके विपरीत, विधि न्यायालयों का यह निरंतर प्रयास होना चाहिए कि वे गुणागुण पर विवाद्यकों का न्यायनिर्णयन करें और न्याय का संवितरण सारभूत आधार पर करें । ऐसे मामलों में उपयोगी यह होगी कि न्यायालयों को विलंब क्षमा किए जाने वाले मामलों में उदार, व्यावहारिक और न्यायोन्मुख दृष्टिकोण अपनाना चाहिए । इसी प्रकार से न्यायालयों को ऐसे मामलों में रूढ़िवादी दृष्टिकोण से बचना चाहिए और प्रक्रिया के दासत्वभाव से परहेज करना चाहिए । याची को, इसके पहले कि यह न्यायालय इस तथ्य की पुष्टि करता कि याची के पिता प्रथम अपील की पैरवी कर रहे थे, न कि यादी, उसको उसके पिता के स्थान पर प्रतिस्थापित नहीं किया गया था । याची के इस आचरण में कुछ भी असामान्य नहीं है । वास्तव में यह अत्यधिक नैसर्गिक तरीका है जिसमें इस देश में वादकारी पैरवी करते हैं । याची मृतक/विजय पाल सिंह का एक मात्र उत्तराधिकारी है, जिसकी भूमि अर्जित कर ली गई थी । याची को अपने पिता की तरफ से प्रतिकर के लिए दावे की पैरवी का अधिकार है और वह उनके स्थान पर प्रतिस्थापित किए जाने योग्य है । याची की तरफ से प्रतिस्थापन आवेदन प्रस्तुत करने में कोई असामान्य विलंब नहीं किया गया । याची युक्तिसंगत रूप से अपने मामले के प्रति सतर्क था, जो विलंब कारित हुआ वह तंत्र की कमियों के कारण कारित हुआ । इस विवाद में याची के सारभूत अधिकार अंतर्वलित हैं और तथ्यों को ध्यान में रखते हुए विलंब क्षमा किए जाने के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन को अस्वीकार किए जाने के परिणामस्वरूप उसको घोर अन्याय का सामना करना पड़ रहा है । (पैरा 6, 7, 17 और 18)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2001] 2001 (44) ए. एल. आर. 577 (एस. सी.) : **वेदा बाई** उर्फ **वैजयंता बाई बाबू राव पाटिल** बनाम **शांता राम बाबू राव पाटिल और अन्य** ; 13

[1998] (1998) 7 एस. सी. सी. 123 :
एन. बालाकृष्णन बनाम **एम. कृष्ण मूर्ति** ; 11

[1997] (1997) (सप्ली.) एस. सी. सी. 339 :
श्रीमती प्रभा बनाम **राम प्रकाश कालरा** ; 12

[1987] 1987 (13) ए. एल. आर. 306 (एस. सी.) :
कलक्टर, भूमि अर्जन बनाम **मास्टर काति जी और अन्य** ; 9

[1984] ए. आई. आर. 1984 एस. सी. 744 :
ओ. पी. कठपालिया बनाम **लखमीर सिंह** ; 16

[1976] ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 237 :
न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती शांति मिश्रा** ; 14

[1969] ए. आई. आर. 1969 एस. सी. 575 :
शकुंतला देवी जैन बनाम **कुंतल कुमारी** । 15

अपीली रिट अधिकारिता : 2020 की अपीली रिट याचिका संख्या 1831.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 227 के अधीन अपीली रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री अखिलेश त्रिपाठी

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री कृष्ण मोहन अस्थाना (मुख्य स्थायी काउंसेल) और प्रभाव श्रीवास्तव

आदेश

याची की ओर से उपस्थित विद्‌वान् काउंसेल श्री अखिलेश त्रिपाठी और प्रत्यर्थी राज्य की ओर से उपस्थित विद्‌वान् स्थायी काउंसेल श्री के. एम. अस्थाना, जिनकी सहायता प्रत्यर्थी संख्या 4 के विद्‌वान् काउंसेल श्री प्रभाव श्रीवास्तव द्‌वारा की गई, को सुना ।

2. याची के पिता स्वर्गीय विजय पाल सिंह ने 2001 की प्रथम अपील संख्या 395 (विजय पाल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और

अन्य) फाइल करते हुए विद्वान् निदेश न्यायालय द्वारा पारित आदेश को चुनौती दी थी याची के पिता ने निदेश न्यायालय द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध इस न्यायालय के समक्ष प्रथम अपील की पैरवी कर रहे थे । प्रथम अपील इस न्यायालय द्वारा तारीख 9 अक्तूबर, 2014 के निर्णय और आदेश द्वारा निर्णीत कर दी गई थी । इस न्यायालय द्वारा तारीख 9 अक्तूबर, 2014 के उक्त आदेश के अनुसार मामले को विद्वान् निदेश न्यायालय को प्रतिप्रेक्षित कर दिया गया था ।

3. याची के पिता की मृत्यु वर्ष 2012 में हो गई थी । प्रथम अपील का अभिलेख वर्ष 2017 में निदेश न्यायालय भेज दिया गया था । याची ने 2017 के प्रकीर्ण वाद संख्या 557 (विजय पाल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) में विद्वान् निदेश न्यायालय के समक्ष निदेश को सुने जाने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया । तत्पश्चात् निदेश की सुनवाई आरंभ हो गई । याची मामले के अभिलेखों का अवलोकन तारीख 4 नवंबर, 2019 को विद्वान् निदेश न्यायालय के समक्ष कर सका । उस तारीख को याची को ज्ञात हुआ कि उसके पिता की मृत्यु के पश्चात् उसकी तरफ से कोई प्रतिस्थापन आवेदन फाइल नहीं किया गया है । याची ने इस तथ्य के ज्ञात होने के तुरंत पश्चात् मृतक पिता/विजय पाल सिंह के स्थान पर अपना नाम प्रतिस्थापित किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रतिस्थापन आवेदन फाइल कर दिया । उक्त प्रतिस्थापन आवेदन के समर्थन में कारित विलंब को क्षमा किए जाने के लिए परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अधीन आवेदन भी फाइल किया गया ।

4. विद्वान् निदेश न्यायालय ने विलंब क्षमा किए जाने के लिए फाइल किए गए आवेदन को अस्वीकृत करते हुए तारीख 13 दिसंबर, 2019 के आक्षेपित आदेश द्वारा निष्कर्ष अभिलिखित किए, कि याची के पिता की मृत्यु तारीख 29 सितंबर, 2012 को हुई थी, इस न्यायालय ने 2001 की प्रथम अपील संख्या 395 (विजय पाल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य) को तारीख 9 अक्तूबर, 2014 को पारित आदेश द्वारा निर्णीत कर दिया, याची ने अपने पिता की मृत्यु के सात वर्षों के पश्चात् प्रतिस्थापन आवेदन फाइल किया है, यह असामान्य विलंब क्षमा किए जाने योग्य नहीं है ।

5. मुझे शंका है कि विद्वान् निदेश न्यायालय इस मामले में पूर्णतया रूढ़िवादी दृष्टिकोण अपनाते हुए, विधि की दृष्टि से भ्रम की स्थिति में था, जिसके कारण याची के अत्यंत सारभूत अधिकार प्रभावित हुए । विद्वान् निदेश न्यायालय ने इस तथ्य का अनदेखा किया कि विलंब स्वमेव न्याय विवरण प्रणाली में ही अंतर्वलित है । इस न्यायालय ने निर्णय पारित कर दिया था और मामले को निदेश न्यायालय को अत्यधिक पहले वर्ष 2014 में ही वापस भेज दिया था । मामले के अभिलेख को निदेश न्यायालय को इस न्यायालय द्वारा निर्णय पारित किए जाने के तीन वर्ष पश्चात् भेजा गया । विद्वान् निदेश न्यायालय के समक्ष कार्रवाई वर्ष 2017 में आरंभ हुई और वह भी याची द्वारा फाइल किए गए प्रकीर्ण आवेदन पर ।

6. परिसीमा विधि का प्रयोजन यह सुनिश्चित करना है कि पक्ष अपने लक्ष्यों के प्रति सावधान रहें और अपने दावे समयसीमा के भीतर फाइल करें । परिसीमा विधि संयम के कानून होते हैं । वे प्राय: वादकारियों की उदासीनता के कारण होने वाले असामान्य विलंब के मामलों में लागू होते हैं । परिसीमा विधि का अधिदेश पक्षों के लिए न्याय के द्वार को बंद करना या गुणागुण पर न्यायनिर्णयन किए जाने से इनकार करना नहीं है । इसके विपरीत, विधि न्यायालयों का यह निरंतर प्रयास होना चाहिए कि वे गुणागुण पर विवाद्यकों का न्यायनिर्णयन करें और न्याय का संवितरण सारभूत आधार पर करें ।

7. ऐसे मामले में उपयोगी निर्णयज विधि यह होगी कि न्यायालयों को विलंब क्षमा किए जाने योग्य मामलों में उदार, व्यावहारिक और न्यायोन्मुख दृष्टिकोण अपनाना चाहिए । इसी प्रकार से न्यायालयों को ऐसे मामलों में रूढ़िवादी दृष्टिकोण से बचना चाहिए और प्रक्रिया के दासत्वभाव से परहेज करना चाहिए ।

8. अब हम इस दृष्टिकोण को उपलब्ध निर्णयज विधियों द्वारा शक्ति प्रदान करेंगे ।

9. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **कलक्टर, भूमि अर्जन** बनाम

मास्टर काति जी और अन्य[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है :-

> "विधान-मंडल ने 'गुणागुण' पर मामलों का निस्तारण किए जाने के द्वारा पक्षों को सारभूत न्याय प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ न्यायालयों को समर्थ बनाने के लिए 1963 के परिसीमा अधिनियम की धारा 5 अधिनियमित करते हुए विलंब क्षमा किए जाने की शक्ति प्रदान की है । विधान-मंडल द्वारा योजित अभिव्यक्ति 'पर्याप्त कारण' विधि को अर्थपूर्ण रीति में लागू किए जाने के प्रयोजनार्थ न्यायालयों को सशक्त बनाने के लिए पर्याप्त रूप से लचीलापन प्रदान करती है, जिससे न्याय के उद्देश्यों की पूर्ति होती है और यही न्यायालय के स्थापन की विद्यमान्यता का उद्देश्य है । यह सामान्य ज्ञान की बात है कि इस न्यायालय ने अपने समक्ष संस्थित किए गए मामलों में न्यायसंगत रूप से उदार दृष्टिकोण अपनाया है । किंतु ऐसा प्रतीत होता है कि यह संदेश समस्त अन्य न्यायालयों में पदानुक्रम में नहीं पहुंचा है ।"

10. ऐसे उदार दृष्टिकोण को सिद्धांतों के आधार पर अंगीकृत किया जाता है । चूंकि यह महसूस किया गया है कि :-

> "(1) सामान्यतया, किसी मुकदमेबाज को विलंब के साथ अपील दर्ज कराने से कोई लाभ नहीं होता ।
>
> (2) विलंब क्षमा किए जाने से इनकार किए जाने का परिणाम यह हो सकता है कि किसी योग्य मामले को आरंभिक प्रक्रम पर ही सुनवाई से बाहर कर दिया जाए और न्याय के उद्देश्य को विफल कर दिया जाए । इसके विपरीत विलंब को क्षमा कर दिए जाने से अधिक से अधिक यह होगा कि मामला पक्षों को सुने जाने के पश्चात् गुणागुण पर निर्णीत होगा ।
>
> (3) 'प्रत्येक' दिवस के विलंब का स्पष्टीकरण दिया जाना चाहिए, का यह अर्थ नहीं है कि रूढ़िवादी दृष्टिकोण अपनाया जाना

---

[1] 1987 (13) ए. एल. आर. 306 (एस. सी.).

चाहिए । इसका अर्थ तो यह होगा कि क्यों न प्रत्येक घंटे के विलंब और प्रत्येक सेकेंड के विलंब का स्पष्टीकरण दिया जाना चाहिए ? इस सिद्धांत को किसी युक्तिसंगत सामान्यबोध और व्यावहारिक तरीके में लागू किया जाना चाहिए ।

(4) जब सारभूत न्याय और तकनीकी तर्कों को एक दूसरे के विरुद्ध खड़ा किया जाता है, तो सारभूत न्याय के उद्देश्य को प्राथमिकता दिया जाना अपेक्षित होता है और इसमें अन्य पक्ष यह दावा नहीं कर सकता कि उसका उस अन्याय में कोई निहित अधिकार है, जो जानबूझकर न किए गए विलंब के कारणवश हुआ है ।

(5) इस बाबत कोई उपधारणा नहीं है कि विलंब जानबूझकर किया जाता है या वह सदोष उपेक्षा के कारण कारित हुआ है या असद्भावपूर्वक किया गया है । किसी भी मुकदमेबाज को विलंब द्वारा लाभ नहीं हो सकता । वास्तव में ऐसा करके वह गंभीर जोखिम का सामना करता है ।

(6) यहां पर इस बात का उल्लेख किया जाना चाहिए कि न्यायपालिका का आदर तकनीकी आधारों पर अन्याय को वैधता प्रदान करने की शक्ति के प्रयोग के कारण नहीं है बल्कि इस कारणवश है कि वह अन्याय को समाप्त करने में समर्थ है और उससे ऐसा ही किए जाने की प्रत्याक्षा की जाती है ।"

11. माननीय उच्चतम द्वारा **एन. बालाकृष्णन** बनाम **एम. कृष्ण मूर्ति**[1] वाले मामले में समान विचार व्यक्त किए गए । इस निर्णय के सुसंगत भाग को नीचे प्रत्युत्पादित किया गया है :-

"न्यायालय का प्राथमिक कार्य पक्षों के मध्य विवाद का न्यायनिर्णयन करना और सारभूत न्याय प्रदान करना है । विभिन्न स्थितियों में न्यायालय की शरण में जाने की परिसीमा निर्धारित है, किंतु ऐसा इस कारणवश नहीं है कि उस परिसीमा के व्यतीत हो

[1] (1998) 7 एस. सी. सी. 123.

जाने के पश्चात् दूषित कारण उत्तम कारण में परिवर्तित हो जाएगा । परिसीमा के नियम पक्षों के अधिकारों को नष्ट करने के लिए आशयित नहीं है । वे इस बाबत आशयित हैं कि पक्ष विलंबकारी तरीकों का आश्रय नहीं लेते, बल्कि वे शीघ्रातिशीघ्र अनुतोष की ईप्सा करते हैं । विधिक अनुतोष के लिए उपबंधित किए जाने का उद्देश्य उस नुकसान की भरपाई करना है, जो विधिक क्षति के कारण कारित हुआ है । परिसीमा विधि इस प्रकार से बर्दाश्त की गई विधिक क्षति की निस्तारण के लिए विधिक अनुतोष की परिसीमा निर्धारित करती है । समय मूल्यवान होता है और व्यर्थ किया गया समय लौटकर नहीं आता । समय व्यतीत होने के साथ-साथ नए कारण सृजित हो जाते हैं जिस कारणवश नए पक्ष न्यायालय की शरण लेते हुए विधिक अनुतोषों की ईप्सा करने लगते हैं । अत: प्रत्येक अनुतोष के लिए परिसीमा निर्धारित की जानी चाहिए । अनुतोष के लिए असीमित अवधि का परिणाम कभी न समाप्त होने वाली अनिश्चितता और उसके परिणामस्वरूप अराजकता होगा । अत: परिसीमा की अवधि लोक नीति पर आधारित है ।"

12. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **श्रीमती प्रभा** बनाम **राम प्रकाश कालरा**[1] वाले मामले में मत व्यक्त किया कि न्यायालय को विलंब को क्षमा किए जाने के लिए फाइल किए गए आवेदन को अस्वीकृत करते हुए अन्यायोन्मुख दृष्टिकोण नहीं अपनाना चाहिए ।

13. उच्चतम न्यायालय ने **वेदा बाई** उर्फ **वैजयंता बाई बाबू राव पाटिल** बनाम **शांता राम बाबू राव पाटिल और अन्य**[2] वाले मामले में विलंब और असामान्य विलंब के मध्य अंतर पर यह अभिनिर्धारित करते हुए विचार किया :-

"न्यायालयों को परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अधीन विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए । किसी ऐसे मामले में, जिसमें विलंब असामान्य है और

---

[1] (1997) (सप्ली.) एस. सी. सी. 339.

[2] 2001 (44) ए. एल. आर. 577 (एस. सी.).

किसी ऐसे मामले में, जिसमें विलंब कुछ दिनों का है, के मध्य विभेद किया जाना चाहिए । पहले वाले मामले में अन्यथा रूप से प्रतिकूल प्रभाव पर विचार सुसंगत कारक होगा, अत: इस मामले में अधिक सावधानीपूर्ण दृष्टिकोण अपेक्षित होगा .... "

14. न्यायालय के वैवेकिक अधिकार के महत्व पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **श्रीमती शांति मिश्रा**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित करते हुए बल दिया गया है कि धारा 5 द्वारा प्रदत्त वैवेकिक अधिकार को इस प्रकार से परिभाषित या स्पष्ट नहीं किया जाना चाहिए, जिससे किसी वैवेकिक अधिकार को विधि के अनमनीय नियम में परिवर्तित किया जा सके । अभिव्यक्ति 'पर्याप्त कारण' का उदार अर्थान्वयन किया जाना चाहिए ।

15. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **शकुंतला देवी जैन** बनाम **कुंतल कुमारी**[2] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया है कि जब तक कि किसी ऐसी निष्क्रियता या उपेक्षा के सद्भाविक कारणों की कमी, जो किसी पक्ष को धारा 5 के संरक्षण से वंचित कर देगी, साबित नहीं हो जाती, आवेदन पर विचार किए जाने या विलंब को क्षमा किए जाने से इनकार नहीं किया जाना चाहिए ।

16. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **ओ. पी. कठपालिया** बनाम **लखमीर सिंह**[3] वाले मामले में विलंब को क्षमा किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत किए गए आवेदन पर न्यायोन्मुख दृष्टिकोण अपनाते हुए अभिनिर्धारित किया कि यदि विलंब को क्षमा किए जाने से इनकार किए जाने का परिणाम घोर अन्याय होता है, तो यह विलंब और क्षमा किए जाने का आधार होगा ।

17. याची को इसके पहले कि यह न्यायालय इस तथ्य की पुष्टि करता कि याची के पिता प्रथम अपील की पैरवी कर रहे थे, न कि याची उसको उसके पिता के स्थान पर प्रतिस्थापित नहीं किया गया था ।

---

[1] ए. आई. आर. 1976 एस. सी. 237.

[2] ए. आई. आर. 1969 एस. सी. 575.

[3] ए. आई. आर. 1984 एस. सी. 744.

18. याची मृतक/विजय पाल सिंह का एक मात्र उत्तराधिकारी है जिसकी भूमि अर्जित कर ली गई । याची को अपने पिता की तरफ से प्रतिकर के लिए दावे की पैरवी का अधिकार है और वह प्रतिस्थापित किए जाने योग्य है । याची की तरफ से प्रतिस्थापन आवेदन प्रस्तुत करने में कोई असामान्य विलंब नहीं किया गया । याची युक्तिसंगत रूप से अपने मामले के प्रति सतर्क था, जो विलंब कारित हुआ वह तंत्र की कमियों के कारण कारित हुआ । इस विवाद में याची के सारभूत अधिकार अंतर्वलित हैं और तथ्यों को ध्यान में रखते हुए विलंब क्षमा किए जाने के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन को अस्वीकार किए जाने के परिणामस्वरूप उसको घोर अन्याय का सामना करना पड़ रहा है ।

19. निर्णय के पूर्ववर्ती भाग में उद्धृत निर्णयज विधियां इस मामले के तथ्यों पर प्रत्यक्षत: लागू होती हैं ।

20. विलंब क्षमा करने के लिए प्रस्तुत किया गया आवेदन मंजूर किए जाने योग्य है । अत: विलंब क्षमा करने के लिए प्रस्तुत किया गया आवेदन मंजूर किया जाता है ।

21. मुरादाबाद के विद्वान् निदेश न्यायालय/विद्वान् अपर जिला न्यायालय द्वारा तारीख 13 दिसंबर, 2019 को पारित आदेश अपास्त किया जाता है ।

22. मामले को मुरादाबाद के विद्वान् निदेश न्यायालय/विद्वान् अपर जिला न्यायालय को निम्नलिखित निर्देश को निष्पादित किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रतिप्रेक्षित किया जाता है :

23. मुरादाबाद के विद्वान् निदेश न्यायालय/विद्वान् अपर जिला न्यायालय इस आदेश की प्रमाणित प्रति की प्राप्ति पर अविलंब प्रतिस्थापन आवेदन को निर्णीत करें ।

24. याचिका मंजूर की जाती है ।

याचिका मंजूर की गई ।

शु.

बांके बिहारी डेवलपर प्राइवेट लिमिटेड (मैसर्स)

बनाम

फैसन वर्ल्ड

(2020 का सिविल पुनरीक्षण याचिका संख्या 2)

तारीख 9 जून, 2020

न्यायमूर्ति अंजनी कुमार मिश्रा

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 7, नियम 11(घ) [माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 8] – वादपत्र का निरस्तीकरण – मकान मालिक द्वारा विधि के अंतर्गत अपनाई गई प्रक्रिया के सिवाय किराएदार को बेदखल किए जाने से निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ व्यादेश के लिए फाइल किए गए वाद को निचले न्यायालय द्वारा विधि द्वारा बाधित अभिनिर्धारित किया जाना – किराएदारी करार में समाविष्ट माध्यस्थम् खंड में ऐसे किसी खंड का समाविष्ट न होना, जिसके अंतर्गत सिविल वाद में अनुतोष की ईप्सा नहीं की जा सकती – वादपत्र अस्वीकृत किए जाने योग्य नहीं था ।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 – आदेश 7, नियम 11(घ) [माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 8 और रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 17] – किराएदार द्वारा व्यादेश के लिए फाइल किए गए वाद के वादपत्र का निरस्तीकरण – मकान मालिक द्वारा यह दावा किया जाना कि किराया करार में माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है, इसलिए वाद 1996 के अधिनियम की धारा 8 द्वारा बाधित है और चूंकि यह करार पट्टा करार है इसलिए इसका रजिस्ट्रीकरण आवश्यक था – चूंकि अरजिस्ट्रीकृत करार का कोई महत्व नहीं होता, अत: वादपत्र निरस्त किए जाने योग्य नहीं था ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि प्रस्तुत पुनरीक्षण 2019 के वाद संख्या 509 में गोरखपुर के सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ खंड) द्वारा तारीख 9 अक्तूबर, 2019 को पारित आदेश के विरुद्ध निदेशित है जिसके

द्वारा याची/पुनरीक्षणकर्ता द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 11 सपठित 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 8 के अधीन फाइल किए गए आवेदन संख्या 12-ग को अस्वीकृत कर दिया गया । 2019 का वाद संख्या 509 में विपक्षी/वादी द्वारा प्रतिवादी को विधि के अंतर्गत अपनाई गई प्रक्रिया के सिवाय बेदखल करने से निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ व्यादेश की ईप्सा करते हुए फाइल किया गया था । न्यायालय ने पक्षों को सुनने के पश्चात् सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को इस आधार पर खारिज कर दिया कि करार/सहमति-पत्र रजिस्ट्रीकृत दस्तावेज नहीं था । चूंकि यह दस्तावेज पट्टा करार था इसलिए इसका रजिस्ट्रीकृत होना आवश्यक था । आवेदन को अस्वीकृत किए जाने के लिए द्वितीयक आधार यह लिया गया कि वाद में जिस अनुतोष का दावा किया गया अर्थात् यह अनुतोष कि वादी को उसके कब्जे वाले आवासन से बेदखल या निष्काषित नहीं किया जाएगा, सिवाय विधि अनुसार उपलब्ध प्रक्रिया के, कुछ और नहीं बल्कि यह उस करार का भाग था जिसमें माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है । इसलिए, वाद में जिस अनुतोष के लिए दावा किया गया है, वह पक्षों के मध्य माध्यस्थम् करार के परे था । पुनरीक्षण याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – मैंने पक्षों के मध्य निष्पादित सहमति-पत्र, जो अभिकथित रूप से निष्पादित किए गए किराएदारी के करार, जिसमें माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है, का सतर्कतापूर्वक परिशीलन किया । निचले न्यायालय में फाइल किया गया वाद व्यादेश के लिए फाइल किया गया वाद है, जिसमें प्रतिवादी को वादी को उसके कब्जे वाले आवासन से, विधि के अनुसार उपलब्ध प्रक्रिया के सिवाय, बेदखल किए जाने से निषिद्ध किए जाने की ईप्सा की गई है । अभिकथित माध्यस्थम् करार में ऐसा कोई खंड समाविष्ट नहीं है, जो वाद में याचित अनुतोष से संबंधित हो । इसलिए, निचले न्यायालय द्वारा स्पष्ट किया गया कारण कि वाद में याचित अनुतोष माध्यस्थम् करार की परिधि के परे था, पूर्णत: न्यायसंगत है । सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन आवेदन को अस्वीकृत किए जाने के प्रयोजनार्थ स्पष्ट किया

गया द्वितीय कारण यह है कि किराया करार/सहमति-पत्र का रजिस्ट्रीकरण अपेक्षित था, इसके पहले कि उसका अवलंब लिया जाता, किंतु यह रजिस्ट्रीकृत करार नहीं था । यद्यपि पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई कि इस पहलू पर विचार किया जाना अपेक्षित नहीं है, फिर भी मैं गरवारे वाल रिपोर्ट लिमिटेड बनाम कोस्टल मरीन कंस्ट्रक्शन एंड इंजीनियरिंग लिमिटेड वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को दृष्टि में रखते हुए इस दलील से सहमत नहीं हूं, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11(6)-क को पुर:स्थापित किए जाने के बावजूद कोई दस्तावेज जिसका रजिस्ट्रीकरण अनिवार्य है और जिसमें माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है, का परीक्षण किए जाने की आवश्यकता इस बात पर विचार किए जाने के प्रयोजनार्थ है कि यदि उस दस्तावेज पर सम्यक् रूप से स्टाम्प की अदायगी की गई है या नहीं और इस प्रकार की जांच का केवल आशय इस जांच से संबंधित होता है कि क्या माध्यस्थम् करार विधि की दृष्टि में विद्यमान है और वह विधि की दृष्टि में विद्यमान नहीं होगा जब तक कि उस पर सम्यक् रूप से स्टाम्प की अदायगी नहीं कर दी जाती और उसका रजिस्ट्रीकरण नहीं कराया जाता, यदि ऐसा किया जाना विधि के अंतर्गत अपेक्षित है । (पैरा 12, 13 और 14)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) 9 एस. सी. सी. 209 = ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 2053 : **गरवारे वाल रिपोर्ट लिमिटेड** बनाम **कोस्टल मरीन कंस्ट्रक्शन एंड इंजीनियरिंग लिमिटेड** ;	14
[2019]	(2019) 8 एस. सी. सी. 714 = ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 4284 : **मायावती ट्रेडिंग प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **प्रद्युतदेव वर्मन** ।	9

पुनरीक्षण (सिविल) अधिकारिता : 2020 का सिविल पुनरीक्षण याचिका संख्या 2.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115 के अधीन सिविल पुनरीक्षण ।

याची की ओर से	सर्वश्री कमलेश कुमार मिश्रा, नरेन्द्र कुमार चतुर्वेदी और मनीष कुमार निगम
प्रत्यर्थी की ओर से	श्री तरुण वर्मा

आदेश

याची/पुनरीक्षणकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल श्री मनीष कुमार निगम और विपक्षी की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल श्री तरुण वर्मा को सुना ।

2. प्रस्तुत पुनरीक्षण 2019 के वाद संख्या 509 में गोरखपुर के सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ खंड) द्वारा तारीख 9 अक्तूबर, 2019 को पारित आदेश के विरुद्ध निदेशित है जिसके द्वारा याची/पुनरीक्षणकर्ता द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 11 सपठित 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 8 के अधीन फाइल किया गया आवेदन संख्या 12-ग अस्वीकृत कर दिया गया है ।

3. 2019 का वाद संख्या 509 विपक्षी/वादी द्वारा प्रतिवादी को बेदखल करने से विधि के अंतर्गत अपनाई गई प्रक्रिया के सिवाय पुनरीक्षणकर्ता/प्रतिवादी को निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ व्यादेश की ईप्सा करते हुए फाइल किया गया था ।

4. सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल किए गए आवेदन में पुनरीक्षणकर्ता ने दावा किया है कि पक्षों के मध्य निष्पादित तारीख 6 फरवरी, 2017 के करार में माध्यस्थम् खंड समाविष्ट था । इसलिए वाद 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 8 द्वारा बाधित था ।

5. वादी ने यह अभिकथित करते हुए आक्षेप फाइल किए कि चूंकि मामला मकान मालिक और किराएदार से संबंधित है, इसलिए पक्षों के

मध्य निष्पादित करार में माध्यस्थम् खंड की विद्यमान्यता के बावजूद सिविल न्यायालय को मामले में अधिकारिता प्राप्त होगी ।

6. वादी द्वारा यह अभिवाक् भी किया गया कि पुनरीक्षणकर्ता/ प्रतिवादी ने करार/सहमति-पत्र के खंड 21, जिसमें माध्यस्थम् के अनुध्यापन का विद्यमान होना अभिकथित है, से इनकार कर दिया था । इसलिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल किया गया आवेदन पोषणीय नहीं है ।

7. न्यायालय ने पक्षों को सुनने के पश्चात् सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को इस आधार पर खारिज कर दिया कि करार/सहमति-पत्र रजिस्ट्रीकृत दस्तावेज नहीं था । चूंकि यह दस्तावेज पट्टा करार था इसलिए इसका रजिस्ट्रीकृत होना आवश्यक रूप से अपेक्षित था ।

8. आवेदन को अस्वीकृत किए जाने के लिए द्वितीयक आधार यह लिया गया कि वाद में जिस अनुतोष का दावा किया गया है अर्थात् यह अनुतोष कि वादी को उसके कब्जे वाले आवासन से बेदखल या निष्काषित नहीं किया जाएगा, सिवाय विधि अनुसार उपलब्ध प्रक्रिया के, कुछ और नहीं बल्कि यह उस करार का भाग है जिसमें माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है । इसलिए, वाद में जिस अनुतोष के लिए दावा किया गया, वह पक्षों के मध्य माध्यस्थम् करार के परे है ।

9. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान् काउंसेल की दलील यह है कि माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **मायावती ट्रेडिंग प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **प्रद्युतदेव वर्मन**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि कोई माध्यस्थम् करार विद्यमान होता है, तो न्यायालय द्वारा 1996 के माध्यस्थम् और सुलह खंड में तारीख 23 अक्तूबर, 2015 को हुए संशोधन के पश्चात् मात्र यह विचार किया जाना अपेक्षित है कि क्या पक्षों के मध्य करार में माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है और उसके परे कुछ भी नहीं । इसलिए सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन फाइल

[1] (2019) 8 एस. सी. सी. 714 = ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 4284.

किए गए आवेदन को दोषपूर्ण ढंग से अस्वीकृत किया गया है । निचले न्यायालय ने आवेदन को अस्वीकृत करते हुए इस पहलू पर विचार किया जिस पर इस कार्यवाही में विचार किया जाना कतई अपेक्षित नहीं है ।

10. विपक्षी के विद्वान् काउंसेल ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया ।

11. मैंने पक्षों के विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए निवेदनों पर विचार किया और अभिलेख का परिशीलन किया ।

12. मैंने पक्षों के मध्य निष्पादित सहमति-पत्र, जो अभिकथित रूप से निष्पादित किए गए किराएदारी करार, जिसमें माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है, का सतर्कतापूर्वक परिशीलन किया । निचले न्यायालय में फाइल किया गया वाद व्यादेश के लिए फाइल किया गया वाद है, जिसमें प्रतिवादी को वादी को उसके कब्जे वाले आवासन से, विधि के अनुसार उपलब्ध प्रक्रिया के सिवाय, बेदखल किए जाने से निषिद्ध किए जाने की ईप्सा की गई है । अभिकथित माध्यस्थम् करार में ऐसा कोई खंड समाविष्ट नहीं है, जो वाद में याचित अनुतोष से संबंधित हो । इसलिए, निचले न्यायालय द्वारा स्पष्ट किया गया कारण कि वाद में याचित अनुतोष माध्यस्थम् करार की परिधि के परे था, पूर्णत: न्यायसंगत है ।

13. सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 11 के अधीन आवेदन को अस्वीकृत किए जाने के प्रयोजनार्थ स्पष्ट किया गया द्वितीय कारण यह है कि किराया करार/सहमति-पत्र का रजिस्ट्रीकरण अपेक्षित था, इसके पहले कि उसका अवलंब लिया जाता, किंतु यह रजिस्ट्रीकृत करार नहीं था ।

14. यद्यपि पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई कि इस पहलू पर विचार किया जाना अपेक्षित नहीं है, फिर भी मैं **गरवारे वाल रिपोर्ट लिमिटेड** बनाम **कोस्टल मरीन कंस्ट्रक्शन एंड इंजीनियरिंग लिमिटेड**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को दृष्टि में रखते हुए इस दलील से सहमत नहीं

[1] (2019) 9 एस. सी. सी. 209 = ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 2053.

हूं, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11(6)-क को पुर:स्थापित किए जाने के बावजूद कोई दस्तावेज जिसका रजिस्ट्रीकरण अनिवार्य है और जिसमें माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है, का परीक्षण किए जाने की आवश्यकता इस बात पर विचार किए जाने के प्रयोजनार्थ है कि यदि उस दस्तावेज पर सम्यक् रूप से स्टाम्प की अदायगी की गई है या नहीं और इस प्रकार की जांच का केवल आशय इस जांच से संबंधित होता है कि क्या माध्यस्थम् करार विधि की दृष्टि में विद्यमान है और वह विधि की दृष्टि में विद्यमान नहीं होगा जब तक कि उस पर सम्यक् रूप से स्टाम्प की अदायगी नहीं कर दी जाती और उसका रजिस्ट्रीकरण नहीं कराया जाता, यदि ऐसा किया जाना विधि के अंतर्गत अपेक्षित है ।

15. मैं पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए आक्षेपित आदेश, जो किसी भी अधिकारिता संबंधित त्रुटि से ग्रसित नहीं है और जिसमें मध्यक्षेप अपेक्षित नहीं है, में कोई अवैधता नहीं पाता ।

16. पुनरीक्षण, तद्नुसार, खारिज किया जाता है ।

पुनरीक्षण याचिका खारिज की गई ।

शु.

(2020) 1 सि. नि. प. 744 **इलाहाबाद**

सर्राफ राज मोहम्मद

बनाम

अध्यक्ष, नगरपालिका परिषद् और एक अन्य

(2020 का माध्यस्थम् और सुलह आवेदन संख्या 29)

तारीख 11 जून, 2020

न्यायमूर्ति मनोज कुमार गुप्ता

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26) – धारा 11 – मध्यस्थ की नियुक्ति – कार्य आदेश में माध्यस्थम् खंड का

समाविष्ट न होना – 1996 की अधिनियम की धारा 11 मात्र उस प्रक्रिया को अधिकथित करती है, जिसके द्वारा माध्यस्थम् अधिकरण का गठन किया जाता है और इस धारा का अवलंब लिए जाने के लिए कार्य-आदेश में माध्यस्थम् खंड की विद्यमानता अनिवार्य है – माध्यस्थम् खंड की अनुपस्थिति में न्यायालय किसी भी पक्ष को विवाद का निपटारा माध्यस्थम् द्वारा करने के लिए विवश नहीं कर सकता, जब तक कि दोनों पक्ष स्वैच्छिक रूप से सहमत न हों ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि इस मामले में 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11 के अधीन आवेदन प्रस्तुत करते हुए मध्यस्थ की नियुक्ति किए जाने की ईप्सा की गई है । किंतु पक्षों के मध्य निष्पादित कार्य आदेश में कोई भी माध्यस्थम् खंड समाविष्ट नहीं है । अत:, 1996 की अधिनियम की धारा 11 की उपधारा (3) का अवलंब लेते हुए माध्यस्थम् के द्वारा मामले का निपटारा कराए जाने की ईप्सा की गई है । आवेदन खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – मेरी सुविचारित राय में इस न्यायालय को किसी भी माध्यस्थम् करार की अनुपस्थिति में ऐसी कोई शक्ति प्राप्त नहीं है जिसका प्रयोग करते हुए किसी भी पक्ष को माध्यस्थम् के माध्यम से विवाद का निपटारा करने के लिए विवश किया जा सके, जब तक कि दोनों पक्ष स्वैच्छिक रूप से इसके लिए सहमत न हो जाएं । धारा 11 की उपधाराएं (2), (3), (4), (5) और (6) सुसंगत हैं । उक्त उपबंधों के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि अधिनियम की धारा 11 मात्र उस प्रक्रिया से संबंधित है जिसका अनुसरण किसी पक्ष द्वारा माध्यस्थम् अधिकरण के गठन के प्रयोजनार्थ किया जाता है । किंतु इस धारा में कहीं पर भी यह विहित नहीं किया गया है कि जहां पक्षों के मध्य कोई माध्यस्थम् करार न हो, फिर भी कोई पक्ष मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए न्यायालय की शरण में जा सकेगा । माध्यस्थम् करार की विद्यमान्यता अधिनियम की धारा 11 का अवलंब लिए जाने के प्रयोजनार्थ अनिवार्य है । (पैरा 3, 5 और 6)

आरंभिक माध्यस्थम् अधिकारिता : 2020 का माध्यस्थम् और सुलह आवेदन संख्या 29.

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11(4) के अधीन आवेदन ।

याची की ओर से श्री गुलाब चंद

प्रत्यर्थी की ओर से –

आदेश

मेरे समक्ष उपस्थित आवेदन 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कह कर निर्दिष्ट किया गया है) की धारा 11 के अधीन इस न्यायालय के मध्यक्षेप द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति की ईप्सा करते हुए फाइल की गई है ।

2. जब आवेदक के विद्वान् काउंसेल से पक्षों के मध्य माध्यस्थम् करार दर्शित करने के लिए कहा गया, तो उन्होंने निवेदन किया कि ऐसा कोई भी करार विद्यमान नहीं है । उन्होंने आगे निवेदन किया कि चूंकि कार्य-आदेश, जिसके संबंध में माध्यस्थम् की ईप्सा की गई है, में कोई माध्यस्थम् खंड नहीं है, इसलिए उन्होंने धारा 11 की उपधारा (3) का अवलंब लिया गया है ।

3. आवेदक की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल द्वारा किया गया निवेदन पूर्णतया भ्रामक है । मेरी सुविचारित राय में इस न्यायालय को किसी भी माध्यस्थम् करार की अनुपस्थिति में ऐसी कोई शक्ति प्राप्त नहीं है जिसका प्रयोग करते हुए किसी भी पक्ष को माध्यस्थम् के माध्यम से विवाद का निपटारा करने के लिए विवश किया जा सके, जब तक कि दोनों पक्ष स्वैच्छिक रूप से इसके लिए सहमत न हो जाएं । धारा 11 की उपधाराएं (2), (3), (4), (5) और (6) सुसंगत हैं और उनको नीचे प्रत्युत्पादित किया गया है :-

> "(2) उपधारा (6) के अधीन रहते हुए पक्षकार मध्यस्थ या मध्यस्थों को नियुक्त करने के लिए किसी प्रक्रिया पर करार करने के लिए स्वतंत्र हैं ।
>
> (3) उपधारा (2) में निर्दिष्ट किसी करार के न होने पर तीन मध्यस्थों वाले किसी माध्यस्थम् में प्रत्येक पक्षकार एक मध्यस्थ

नियुक्त करेगा और दो नियुक्त मध्यस्थ ऐसे तीसरे मध्यस्थ को नियुक्त करेंगे, जो पीठासीन मध्यस्थ के रूप में कार्य करेगा ।

(4) यदि उपधारा (3) की नियुक्ति की प्रक्रिया लागू होती है और –

(क) कोई पक्षकार किसी मध्यस्थ को नियुक्त करने में दूसरे पक्षकार से ऐसा करने के किसी अनुरोध की प्राप्ति से तीस दिन के भीतर असफल रहता है, या

(ख) दो नियुक्त मध्यस्थ अपनी नियुक्ति की तारीख से तीन दिन के भीतर तीसरे मध्यस्थ पर सहमत होने में असफल रहते हैं,

तो नियुक्ति किसी पक्षकार द्वारा प्रस्तुत किए गए आवेदन पर अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा पदाभिहित माध्यस्थम् संस्था द्वारा या अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के अलावा माध्यस्थमों के मामले में उच्च न्यायालय द्वारा की जाएगी, जैसा भी मामला हो ।

(5) उपधारा (2) में निर्दिष्ट किसी करार के न होने पर एकमात्र मध्यस्थ वाले किसी माध्यस्थम् में यदि पक्षकार किसी मध्यस्थ पर एक पक्षकार द्वारा दूसरे पक्षकार से किए गए किसी अनुरोध की प्राप्ति से तीस दिन के भीतर इस प्रकार सहमत होने में असफल रहते हैं, तो नियुक्ति किसी पक्षकार के आवेदन पर उपधारा (4) में समाविष्ट उपबंधों के अनुसार की जाएगी ।

(6) जहां पक्षकारों द्वारा करार पाई गई किसी नियुक्ति की प्रक्रिया के अधीन –

(क) कोई पक्षकार उस प्रक्रिया के अधीन अपेक्षित रूप से कार्य करने में असफल रहता है, या

(ख) पक्षकार अथवा दो नियुक्त मध्यस्थ उस प्रक्रिया के अधीन उनसे अपेक्षित किसी करार पर पहुंचने में असफल रहते हैं, या

(ग) कोई व्यक्ति, जिसके अंतर्गत कोई संस्था है, उस प्रक्रिया के अधीन उसे सौंपे गए किसी कृत्य का निष्पादन करने में असफल रहता है,

तो नियुक्ति किसी पक्षकार द्वारा प्रस्तुत किए गए आवेदन पर अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा पदाभिहित माध्यस्थम् संस्था द्वारा या अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के अलावा माध्यस्थमों के मामले में उच्च न्यायालय द्वारा की जाएगी, जैसा भी मामला हो ; जब तक कि नियुक्ति प्रक्रिया के किसी करार में नियुक्ति सुनिश्चित कराने के अन्य साधनों के लिए उपबंधित न किया गया हो, आवश्यक उपाय करने के लिए अनुरोध कर सकता है ।"

4. अधिनियम की धारा 11 अध्याय 3 के अंतर्गत आती है, जो माध्यस्थम् अधिकरण के गठन के तरीके के बारे में विहित करती है । उपधारा (2) विहित करती है कि पक्षकार मध्यस्थ या मध्यस्थों को नियुक्त करने के लिए किसी प्रक्रिया पर करार करने के लिए स्वतंत्र हैं । उपधारा (3) अभिकथित करती है कि उपधारा (2) में निर्दिष्ट किसी करार की अनुपस्थिति में अर्थात् जहां मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए करार में कोई प्रक्रिया अनुध्यात नहीं है, वहां पर तीन मध्यस्थों द्वारा माध्यस्थम् संचालित किया जाएगा, प्रत्येक पक्षकार एक मध्यस्थ नियुक्त करेगा और दो नियुक्त मध्यस्थ ऐसे तीसरे मध्यस्थ की नियुक्ति करेंगे, जो पीठासीन मध्यस्थ के रूप में कार्य करेगा । आगे उपधारा (4) उपबंधित करती है कि ऐसे मामलों में, जहां उपधारा (3) में उपबंधित नियुक्ति प्रक्रिया लागू होती है और कोई पक्षकार किसी मध्यस्थ को नियुक्त करने में दूसरे पक्षकार से ऐसा करने के किसी अनुरोध की प्राप्ति से तीस दिनों के भीतर असफल रहता है या दो नियुक्त मध्यस्थ अपनी नियुक्ति की तारीख से तीस दिन के भीतर तीसरे मध्यस्थ पर सहमत होने में असफल रहते हैं, तो नियुक्ति किसी पक्षकार द्वारा प्रस्तुत किए गए आवेदन पर अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा पदाभिहित

माध्यस्थम् संस्था द्वारा या अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के अलावा माध्यस्थमों के मामले में उच्च न्यायालय द्वारा की जाएगी, जैसा भी मामला हो । आगे उपधारा (5) स्पष्ट करती है कि उपधारा (2) में निर्दिष्ट किसी करार के न होने पर एकमात्र मध्यस्थ वाले किसी माध्यस्थ में यदि पक्षकार किसी मध्यस्थ पर एक पक्षकार द्वारा दूसरे पक्षकार से किए गए किसी अनुरोध की प्राप्ति से तीस दिन के भीतर इस प्रकार सहमत होने में असफल रहते हैं, तो नियुक्ति किसी भी पक्षकार के आवेदन पर उपधारा (4) में समाविष्ट उपबंधों के अनुसार की जाएगी । आगे उपधारा (6) उपबंधित करती है कि जहां पक्षकारों द्वारा करार पाई गई किसी नियुक्ति की प्रक्रिया के अधीन कोई पक्षकार उस प्रक्रिया के अधीन अपेक्षित रूप से कार्य करने में असफल रहता है, तो नियुक्ति किसी पक्षकार द्वारा प्रस्तुत किए गए आवेदन पर अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा पदाभिहित माध्यस्थम् संस्था द्वारा या अंतरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् के अलावा माध्यस्थमों के मामले में उच्च न्यायालय द्वारा की जाएगी, जैसा भी मामला हो, जब तक कि नियुक्ति प्रक्रिया के किसी करार में नियुक्ति सुनिश्चित कराने के अन्य साधनों के लिए उपबंधित न किया गया हो, आवश्यक उपाय करने के लिए अनुरोध कर सकता है ।

5. उक्त उपबंधों के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि अधिनियम की धारा 11 मात्र उस प्रक्रिया से संबंधित है जिसका अनुसरण किसी पक्ष द्वारा माध्यस्थम् अधिकरण के गठन के प्रयोजनार्थ किया जाता है । यह कहीं पर भी विहित नहीं किया गया है कि जहां पक्षों के मध्य कोई माध्यस्थम् करार न हो, फिर भी कोई पक्ष मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए न्यायालय की शरण में जा सकेगा । माध्यस्थम् करार की विद्यमानता अधिनियम की धारा 11 का अवलंब लिए जाने के प्रयोजनार्थ अनिवार्य है ।

6. परिणामत: आवेदन खारिज किया जाता है ।

आवेदन खारिज किया गया ।

शु.

सुपर कैसेट्स इंडस्ट्रीज

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

(2018 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका संख्या 38708)

तारीख 24 अगस्त, 2019

न्यायमूर्ति जे. जे. मुनीर

उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (1947 का 28) – धारा 4क [सपठित औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 और 2क] – स्थानांतरण आदेश के अननुपालन के कारण कर्मकार की सेवा समाप्ति आदेश की विधिमान्यता – सेवा समाप्ति आदेश सेवा-शर्तों के प्रतिकूल पाया जाना – श्रम न्यायालय स्थानांतरण आदेश के अननुपालन के बाबत आरोप पर आधारित बर्खास्तगी की विधिमान्यता को निर्णीत करते हुए स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता पर भी विचार कर सकता है, यद्यपि निदेश उसके स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता पर विचार किए जाने के बाबत न हो ।

उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 – धारा 4क [सपठित औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10 और 2क] – स्थानांतरण आदेश के अननुपालन के कारण कर्मकार की सेवा समाप्ति आदेश की विधिमान्यता – सेवा समाप्ति आदेश सेवा-शर्तों के प्रतिकूल पाया जाना – बर्खास्तगी आदेश और स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता को पृथक् नहीं किया जा सकता – श्रम न्यायालय द्वारा इन दोनों का विनिर्धारण एक साथ किया जाना चाहिए ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि नियोजकों द्वारा कर्मकार को तारीख 1 मार्च, 1989 से एयरकंडिशनर मैकेनिक के रूप में नियोजित किया गया था । ऐसा प्रतीत होता है कि कर्मकार को गौतमबुद्ध नगर, नोएडा की इकाई से अन्य राज्य अर्थात् मध्य प्रदेश के जिला भिंड के

मलनपुर स्थित एक अन्य इकाई को तारीख 3 जुलाई, 1995 के स्थानांतरण आदेश द्वारा स्थानांतरित कर दिया गया और उससे यह अपेक्षा की गई कि वह तारीख 8 जुलाई, 1995 तक अपने स्थानांतरण वाले स्टेशन पर जाकर कर्तव्यपालन में सम्मिलित हो जाए । चूंकि कर्मकार इस अनावश्यक स्थानांतरण से संतुष्ट नहीं था, अतः वह स्थानांतरण आदेश का अनुपालन करते हुए मलनपुर में कर्तव्यपालन पर उपस्थित नहीं हुआ । उसको स्थानांतरण आदेश का अनुपालन न करने का अवचार के लिए आरोप पत्र दिया गया । उसके विरुद्ध तारीख 19 अगस्त, 1995 को आरोप पत्र जारी किया गया । उसके विरुद्ध घरेलू जांच संचालित की गई जिसमें उसको दोषी पाया गया । जांच अधिकारी द्वारा उसको दोषी अभिनिर्धारित करते हुए तारीख 14 नवंबर, 1995 की जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की गई । उसको तारीख 20 दिसंबर, 1995 की कारण बताओ सूचना जारी की गई और उसके अनुसरण में तारीख 13 जनवरी, 1996 के आदेश द्वारा तारीख 16 जनवरी, 1996 से सेवा से बर्खास्त कर दिया गया । नियोजकों की इस कार्रवाई के विरुद्ध कर्मकार ने सुलह की ईप्सा करते हुए धारा 2-क के अधीन सक्षम प्राधिकारी के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया । सुलह की कार्रवाई विफल हो जाने पर औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 4क के अधीन अपर श्रम आयुक्त द्वारा श्रम न्यायालय को निर्दिष्ट किया गया कि "क्या कर्मकार, जो तारीख 8 जुलाई, 1995 से एयरकंडिशनर प्रचालक के रूप में कार्यरत है, की सेवाओं को समाप्त करने की नियोजकों की कार्रवाई विधिपूर्ण और न्यायसंगत है ? यदि नहीं तो संबद्ध कर्मकार किस अनुतोष, प्रतिकर का हकदार है और किन शर्तों के अधीन और कब से ।" इस निदेश को 1996 के न्याय निर्णयन वाद संख्या 479 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । नियोजकों द्वारा इस निदेश की विधिमान्यता के विरुद्ध और साथ ही इस आधार पर भी कि कर्मकार की सेवाओं को तारीख 8 जुलाई, 1995, जो उसके स्थानांतरण आदेश की तारीख है, से समाप्त नहीं किया, आक्षेप फाइल किए । फिर भी, उसको तारीख 13 जनवरी, 1996 के आदेश द्वारा तारीख 16 जनवरी, 1996 से स्थानांतरण आदेश का अनुपालन न किए जाने के आरोप के आधार पर जांच संचालित किए

जाने के पश्चात् सेवा से बर्खास्त कर दिया गया । यह प्रतीत होता है कि तारीख 8 जुलाई, 1996 को कर्मकार की सेवाओं की समाप्ति के संबंध में नियोजकों और कर्मकार के मध्य औद्योगिक विवाद के संबंध में द्वितीय निर्देश गाजियाबाद के अपर श्रम आयुक्त द्वारा तारीख 14 नवंबर, 1996 के आदेश द्वारा श्रम न्यायालय को किया गया कि "क्या तारीख 16 जनवरी, 1996 के आदेश द्वारा कर्मकार की सेवाओं की समाप्ति की नियोजकों की कार्रवाई विधिपूर्ण और न्यायसंगत है ? यदि नहीं, तो संबद्ध कर्मकार किस अनुतोष, प्रतिकर का हकदार है और किन निबंधनों के अंतर्गत और किस तारीख से और किन विवरणों के अंतर्गत ।" तारीख 8 जुलाई, 1996 को किए गए निदेश के आधार पर गाजियाबाद के श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी के समक्ष 1997 का न्यायनिर्णयन मामला संख्या 242 रजिस्ट्रीकृत किया गया । इस प्रक्रम पर नियोजकों द्वारा आक्षेप उठाया गया, जो यह था कि समान पक्षों के मध्य 1996 का एक अन्य न्यायनिर्णयन वाद संख्या 489 लंबित है । कर्मकार ने 1996 के न्यायनिर्णयन मामला संख्या 489 में एक आवेदन यह अभिकथित करते हुए प्रस्तुत किया कि वह निदेश की पैरवी नहीं करना चाहता । तद्नुसार, गाजियाबाद के श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी ने आवेदन को मंजूर कर लिया और अभिनिर्धारित किया कि मात्र निदेश के आधार पर कोई औद्योगिक विवाद नहीं चल सकता और तद्नुसार निदेश का उत्तर दे दिया । 1997 के न्यायनिर्णयन मामला संख्या 242 में दोनों पक्षों ने मौखिक और दस्तावेजी, दोनों प्रकार के साक्ष्य प्रस्तुत करने के अतिरिक्त अपने-अपने लिखित कथन और खंडन कथन फाइल किए । नियोजकों ने श्रम न्यायालय के समक्ष अपने पक्षकथन के माध्यम से सूचित किया कि कर्मकार को अनुशासनिक कार्यवाही के परिणामस्वरूप पारित आदेश द्वारा सेवा से बर्खास्त कर दिया गया है, जिसकी वैधता निदेश की विषयवस्तु है । नियोजकों के अन्य बातों के साथ-साथ इस पक्षकथन के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि कर्मकार को सेवा से तारीख 13 जनवरी, 1996 के आदेश द्वारा अनुशासनिक कार्यवाहियों के पूर्ण अनुक्रम के पश्चात् इस आरोप के आधार पर बर्खास्त कर दिया गया था कि उसने तारीख 3 जुलाई,

1997 के स्थानांतरण आदेश का अननुपालन किया था । अत: यह रिट याचिका 2018 के न्यायनिर्णयन मामला संख्या 33 में गौतमबुद्ध नगर, नोएडा के श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी द्वारा तारीख 27 जुलाई, 2018 को पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध निदेशित है । श्रम न्यायालय ने इस अधिनिर्णय द्वारा कर्मकार की सेवाओं की समाप्ति की विधिमान्यता के संबंध में कर्मकार के पक्ष में और नियोजकों के विरुद्ध 1947 के उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 4-ट के अधीन किए गए निदेश का उत्तर दिया । इस अधिनिर्णय द्वारा तारीख 16 जनवरी, 1996 से कर्मकार की सेवा की समाप्ति को अवैध अभिनिर्धारित किया गया और उसको पूर्ण पिछले वेतन, सेवा की निरंतरता और अन्य लाभों के साथ सेवा में पुन: बहाल किए जाने के लिए आदेशित किया गया है । रिट याचिका भागत: मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – गुवाहाटी उच्च न्यायालय ने वर्कमैन ऑफ बिजली बाड़ी टी स्टेट वाले मामले में इस आधार पर सेवा से बर्खास्तगी के बाबत निदेश पर कर्मकार की बर्खास्तगी को दोषपूर्ण अभिनिर्धारित किया कि आरोप स्थानांतरण आदेश पर आधारित थे, जो कि अवैध था । संक्षेप में इस मामले में भी कर्मकार का यही पक्षकथन है । यह न्यायालय बिल्कुल भी नहीं कहना चाहता कि स्थानांतरण आदेश विधिमान्य है या अविधिमान्य । श्री दीप्तिमान सिंह ने यह दर्शित करने का प्रयास किया कि कंपनी के प्रमाणित स्थायी आदेश में किसी अंतरराज्यीय स्थानांतरण का उपबंध समाविष्ट नहीं है । इसके विपरीत श्री शेखर श्रीवास्तव ने निवेदन किया कि यह उपबंध राज्य के बाहर किसी अंतरण की अनुज्ञा प्रदान नहीं करते । विद्वान् काउंसेल द्वारा अन्य विवाद्यकों को भी उठाने का प्रयास किया गया । यह न्यायालय वर्तमान याचिका में उन मामलों पर विचार करने के लिए आनत नहीं है, चूंकि इस न्यायालय के विचार में यह मामला श्रम न्यायालय को निदेश के संपूर्ण विनिर्धारण के लिए वापस भेजा जाना चाहिए । श्रम न्यायालय प्रथमत: स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता का परीक्षण करेगा और तत्पश्चात् निर्दिष्ट बर्खास्तगी आदेश की विधिमान्यता का विनिर्धारण करने के लिए अग्रसर

होगा । निर्दिष्ट बर्खास्तगी आदेश और स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता को पृथक् नहीं किया जा सकता । इन दोनों का एक साथ विनिर्धारण किया जाना अपेक्षित है । परिणामस्वरूप, आक्षेपित अधिनिर्णय और साथ ही जांच कार्रवाई की विधिमान्यता के संबंध में बिंदु का निस्तारण किए जाने के प्रयोजनार्थ पृथक् रूप से पारित आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य हैं । यद्यपि, तारीख 12 सितंबर, 2017 के उक्त आदेश को नियोजकों द्वारा औपचारिक रूप से चुनौती नहीं दी गई है । वह आदेश प्रथम दृष्टि में ही अवैध है और उसको बनाए रखे जाने की अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती । (पैरा 21, 22 और 23)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2010] (2010) 4 गुवाहाटी ला रिपोर्ट्स 849 :
वर्कमैन ऑफ बिजली बाड़ी टी स्टेट बनाम
मैनेजमेंट ऑफ बिजली बाड़ी टी स्टेट । 19

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2018 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका संख्या 38708.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री दीप्तिमान सिंह

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री शेखर श्रीवास्तव, मुख्य स्थायी काउंसेल

आदेश

यह रिट याचिका कृष्ण बहादुर और टोनी इलेक्ट्रोनिक लिमिटेड के मध्य 2018 के न्यायनिर्णयन मामला संख्या 33 में गौतमबुद्ध नगर, नोएडा के श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी द्वारा तारीख 27 जुलाई, 2018 (जिसे तारीख 6 सितंबर, 2018 को संप्रकाशित किया गया) के अधिनिर्णय के विरुद्ध निदेशित है । श्रम न्यायालय ने इस अधिनिर्णय द्वारा कर्मकार कृष्ण बहादुर की सेवाओं की समाप्ति की

विधिमान्यता के संबंध में कर्मकार के पक्ष में और नियोजकों के विरुद्ध 1947 के उत्तर प्रदेश औद्योगिक विवाद अधिनियम (संक्षेप में 'अधिनियम') की धारा 4-ट के अधीन किए गए निदेश का उत्तर दिया है । इस अधिनिर्णय द्वारा तारीख 16 जनवरी, 1996 से कर्मकार की सेवा की समाप्ति को अवैध अभिनिर्धारित किया गया है और उसको पूर्ण पिछले वेतन, सेवा की निरंतरता और अन्य लाभों के साथ सेवा में पुन: स्थापित किए जाने के लिए आदेशित किया गया है ।

2. यहां पर यह बताया जाता है कि कृष्ण बहादुर और उसके नियोजकों टोनी इलेक्ट्रोनिक लिमिटेड के मध्य औद्योगिक विवाद उद्भूत हो गया था । श्रम न्यायालय के समक्ष औद्योगिक विवाद के लंबन के दौरान टोनी इलेक्ट्रोनिक लिमिटेड का आमेलन सुपर कैसेट्स इंडस्ट्रीज प्राइवेट लिमिटेड के साथ हो गया, जिसके परिणामस्वरूप सुपर कैसेट्स इंडस्ट्रीज प्राइवेट लिमिटेड ने नियोजकों के रूप में टोनी इलेक्ट्रोनिक लिमिटेड का प्रबंध ग्रहण कर लिया । उन्होंने टोनी इलेक्ट्रोनिक लिमिटेड के समस्त अधिकारों, दायित्वों और उनके द्वारा या उनके विरुद्ध लंबित कार्रवाइयों का भी प्रबंध ग्रहण कर लिया । तद्नुसार, सुपर कैसेट्स इंडस्ट्रीज प्राइवेट लिमिटेड ने श्रम न्यायालय के समक्ष एक आवेदन यह अभिकथित करते हुए प्रस्तुत किया कि उनके समक्ष लंबित औद्योगिक विवाद में पक्षों के नाम समुचित रूप से संशोधित किए जाने चाहिए जिससे कि नियोजकों की नई पहचान को उपदर्शित किया जा सके । उक्त आवेदन तारीख 13 अगस्त, 2001 को प्रस्तुत किया गया था और श्रम न्यायालय द्वारा इस आवेदन को तारीख 2 अगस्त, 2002 को मंजूर कर लिया गया था । इस निर्णय को कृष्ण बहादुर, जिसको इसमें इसके पश्चात् 'कर्मकार' कहकर निर्दिष्ट किया जाएगा, जबकि याची मैसर्स सुपर कैसेट्स इंडस्ट्रीज प्राइवेट लिमिटेड को 'नियोजकों' के रूप में निर्दिष्ट किया जाएगा ।

3. यह औद्योगिक विवाद मैसर्स टोनी इलेक्ट्रोनिक लिमिटेड स्थित जी.-3, 4, सेक्टर 11 नोएडा की एक इकाई के संबंध में उद्भूत हुआ था, जिसका वर्तमान में आमेलन नियोजकों के साथ कंपनी रजिस्ट्रार द्वारा

तारीख 13 दिसंबर, 1999 को पारित आदेश के अधीन हो चुका है । वर्तमान नियोजकों की इकाई 'आडियो कैसेट्स' के विनिर्माण में संलिप्त है । यह कहा गया है कि नियोजक फिल्मों और संगीत के उत्पादन और उन्नयन और इलेक्ट्रोनिक माल के विपणन के कारबार में संलिप्त हो गए, चूंकि वर्तमान में आडियो कैसेट्स अप्रचलित तकनीक हो चुके हैं । नियोजकों द्वारा कर्मकार को तारीख 1 मार्च, 1989 से एयरकंडिशनर के मैकेनिक के रूप में नियोजित किया गया था । ऐसा प्रतीत होता है कि कर्मकार को गौतमबुद्ध नगर, नोएडा की इकाई से मध्य प्रदेश के जिला भिंड, मलनपुर स्थित एक अन्य इकाई को तारीख 3 जुलाई, 1995 के स्थानांतरण आदेश द्वारा स्थानांतरित कर दिया गया और उससे यह अपेक्षा की गई कि वह तारीख 8 जुलाई, 1995 तक अपने स्थानांतरण वाले स्टेशन पर जाकर कर्तव्यपालन में सम्मिलित हो जाए ।

4. चूंकि कर्मकार इस अनावश्यक स्थानांतरण से संतुष्ट नहीं था, अतः वह स्थानांतरण आदेश का अनुपालन करते हुए मलनपुर में कर्तव्यपालन पर उपस्थित नहीं हुआ । उसको स्थानांतरण आदेश का अनुपालन न करने का अवचार के लिए आरोप पत्र दिया गया । उसके विरुद्ध तारीख 19 अगस्त, 1995 को आरोप पत्र जारी किया गया । उसके विरुद्ध घरेलू जांच संचालित की गई जिसमें उसको दोषी पाया गया । जांच अधिकारी द्वारा उसको दोषी अभिनिर्धारित करते हुए तारीख 14 नवंबर, 1995 की एक जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की गई । उसको तारीख 20 दिसंबर, 1995 को कारण बताओ सूचना जारी की गई और उस कारण बताओ सूचना के अनुसरण में तारीख 13 जनवरी, 1996 के आदेश द्वारा तारीख 16 जनवरी, 1996 से सेवा से बर्खास्त कर दिया गया । नियोजकों की इसी कार्रवाई के विरुद्ध कर्मकार ने सुलह की ईप्सा करते हुए धारा 2-क के अधीन सक्षम प्राधिकारी के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया । सुलह की कार्रवाई विफल हो जाने पर औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 4क के अधीन अपर श्रम आयुक्त द्वारा निम्नलिखित निबंधनों के अधीन निर्दिष्ट किया गया :–

"क्या कर्मकार श्री कृष्ण बहादुर पुत्र श्री नंदराम, जो तारीख 8

जुलाई, 1995 से एयरकंडिशनर प्रचालक के रूप में कार्यरत हैं, की सेवाओं को समाप्त करने की नियोजकों की कार्रवाई विधिपूर्ण और न्यायसंगत है ? यदि नहीं तो संबद्ध कर्मकार किस अनुतोष, प्रतिकर का हकदार है और किन शर्तों के अधीन और कब से ।"

5. उक्त निदेश को 1996 के न्यायनिर्णयन वाद संख्या 479 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । नियोजकों द्वारा इस निदेश की विधिमान्यता के विरुद्ध और साथ ही इस आधार पर भी कि कर्मकार की सेवाओं को तारीख 8 जुलाई, 1995, जो उसके स्थानांतरण आदेश की तारीख है, से समाप्त नहीं किया, आक्षेप फाइल किए । फिर भी, उसको तारीख 13 जनवरी, 1996 के आदेश द्वारा तारीख 16 जनवरी, 1996 से स्थानांतरण आदेश का अनुपालन न किए जाने के आरोप के आधार पर जांच संचालित किए जाने के पश्चात् सेवा से बर्खास्त कर दिया गया । यह प्रतीत होता है कि तारीख 8 जुलाई, 1996 को कर्मकार की सेवाओं की समाप्ति के संबंध में नियोजकों और कर्मकार के मध्य औद्योगिक विवाद के संबंध में द्वितीय निर्देश किया गया । यह निदेश तारीख 14 नवंबर, 1996 के आदेश द्वारा गाजियाबाद के अपर श्रम आयुक्त द्वारा निम्नलिखित निबंधनों के अनुसार किया गया (जिसका अनुवाद हिंदी से अंग्रेजी में किया गया) :–

"क्या तारीख 16 जनवरी, 1996 के आदेश द्वारा कर्मकार श्री कृष्ण बहादुर पुत्र श्री नंदराम की सेवाओं की समाप्ति की नियोजकों की कार्रवाई विधिपूर्ण और न्यायसंगत है ? यदि नहीं, तो संबद्ध कर्मकार किस अनुतोष, प्रतिकर का हकदार है और किन निबंधनों के अंतर्गत और किस तारीख से और किन विवरणों के अंतर्गत ।"

6. तारीख 8 जुलाई, 1996 को किए गए निदेश के आधार पर गाजियाबाद के श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी के समक्ष 1997 का न्यायनिर्णयन मामला संख्या 242 रजिस्ट्रीकृत किया गया । इस प्रक्रम पर नियोजकों द्वारा यह आक्षेप उठाया गया कि समान पक्षों के मध्य 1996 का एक अन्य न्यायनिर्णयन वाद संख्या 489 लंबित है । कर्मकार ने 1996 के न्यायनिर्णयन मामला संख्या 489 में आवेदन यह

अभिकथित करते हुए प्रस्तुत किया था कि वह निदेश की पैरवी नहीं करना चाहता । तद्नुसार, गाजियाबाद के श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी ने आवेदन को मंजूर कर लिया और अभिनिर्धारित किया कि मात्र निदेश के आधार पर कोई औद्योगिक विवाद नहीं चल सकता और तद्नुसार निदेश का उत्तर दे दिया । 1997 के न्यायनिर्णयन मामला संख्या 242 में दोनों पक्षों ने मौखिक और दस्तावेजी, दोनों प्रकार के साक्ष्य प्रस्तुत करने के अतिरिक्त अपने-अपने लिखित कथन और खंडन कथन फाइल किए । नियोजकों ने श्रम न्यायालय के समक्ष अपने पक्षकथन के माध्यम से सूचित किया कि कर्मकार को अनुशासनिक कार्यवाही के परिणामस्वरूप पारित आदेश द्वारा सेवा से बर्खास्त कर दिया गया है, जिसकी वैधता निदेश की विषयवस्तु है । नियोजकों के अन्य बातों के साथ-साथ, इस पक्षकथन के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि कर्मकार को सेवा से तारीख 13 जनवरी, 1996 के आदेश द्वारा अनुशासनिक कार्यवाहियों के पूर्ण अनुक्रम के पश्चात् इस आरोप के आधार पर बर्खास्त कर दिया गया था कि उसने तारीख 3 जुलाई, 1997 के स्थानांतरण आदेश का अननुपालन किया था ।

7. नियोजकों द्वारा यह बताया गया कि तारीख 25 अक्तूबर, 2007 को 1997 के न्यायनिर्णयन वाद संख्या 242 को गाजियाबाद के श्रम न्यायालय से जिला गौतमबुद्ध नगर, नोएडा के श्रम न्यायालय को अंतरित कर दिया गया था । जिला गौतमबुद्ध नगर, नोएडा में न्यायनिर्णयन वाद को 2008 के न्यायनिर्णयन वाद संख्या 33 के रूप में पुनर्संख्यांकित किया गया । श्रम न्यायालय नियोजकों द्वारा कराई गई घरेलू जांच की निष्पक्षता के संबंध में प्रारंभिक विवाद्यक विरचित करने के लिए अग्रसर हुआ । श्रम न्यायालय ने तारीख 12 जुलाई, 2017 के आदेश द्वारा अभिनिर्धारित किया कि नियोजकों द्वारा संचालित घरेलू जांच उचित और निष्पक्ष थी । श्रम न्यायालय ने जांच अधिकारी और कर्मकार दोनों के साक्षियों के रूप में परीक्षण के पश्चात् ऐसा किया । जांच की कार्यवाहियों से संबंधित साक्ष्य को भी प्रस्तुत किया गया । श्रम न्यायालय ने जांच को निष्पक्ष अभिनिर्धारित किया और जो कारण अभिलिखित किए गए, वे पर्याप्त हैं ।

8. श्रम न्यायाल ने यह टिप्पणी की कि आरंभिक बिंदु के विनिश्चय के समय यह नहीं देखा जा सकता कि अननुपालन के संबंध में पारित स्थानांतरण आदेश, जिसके आधार पर आरोप लगाए गए हैं, विधिपूर्ण था या नहीं । श्रम न्यायालय के अनुसार इस प्रक्रम पर जिस बात पर विचार किया जाना था, यह थी कि क्या जांच प्रक्रिया निष्पक्ष थी । तत्पश्चात् श्रम न्यायालय ने कहा कि इस दृष्टिकोण से विचार करते हुए यह स्पष्ट है कि कर्मकार को आरोप पत्र दिया गया था । उसका स्पष्टीकरण संतोषप्रद न पाए जाने पर तारीख 23 सितंबर, 1995 की प्रथम तारीख जांच कार्यवाही के लिए अभिनिश्चित की गई थी, किंतु कर्मकार उपस्थित नहीं हुआ । पुनः, तारीख 21 अक्तूबर, 1995 जांच के लिए अभिनिश्चित की गई, जब कर्मकार उपस्थित हुआ । उसने आरोप को स्वीकार किया और कहा कि उसके पास अपनी प्रतिरक्षा में प्रस्तुत करने के लिए कोई साक्ष्य या पेश करने के लिए साक्षी नहीं है । उसने किसी साक्षी की प्रतिपरीक्षा भी नहीं की । श्रम न्यायालय ने इन तथ्यों के आधार पर अभिनिर्धारित किया कि यह नहीं कहा जा सकता कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अतिक्रमण हुआ या उसके विरुद्ध प्रक्रिया का अतिक्रमण करते हुए आरोप लगाए गए ।

9. यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि आरंभिक बिंदु का उत्तर नियोजकों के पक्ष में यह अभिनिर्धारित करते हुए दिया गया था कि अनुशासनिक कार्यवाही निष्पक्ष होनी चाहिए और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार की जानी चाहिए । तत्पश्चात् श्रम न्यायालय ने औद्योगिक विवाद को इस बिंदु कि क्या नियोजक का नोएडा स्थित इकाई से मध्य प्रदेश के जिला भिंड के मलनपुर स्थित इकाई को स्थानांतरण विधिपूर्ण था और क्या कर्मकार को उस स्थानांतरण आदेश का पालन न किए जाने के करण दंडित किया जा सकता था के विनिर्धारण के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत किए जाने के लिए निर्देशित किया ।

10. याची-नियोजक के विद्वान् काउंसेल श्री दीप्तिमान सिंह और प्रत्यर्थी-कर्मकार के विद्वान् काउंसेल श्री शेखर श्रीवास्तव को सुना ।

11. इस न्यायालय ने श्रम न्यायालय के समक्ष जांच अधिकारी श्री

अनिल सिंघल और कर्मकार द्वारा शपथपूर्वक दिए गए कथन का परिशीलन किया है । कर्मकार द्वारा शपथपूर्वक दिए गए कथन को संपूर्णता में पढ़े जाने पर यह दर्शित नहीं होता कि उसने इस बात को स्वीकार किया है कि उसके ऊपर लगाए गए आरोप सही हैं, जैसाकि श्रम न्यायालय द्वारा अपने तारीख 12 सितंबर, 2017 के आदेश में जांच की शुद्धता के बारे में विरचित आरंभिक बिंदु का निस्तारण करते हुए टिप्पणी की गई है । यदि ऐसा था, तो श्रम न्यायालय के समक्ष विनिर्धारित करने के लिए कुछ भी नहीं था । सारतः, कर्मकार ने तारीख 23 मार्च, 2004 को अभिलिखित अपने परिसाक्ष्य में जो कहा है, यह है कि हड़ताल के पश्चात् प्रबंध तंत्र ने सुविधाओं को घटा दिया था, जैसाकि वेषभूषा, मुफ्त चाय और भोजन । उन्होंने यह भी कहा कि यह कहना सत्य है कि उस पर त्यागपत्र देने के लिए दबाव डाला गया था । उसके द्वारा त्यागपत्र देने से इनकार किए जाने पर उसको तारीख 22 फरवरी, 1995 से निलंबित कर दिया गया था । तत्पश्चात् विभागीय कार्रवाई की गई । वह जांच के समय उपस्थित हुआ । उस जांच में प्रबंध तंत्र द्वारा उसके विरुद्ध आरोपों को साबित नहीं किया जा सका । उसके विरुद्ध पारित निलंबन आदेश तारीख 3 जुलाई, 1995 को वापस ले लिया गया, किंतु उसको उसी दिन सेवा में पुन: स्थापित किए जाने के बजाए मध्य प्रदेश के जिला भिंड के मलनपुर इकाई को स्थानांतरित कर दिया गया । कर्मकार द्वारा अपने साक्ष्य में इस बात को विनिर्दिष्ट रूप से अभिकथित किया गया है कि स्थानांतरण की शर्त उसकी सेवा-शर्तों में सम्मिलित नहीं थी और इसलिए, उसने स्थानांतरण आदेश का पालन करने से इनकार कर दिया था । उसने यह भी कहा कि नियोजकों द्वारा सत्यापित स्थायी आदेशों को सूचना बोर्ड पर कभी भी प्रदर्शित नहीं किया गया । उसने कहा कि वह जांच अधिकारी के समक्ष उपस्थित नहीं हुआ था क्योंकि स्थानांतरण की शर्त सेवा-शर्तों में सम्मिलित नहीं थी । अतः, उसके विरुद्ध आरंभ की गई कार्रवाई स्पष्टरूपेण अवैध है । कर्मकार ने अपनी प्रतिपरीक्षा में इस तथ्य को स्वीकार किया है कि उसको तारीख 3 जुलाई, 1995 को मलनपुर स्थानांतरित कर दिया गया था जहां उसे 8 जुलाई, 1995 को कर्तव्य पालन के लिए सम्मिलित होना था । उसने

इस तथ्य को भी स्वीकार किया है कि वह मलनपुर में कर्तव्य पालन के लिए सम्मिलित नहीं हुआ । उसने इस बात से भी इनकार नहीं किया है कि उस पर तारीख 19 अगस्त, 1995 को आरोप पत्र तामील किया गया था, जिसके विरुद्ध उसने तारीख 22 अगस्त, 1995 को उत्तर प्रस्तुत किया था । उसने इस तथ्य को भी स्वीकार किया है कि जब उसका उत्तर संतोषप्रद नहीं पाया गया, तो उसके विरुद्ध जांच कार्यवाही आरंभ की गई । तत्पश्चात् उसकी विस्तारपूर्वक प्रतिपरीक्षा की गई, जिसे तारीख 19 फरवरी, 2007 को अभिलिखित किया गया । उसने जांच कार्यवाही के तथ्य को स्वीकार किया है ; अर्थात् वह कब उपस्थित हुआ और कब उपस्थित नहीं हुआ, के बारे में । उसने एक तथ्य के संबंध में कहा है कि उसने जांच अधिकारी के समक्ष इस बात को स्वीकार किया था कि जब वह मलनपुर इकाई में कर्तव्य पालन के लिए सम्मिलित नहीं हुआ, तो उस पर कारण बताओ सूचना तामील की गई । तथापि, उसने इस तथ्य के संबंध में इनकार किया है कि उसको नियुक्ति पत्र दिया गया था । उसने इस तथ्य से भी इनकार किया है कि नियोजकों ने सुविधाएं वापस ले ली थीं । उसने यह भी अभिकथित किया है कि यह कहा जाना गलत है कि उसको तारीख 8 जुलाई, 1995 को कर्तव्य पालन हेतु सम्मिलित होने से रोका नहीं गया था । यहां पर यह टिप्पणी किया जाना आवश्यक है कि कर्मकार का यह कथन निश्चित रूप से उसको गौतमबुद्ध नगर, नोएडा स्थित इकाई में कार्य में सम्मिलित होने से रोका गया था । तत्पश्चात् उसने अपनी प्रतिपरीक्षा के समापन भाग में कहा है कि उसकी सेवा को जांच कार्रवाई के परिणामस्वरूप दोषपूर्ण ढंग से समाप्त कर दिया गया है ।

12. इस न्यायालय ने यह भी अवेक्षित किया है कि ऐसा प्रतीत होता है कि जांच अधिकारी ने कर्मकार की तरफ से ओमपाल सिंह नामक एक व्यक्ति जो कर्मकार का प्रतिरक्षा प्रतिनिधि प्रतीत होता है, की प्रतिपरीक्षा की । उसने जांच अधिकारी के समक्ष निम्नलिखित प्रश्न प्रस्तुत किए :–

"प्रश्न – क्या कारखाने के प्रमाणित स्थायी आदेशों के अनुसार

उन श्रमिकों का स्थानांतरण दूसरे राज्य में किया जा सकता है, जो कर्मकार की परिभाषा के अंतर्गत आते हैं ?

उत्तर – प्रमाणित स्थायी आदेश की धारा 19ए के अनुसार सभी कर्मकारों का स्थानांतरण एक विभाग से दूसरे विभाग, एक फैक्ट्री/ऑफीस/स्थान से दूसरी फैक्ट्री/ऑफीस/स्थान पर किया जा सकता है । उसमें एक राज्य से दूसरे राज्य को स्थानांतरण के संबंध में कुछ नहीं लिखा है । मैंने स्थायी आदेश प्रमाणित होने के संबंध में कर्मकारों के निर्वाचित प्रतिनिधियों के बारे में कुछ नहीं देखा है ।"

13. कर्मकार के इस परिसाक्ष्य से इस न्यायालय को आश्चर्य है कि श्रम न्यायालय ने यह अनुमान कैसे लगाया कि कर्मकार ने आरोप को स्वीकार कर लिया है ? कर्मकार ने जो स्वीकार किया, वह यह तथ्य है कि उसने स्थानांतरण आदेश का अनुपालन नहीं किया ; उसके विरुद्ध अननुपालन के लिए विभागीय कार्रवाई की गई और उसको दंडित किया गया । उसका पक्षकथन यह है कि स्थानांतरण की शर्त उसकी सेवा-शर्त का भाग नहीं थी और इसलिए, दंडादेश दोषपूर्ण है ।

14. अत:, इस न्यायालय का यह पक्का विचार है कि श्रम न्यायालय ने तारीख 12 सितंबर, 2017 के अपने आदेश में इस बाबत अनुचित निष्कर्ष अभिलिखत किया कि कर्मकार तारीख 21 अक्तूबर, 1995 को जांच अधिकारी के समक्ष उपस्थित हुआ और उसने उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों को स्वीकार किया और कार्रवाई पर हस्ताक्षर किए । यह निष्कर्ष कि उसने मुख्य साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने या साक्षियों की प्रतिपरीक्षा किए जाने के लिए अवसर नहीं मांगा, भी अनुचित है । कर्मकार का पक्षकथन स्पष्ट है कि उसने इस आरोप से इनकार किया था कि उसने कोई अवचार कारित किया है, किंतु उसने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि उसने स्थानांतरण आदेश का पालन नहीं किया । जिस बात को कर्मकार ने स्पष्टत: अभिकथित किया है, वह यह है कि चूंकि स्थानांतरण की शर्त उसकी सेवा-शर्तों का भाग नहीं थी, अत: उसने उस स्थानांतरण आदेश का सम्मान न करके कोई

अवचार नहीं किया । यदि उसका पक्षकथन यही था, तो उसके पास जांच की निष्पक्षता के बाबत आरंभिक बिंदु के विनिश्चय के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत किए जाने के योग्य कोई साक्ष्य उपलब्ध नहीं था । तारीख 12 सितंबर, 2017 को प्रारंभिक विवाद्यक का निस्तारण करने वाले जांच अधिकारी का आदेश एक अन्य कारणवश दोषपूर्ण है । श्रम न्यायालय ने इस बाबत निष्कर्ष अभिलिखित किए जाने के पश्चात् कि जांच निष्पक्ष थी और कर्मकार ने आरोप को स्वीकार कर लिया है, औद्योगिक विवाद को इस बिंदु पर न्यायनिर्णयन के लिए भेज दिया कि क्या स्थानांतरण आदेश विधिपूर्ण था और क्या इसके अननुपालन के लिए दंडित किया जा सकता था । यह जांच अधिकारी को किए गए निर्देश की विषयवस्तु कभी नहीं थी ।

15. नियोजकों के विद्वान् काउंसेल श्री दीप्तिमान सिंह ने दलील दी कि आक्षेपित आदेश दोषपूर्ण है, क्योंकि श्रम न्यायालय ने स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता के प्रश्न पर विचार किया है, जो वह निर्दिष्ट अधिकारिता के न्यायालय के रूप में नहीं कर सकते थे ।

16. इसके विपरीत कर्मकार के विद्वान् काउंसेल श्री शेखर श्रीवास्तव ने दलील दी कि निर्देश का आदेश कर्मकार की सेवा से बर्खास्तगी के बाबत है, जिसका आधार स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता का प्रश्न है । अतः, स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता का न्यायनिर्णयन स्थानांतरण आदेश के अननुपालन के आरोप पर कर्मकार की सेवा की समाप्ति की विधिमान्यता के विवाद्यक का निर्णय करते हुए की जानी चाहिए ।

17. दोनों पक्षों के विद्वान् काउंसेलों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से मामले के सही परिप्रेक्ष्य को प्रस्तुत किया है । इन निवेदनों पर एक साथ विचार किया जाना चाहिए जिससे कि संपूर्ण और एकीकृत परिदृश्य प्रस्तुत हो सके । यह स्थिति इस कारणवश उत्पन्न हुई क्योंकि श्रम न्यायालय इस मामले में विवाद की स्थिति और निर्देश की शर्तों पर विचार करते हुए जांच की प्रक्रियाजन्य निष्पक्षता के बाबत प्रश्न को आरंभिक प्रश्न के रूप में निर्णीत नहीं कर सकता था । औद्योगिक

विवाद के समाधान के बाबत उठाए गए किसी भी कदम के संबंध में यह अपेक्षा की जाएगी कि श्रम न्यायालय इस प्रश्न का विनिर्धारण करे कि क्या स्थानांतरण आदेश वास्तव में कर्मकार के लिए विधिमान्य था । यदि ऐसा नहीं था, तो जांच अधिकारी ने चाहे जितनी भी निष्पक्षता बरती हो, फिर भी वह ऐसे आरोप के आधार पर चल रही कार्यवाही को संचालित कर रहा होगा, जो अविद्यमान थी ।

18. नियोजकों के विद्वान् काउंसेल श्री दीप्तिमान सिंह का यह निवेदन स्वीकार्य नहीं है कि कर्मकार की सेवा समाप्ति की विधिमान्यता के बाबत निदेश या तारीख 16 जनवरी, 1996 के आदेश द्वारा अनुशासनिक कार्रवाई के मतावलंबन में उसकी बर्खास्तगी के मामले में तारीख 3 जुलाई, 1995 के स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता पर विचार नहीं किया जा सकता था । इसी कारणवश, जैसाकि पहले भी इंगित किया गया है और यह कहते हुए अधिक स्पष्ट किया गया है कि वे आरोप, जिनके आधार पर कर्मकार को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया या हटा दिया गया, तारीख 3 जुलाई, 1995 के स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता और वैधता के आवश्यक रूप से सहवर्ती हैं । श्रम न्यायालय के तारीख 16 जनवरी, 1996 के बर्खास्तगी आदेश, जो निर्देश की विषयवस्तु है, की वैधता को निर्णीत करते हुए इस बाबत परीक्षण करने की अधिकारिता प्राप्त है कि क्या स्थानांतरण आदेश विधित: पारित किया जा सकता था । किंतु श्रम न्यायालय ने तारीख 12 सितंबर, 2017 का आदेश अभिलिखित करते हुए, जिसके द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया कि कर्मकार ने उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों को स्वीकार कर लिया है और जांच निष्पक्ष है, परोक्ष रूप से यह मान लिया है कि उसके समक्ष निर्णीत करने के लिए कुछ भी नहीं है । पुन:, श्रम न्यायालय ने आक्षेपित अधिनिर्णय पारित करते हुए इन परिस्थितियों के अंतर्गत एक विकृत निर्देश पर विचार किया है । यहां पर यह स्पष्ट किया जाता है कि श्रम न्यायालय ने आक्षेपित अधिनिर्णय और तारीख 12 सितंबर, 2017 के आदेश को जो निष्कर्ष निकालते हुए अभिलिखित किया है, वे परोक्षत: एक दूसरे के विपरीत हैं । सिद्धांत यह

है कि श्रम न्यायालय किसी स्थानांतरण आदेश के अतिक्रमण के बारे में किसी आरोप पर आधारित बर्खास्तगी आदेश की विधिमान्यता को निर्णीत करते हुए, जबकि निर्देश की शर्तें सेवा की समाप्ति/बर्खास्तगी की विधिमान्यता के बाबत हैं, स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता पर भी विचार कर सकता है, यद्यपि निदेश उसको स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता पर विचार किए जाने के बाबत निदेशित नहीं है ।

19. इस न्यायालय द्वारा व्यक्त किए गए विचारों को **वर्कमैन ऑफ बिजली बाड़ी टी स्टेट** बनाम **मैनेजमेंट ऑफ बिजली बाड़ी टी स्टेट**[1] वाले मामले में गुवाहाटी उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय से समर्थन प्राप्त होता है, जिसमें कर्मकार द्वारा विधिविरुद्ध स्थानांतरण को स्वीकार किए जाने से इनकार किए जाने पर सेवा से बर्खास्तगी की विधिमान्यता के प्रश्न पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया :–

> "14. हमारे समक्ष उपस्थित मामले में संबद्ध कर्मकार के विरुद्ध लगाए गए आरोप के संबंध में उसके विरुद्ध की गई घरेलू जांच कार्यवाही (प्रदर्श-1) से यह स्पष्ट है कि कर्मकार ने उस कार्यवाही में भाग लिया था और उसको सुने जाने का युक्तिसंगत अवसर प्रदान किया गया था । उसके द्वारा प्रबंध तंत्र के विरुद्ध उत्पीड़न या अनुचित श्रम व्यवहार का कोई अभिकथन नहीं किया गया कि उन्होंने सद्भावपूर्वक कार्रवाई नहीं की है । ऐसा प्रतीत होता है कि श्रम संघ का पक्षकथन यह है कि घरेलू जांच अनुचित नहीं है और विधिमान्य है, चूंकि कर्मकार के विरुद्ध लगाए गए अवचार के आरोप पत्र में इस प्रकार का कोई भी निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया गया है और इस बाबत कोई कारण भी अभिलिखित नहीं किया गया है और इस प्रकार जांच अधिकारी ने इस पहलू पर विचार नहीं किया कि क्या स्थानांतरण आदेश द्वारा नियोजन की शर्तों का अतिक्रमण किया गया है । श्रम संघ के अनुसार स्थानांतरण आदेश, जो विधिपूर्ण और युक्तिसंगत हैं, की अवहेलना

[1] (2010) 4 गुवाहाटी ला रिपोर्ट्स 849.

तत्समय प्रवृत्त स्थायी आदेश के खंड-10 के अधीन केवल अवचार है और हमारे समक्ष उपस्थित मामले में चूंकि कर्मकार बिजली बाड़ी टी स्टेट में कार्यरत था, उसको उक्त टी स्टेट के बाहर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता था और किसी ऐसे नए उपक्रम/टी स्टेट को तो बिल्कुल भी स्थानांतरित नहीं किया जा सकता था, जो उसकी नियुक्ति के समय विद्यमान ही नहीं था । आगे का पक्षकथन यह है, जैसाकि श्रम न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य से प्रतीत होता है, उसको किसी भी स्थिति में डिब्रूगढ़ जिला के बाहर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता था और यह अंतरण आदेश उसको उसकी सेवा के साथ जुड़े हुए अन्य लाभों से वंचित करता है, जैसाकि मकान की सुविधा इत्यादि ।

15. यद्यपि जांच अधिकारी ने अपनी रिपोर्ट में कर्मकार की इस दलील को अस्वीकृत कर दिया कि उसको डिब्रूगढ़ जिला के बाहर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता था और उसको उसके नियोजन से प्राप्त होने वाले कतिपय लाभों से वंचित किए जाने से संबंधित दलील को भी अस्वीकृत कर दिया, किंतु फिर भी उसने इस निष्कर्ष को अभिलिखित करते हुए कि संबद्ध कर्मकार द्वारा स्थानांतरण के विधिपूर्ण आदेश की अवहेलना की गई है, जो कि अवचार है, कर्मकार के इस अभिवाक् के संबंध में किसी निष्कर्ष को अभिलिखित नहीं किया कि चूंकि उसको केवल बिजली बाड़ी टी स्टेट के संबंध में नियुक्त किया गया था, इसलिए उसको प्रबंध तंत्र द्वारा बाद में स्थापित की गई किसी अन्य टी स्टेट को स्थानांतरित नहीं किया जा सकता और इस बात पर विचार नहीं किया कि क्या अंतरण का आदेश विधिपूर्ण है चूंकि संबद्ध कर्मकार की नियुक्ति केवल बिजली बाड़ी टी स्टेट के संबंध में की गई थी । मामले के इस पहलू पर श्रम न्यायालय द्वारा भी विचार नहीं किया गया ।

16. तत्समय प्रवृत्त स्थायी आदेश का खंड-10 कर्मकार के ऐसे कार्यों और लोपों के बारे में उपबंधित करता है, जो घोर अवचार

गठित करते हैं । स्थायी आदेश का खंड-10(क)(1) उपबंधित करता है कि किसी वरिष्ठ अधिकारी द्वारा पारित केवल विधिपूर्ण और युक्तिसंगत आदेश की जानबूझकर की गई अवज्ञा या अवहेलना घोर अवचार गठित करती है । हमारे समक्ष उपस्थित मामले में संबद्ध कर्मकार के विरुद्ध आरोप यह था कि उसने स्थानांतरण आदेश, जो संबद्ध कर्मकार के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाई आरंभ किए जाने का आधार था, का पालन नहीं किया । इसलिए प्रबंध तंत्र को यह साबित करना होगा कि स्थानांतरण आदेश विधिपूर्ण और युक्तिसंगत है, ताकि स्थायी आदेश के खंड-10 के अर्थान्तर्गत अवचार गठित किया जा सके । जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, संबद्ध कर्मकार ने एकमात्र यह अभिवाक् किया है कि चूंकि उसकी नियुक्ति बिजली बाड़ी टी स्टेट में की गई थी, उसको उक्त टी स्टेट के बाहर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता था । यदि कर्मकार के इस अभिवाक् को स्वीकार कर लिया जाता है तो उसको बिजली बाड़ी टी स्टेट के बाहर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता और उस मामले में स्थानांतरण का आदेश विधिपूर्ण नहीं होगा और इसके परिणामस्वरूप संबद्ध कर्मकार को ऐसे किसी आदेश का पालन न किए जाने के लिए दंडित नहीं किया जा सकता, चूंकि उस आदेश के आधार पर तत्समय प्रवृत्त स्थायी आदेश के खंड-10 के अर्थान्तर्गत अवचार गठित नहीं होता ।

17. जैसाकि ऊपर चर्चा की गई है, जांच अधिकारी ने मामले के इस महत्वपूर्ण पहलू पर कोई भी निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया कि क्या कर्मकार को बिजली बाड़ी टी स्टेट के बाहर स्थानांतरित किया जा सकता था, चूंकि उसकी नियुक्ति केवल बिजली बाड़ी टी स्टेट के संबंध में की गई थी । प्रबंध तंत्र की ओर से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल द्वारा इस बात को विवादित नहीं किया गया है कि संबद्ध कर्मकार को बिजली बाड़ी टी स्टेट के संबंध में नियुक्त किया गया था और जब संबद्ध कर्मकार की नियुक्ति की गई, तो उस समयबिंदु पर प्रबंध तंत्र के पास कोई

अन्य उपक्रम नहीं था । यह भी विवादित नहीं है कि उसको तारीख 8 अगस्त, 1994 के आदेश द्वारा किसी नए उपक्रम को स्थानांतरित किए जाने की ईप्सा की गई थी, जो प्रबंध तंत्र के अनुसार चाय बागान के बाहर स्थित था । अतः संबद्ध कर्मकार के विरुद्ध की गई घरेलू जांच को निष्पक्ष और विधिमान्य अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता ताकि श्रम न्यायालय द्वारा मामले के गुणागुण पर किए गए विचार को प्रश्नगत किया जा सके, जैसाकि हमारे समक्ष उपस्थित मामले में किया गया है जिसमें जांच अधिकारी ने मामले के महत्वपूर्ण पहलू पर विचार नहीं किया, जो नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अतिक्रमण से संबंधित है ।

18. *** *** ***

19. *** *** ***

20. *** *** ***

21. *** *** ***

22. तारीख 8 अगस्त, 1994 के स्थानांतरण आदेश से यह प्रतीत होता है कि संबद्ध कर्मकार के वेतन और अन्य लाभों में किसी प्रकार से व्यवधान उत्पन्न नहीं किया गया है । प्रबंध तंत्र ने तारीख 7 सितंबर, 1994 की सूचना (प्रदर्श-6) को साबित करने के द्वारा इस बात को साबित कर दिया है कि वेतन और अन्य भत्तों को सम्मिलित करते हुए उसके समस्त सेवा लाभों का संदाय किया जाएगा और उसको उसकी हैसियत के अनुसार किराए के मकान की सुविधा या मकान का किराया भी दिया जाएगा । यह स्थिति होने के कारण संबद्ध कर्मकार के वेतन और अन्य भत्ते और मकान की सुविधाएं इत्यादि में कोई व्यवधान उत्पन्न नहीं किया गया और वह उन समस्त लाभों और सुविधाओं का भोग करता रहा, जिन सुविधाओं और लाभों का भोग वह बिजली बाड़ी टी स्टेट में कर रहा था । संबद्ध कर्मकार का यह अभिवाक् कि उसको डिब्रूगढ़ जिला के बाहर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता, को भी जांच अधिकारी

द्वारा अपनी रिपोर्ट में स्वीकार न करके न्यायत: निष्कर्ष निकाला गया । तथापि, तथ्यों के आधार पर यह स्वीकृत स्थिति है कि संबद्ध कर्मकार को आरंभिकत: प्रशिक्षु के रूप में नियुक्त किया गया था और तत्पश्चात् केवल बिजली बाड़ी टी स्टेट के लिए हजिरा महरार के रूप में नियुक्त किया गया था । इस बात पर भी विवाद नहीं है कि कर्मकार को तारीख 8 अगस्त, 1994 के स्थानांतरण आदेश द्वारा मरघेरिता स्थित एक नए प्रस्तावित उपक्रम को स्थानांतरित किए जाने की ईप्सा की गई थी, जो संबद्ध कर्मकार को नियुक्त किए जाते समय भौतिक रूप से विद्यमान भी नहीं था । जब तक कि नियुक्ति आदेश में इस बाबत कोई विनिर्दिष्ट शर्त समाविष्ट नहीं होती कि उसको उस टी स्टेट, जहां उसकी नियुक्ति की गई है, के बाहर भी स्थानांतरित किया जा सकता है और यहां तक कि किसी नए उपक्रम को भी स्थानांतरित किया जा सकता है, प्रबंध तंत्र ने कर्मकार का स्थानांतरण करने के प्रयोजनार्थ अपने अधिकार का प्रयोग करके को किसी नए उपक्रम को स्थानांतरित नहीं कर सकता और इसलिए, प्रबंध तंत्र का अधिकार सेवा-शर्तों के बाबत सारगर्भित अधिकार नहीं हो सकता । यदि किसी कर्मकार की नियुक्ति किसी एक टी स्टेट के संबंध में की गई है, तो उसको किसी अन्य टी स्टेट को स्थानांतरित नहीं किया जा सकता, चूंकि यह नियोजन की शर्तों का अतिक्रमण होगा कि उसको केवल किसी विशिष्ट टी स्टेट के संबंध में नियुक्त किया गया है । हमारे समक्ष उपस्थित मामले में, जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, इस बाबत कोई विवाद नहीं है कि संबद्ध कर्मकारी की नियुक्ति केवल बिजली बाड़ी टी स्टेट के संबंध में की गई थी और इसलिए, उसको बिजली बाड़ी टी स्टेट के बाहर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता, चाहे नया उपक्रम समान प्रबंध तंत्र के अंतर्गत हो, किंतु उसको निश्चित रूप से उसी टी स्टेट के भीतर किसी अन्य अनुभाग या किसी अन्य स्थानांतरणीय पद पर स्थानांतरित किया जा सकता है । यद्यपि प्रबंध तंत्र ने यह अभिवाक् किया है कि उक्त नया उपक्रम कुछ

और नहीं है बल्कि बिजली बाड़ी टी स्टेट का ही एक विस्तार है, फिर भी उन्होंने इस संबंध में श्रम न्यायालय के समक्ष कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया । अंतरण आदेश से यह प्रकट होता है कि संबद्ध कर्मकार किसी नए उपक्रम, जिसको आरंभ किया जाना प्रस्तावित था, को स्थानांतरित कर दिया गया था ।

23. उच्चतम न्यायालय ने कुंदन सुगम मिल्स वाले मामले में हमारे समक्ष उपस्थित मामले में अंतर्वलित तथ्यों के लगभग समान तथ्यों पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि नियोजक को किसी ऐसे कर्मचारी को किसी ऐसे स्थान पर स्थानांतरित करने का अंतर्निहित अधिकार नहीं है, जहां वह उसके नियोजन की तारीख के पश्चात् कोई अन्य कारबार आरंभ करने का निर्णय लेता है, जब अभिव्यक्त या सारगर्भित रूप से कर्मचारी की नियुक्ति की सेवा-शर्तों में ऐसी कोई शर्त समाविष्ट नहीं है कि नियोजक उसका स्थानांतरण किसी ऐसे नए उपक्रम या उसकी नियुक्ति की तारीख के पश्चात् आरंभ किए जाने के लिए प्रस्तावित नए उपक्रम को कर सकता है । उच्चतम न्यायालय ने उस मामले में श्रम अपील अधिकरण के निर्णय को यह अभिनिर्धारित करते हुए मान्य ठहराया है कि प्रबंध तंत्र को कर्मकार को किसी नए कारखाने में स्थानांतरित करने का कोई अधिकार नहीं और इसलिए उसको सेवा से बर्खास्त करने वाला आदेश अवैध था और इस तथ्य पर आधारित था कि वह कर्मकार, जो समान प्रबंध तंत्र के स्वामित्व वाले कारखाने में नियोजित था, को किसी नए उपक्रम में स्थानांतरित किए जाने की ईप्सा की गई थी । इस न्यायालय की एकल न्यायपीठ द्वारा काकोदंगा टी स्टेट (प्राइवेट) लिमिटेड वाले मामले में दिए गए विनिश्चय, जिसका अवलंब प्रबंध तंत्र की ओर से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल द्वारा लिया, को हमारे समक्ष उपस्थित मामले में पूर्वोक्त विचार-विमर्श को ध्यान में रखते हुए लागू नहीं किया जा सकता और जैसाकि उस मामले में हुआ, संबद्ध कर्मकार को टी बागान के पद से टी कंपनी के मुख्यालय को स्थानांतरित किया गया था ।"

20. वर्क मैन ऑफ बिजली बाड़ी टी स्टेट वाले मामले का निदेश निम्नलिखित निबंधनों के अंतर्गत था (वर्क मैन आफ बिजली बाड़ी टी स्टेट वाले मामले में प्रस्तुत रिपोर्ट से शब्दस: उद्धृत) :-

"(क) क्या बिजली बाड़ी टी स्टेट, हूगरीजन, पोस्ट हूगरीजन, जिला डिब्रूगढ़ का प्रबंध तंत्र श्री शंकर दत्ता, हजिरा को मोहर्र की सेवा से बर्खास्त किए जाने से न्यायसंगत है या नहीं ।

(ख) यदि नहीं, तो क्या वह संपूर्ण पिछले वेतन या उसके बदले में अन्य अनुतोषों के साथ पुनर्नियुक्ति का हकदार है ?"

21. गुवाहाटी उच्च न्यायालय ने वर्कमैन ऑफ बिजली बाड़ी टी स्टेट वाले मामले में इस आधार पर सेवा से बर्खास्तगी के बाबत निदेश पर कर्मकार की बर्खास्तगी को दोषपूर्ण इस आधार पर अभिनिर्धारित किया कि आरोप स्थानांतरण आदेश पर आधारित थे, जो कि अवैध था । संक्षेप में इस मामले में भी कर्मकार का यही पक्षकथन है । यह न्यायालय बिल्कुल भी नहीं कहना चाहता कि स्थानांतरण आदेश विधिमान्य है या अविधिमान्य ।

22. श्री दीप्तिमान सिंह ने यह दर्शित करने का प्रयास किया कि कंपनी के प्रमाणित स्थायी आदेश में किसी अंतरराज्यीय स्थानांतरण का उपबंध समाविष्ट नहीं है । इसके विपरीत श्री शेखर श्रीवास्तव ने निवेदन किया कि यह उपबंध राज्य के बाहर किसी अंतरण की अनुज्ञा प्रदान नहीं करते । विद्वान् काउंसेल द्वारा अन्य विवाद्यकों को भी उठाने का प्रयास किया गया । यह न्यायालय वर्तमान याचिका में उन मामलों पर विचार करने के लिए आनत नहीं है, चूंकि इस न्यायालय के विचार में यह मामला श्रम न्यायालय को निदेश के संपूर्ण विनिर्धारण के लिए वापस भेजा जाना चाहिए । श्रम न्यायालय प्रथमत: स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता का परीक्षण करेगा और तत्पश्चात् निर्दिष्ट बर्खास्तगी आदेश की विधिमान्यता का विनिर्धारण करने के लिए अग्रसर होगा । निर्दिष्ट बर्खास्तगी आदेश और स्थानांतरण आदेश की विधिमान्यता को पृथक् नहीं किया जा सकता । इन दोनों का एक साथ विनिर्धारण किया जाना अपेक्षित है ।

23. परिणामस्वरूप, आक्षेपित अधिनिर्णय और साथ ही जांच कार्रवाई की विधिमान्यता के संबंध में बिंदु का निस्तारण किए जाने के प्रयोजनार्थ पृथक् रूप से पारित आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य हैं । यद्यपि, तारीख 12 सितंबर, 2017 के उक्त आदेश को नियोजकों द्वारा औपचारिक रूप से चुनौती नहीं दी गई है । वह आदेश प्रथम दृष्टि में ही अवैध है और उसको बनाए रखे जाने की अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती ।

24. परिणामस्वरूप, यह रिट याचिका भागत: मंजूर की जाती है । गौतमबुद्ध नगर, नोएडा के श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी द्वारा 2018 के न्यायनिर्णयन मामला संख्या 33 में पारित तारीख 27 जुलाई, 2018 का आक्षेपित आदेश (जिसे तारीख 6 सितंबर, 2018 को प्रकाशित किया गया) और श्रम न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त न्यायनिर्णयन मामले में तारीख 12 सितंबर, 2017 को पारित आदेश अभिखंडित किए जाते हैं । तारीख 8 जुलाई, 2016 का निदेश मान्य ठहराया जाता है । श्रम न्यायालय विधि अनुसार निदेश का पुनर्निर्धारण करने के लिए अग्रसर होगा और उसको दोनों पक्षों को सुनने के पश्चात् और इस निर्णय में समाविष्ट मार्गदर्शक सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए, अगले छह माह की अवधि के भीतर निर्णीत करने का प्रयास करेगा । आगे यह भी आदेशित किया जाता है कि नियोजकों द्वारा तारीख 27 नवंबर, 2018 के अंतरिम आदेश का अनुपालन करते हुए श्रम न्यायालय ने जमा कराई गई 50,000/- रुपए की राशि में से जिस 25,000/- रुपए की राशि का संदाय कर्मकार को किया गया है, को कर्मकार से वसूल किया जाएगा और अधिशेष 25,000/- रुपए, जिसका निवेश राष्ट्रीयकृत बैंक में किया गया है, उद्भूत ब्याज के साथ तुरंत वापस निकाला जाएगा और नियोजकों को वापस लौटा दिया जाएगा । लागत के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जाता ।

याचिका भागत: मंजूर की गई ।

शु.

सुष्मिता साहा मजूमदार

बनाम

सुशांत साहा

(2017 की प्रथम अपील संख्या 48)

तारीख 17 मार्च, 2020

न्यायमूर्ति संपत्ति चटर्जी और न्यायमूर्ति मनोजित मंडल

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1)(i-क)(i-ख) – पति द्वारा क्रूरता और परित्याग के आधार पर विवाह-विच्छेद की याचिका – पति द्वारा यह अभिकथित किया जाना कि पत्नी के अपने सहकर्मियों के साथ अवैध संबंध थे, वह उसके साथ शारीरिक संबंध बनाने से इनकार करती थी और विवाह पूर्व उपनाम का प्रयोग विवाह के पश्चात् भी करती रही – पति द्वारा विवाह-विच्छेद याचिका में किसी ऐसे व्यक्ति का उल्लेख न किया जाना जिसके साथ पत्नी के अवैध संबंध रहे हों – पत्नी द्वारा विवाह पूर्व उपनाम का प्रयोग गलत नहीं ठहराया जा सकता क्योंकि वह कामकाजी महिला है – पति द्वारा क्रूरता और परित्याग का पक्षकथन साबित करने में असफल रहना और पत्नी को वैवाहिक घर वापस लाने का कोई प्रयास न किया जाना – विवाह-बंधन को पृथक्-पृथक् घटनाओं के आधार पर भंग नहीं किया जा सकता – विवाह-विच्छेद की डिक्री प्रदान नहीं की जा सकती ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि 2014 के वैवाहिक वाद संख्या 3918 के याची/पति का विवाह प्रत्यर्थी/पत्नी के साथ तारीख 24 फरवरी, 2012 को हिंदू रीति-रिवाजों और प्रथाओं के अनुसार संपन्न हुआ था । याची माजू स्थित आर. एन. बसु हाई स्कूल में भौतिक विज्ञान का शिक्षक है । वह अपने माता-पिता, जो वरिष्ठ नागरिक हैं, का एकमात्र पुत्र है । प्रत्यर्थी भी उसी विद्यालय में शिक्षिका थी । तत्पश्चात्, उसको तारीख 20 दिसंबर, 2013 से दोमपुर स्थित कोलोरा हाई स्कूल को

स्थानांतरित कर दिया गया । याची प्रत्यर्थी से प्रेम और अनुराग होने के कारण उसकी इच्छाओं का सम्मान करता था और उसकी सनक का अनदेखा करता रहता था । किंतु प्रत्यर्थी दिन प्रतिदिन संवेदनहीन, क्रूर, अयुक्तियुक्त और अड़ियल होती चली गई । आरंभिकतः, वह अपने माता-पिता के 4/2, खेत्र चटर्जी लेन, सलकिया, हावड़ा स्थित घर में अपने विद्यालय में सेवाएं देने के बहाने निवास करती रही, किंतु बाद में उसने अनेक बहानों के आधार पर याची या उसके परिजनों को कोई भी औपचारिक सूचना देने की परवाह करना भी बंद कर दिया । वह किसी सामान्य या निरर्थक पूछताछ पर भी याची के साथ अपने विवाह के संबंध में अत्यधिक कठोर और कड़ी प्रतिक्रियाएं देने लगी । उसने कभी भी अपने पति के साथ प्यार और आदर वाला व्यवहार नहीं किया । वह परिवार में गंभीर रूप से शांति भंग करती थी और याची के चरित्र के विरुद्ध आरोप लगाती थी और इस प्रकार उसने उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा को भी नुकसान पहुंचाया । आरंभिकतः, याची ने उसके इस व्यवहार का अनदेखा किया, किंतु अंततोगत्वा उसके इस व्यवहार के कारण याची का जीवन दयनीय होता चला गया । याची शर्म के कारण प्रत्यर्थी के इस प्रकार के आचरण के बारे में उसके माता-पिता को भी नहीं बता सका, चूंकि याची के माता-पिता प्रत्यर्थी के प्रति अत्यधिक अनुराग रखते थे और उनके दुखी और परेशान हो जाने की आशंका थी । पति का एक अन्य पक्षकथन यह है कि पत्नी की आयु उससे लगभग आठ वर्ष अधिक थी । विवाह के समय भी उसकी आयु अधिक थी । उसके लिए बाद में गर्भधारण करना कठिन हो जाता । इसलिए, पति यथाशीघ्र उससे एक संतान चाहता था, किंतु पत्नी की ऐसी इच्छा नहीं थी और वह किसी न किसी बहाने गर्भधारण से बचती रही, चूंकि उसके अपने अनेक सहकर्मियों के साथ अवैध संबंध थे । इसके पश्चात् उसने एक असत्य अभिवाक् का आश्रय लेते हुए कि उसको अपने वृद्ध माता-पिता की देखभाल करनी है, यद्यपि उसके माता-पिता अपने पुत्र के साथ रहते हैं जो उनकी देखभाल करता है, अपने पति का घर छोड़ दिया और अपने माता-पिता के घर चली गई । उसने अपने पति पर अपने माता-पिता के मकान स्थित 6 और 7/1/1, पंजाबी पाड़ा लेन, सलकिया के निकट

स्थित फ्लैट में रहने के लिए भी दबाव डाला । चूंकि उसका पति अर्थराइटिस की विभिन्न समस्याओं से जूझ रहा था और अंततः वह अपनी पत्नी के दबाव के सामने झुक गया और अपने सास-ससुर के मकान के निकट स्थित किराए के फ्लैट में रहने लगा । पत्नी लगभग पूरे दिन और रात अपने माता-पिता के मकान में रहती थी और पति को अपनी देखभाल स्वयं ही करनी पड़ती थी । पति को चिकित्सकों ने सलाह दी कि उसे अपनी तंत्रिका संबंधी समस्याओं के संबंध में हावड़ा से माजू की थका देने वाली यात्रा से बचना चाहिए, अन्यथा उनको उसकी रीढ़ की हड्डी की शल्य चिकित्सा करनी होगी । पत्नी ने अपने व्यवहार में कोई सुधार नहीं किया और उसने अधिक क्रूरता का बर्ताव आरंभ कर दिया । वह अपने पति को पसंद नहीं करती थी और उसके प्रत्येक कार्य में त्रुटि खोजने का प्रयास करती थी । प्रत्यर्थी अपने माता-पिता के घर में रहने लगी थी और वह किराए के घर में भी कभी नहीं आती थी । पति तारीख 9 अगस्त, 2012 के पश्चात् तारीख 10 अगस्त, 2012 से मध्य माजू जगतबल्लभपुर, हावड़ा स्थित सुबोध कुमार मंडल के घर में पृथक् रूप से रहने के लिए विवश हो गया । पत्नी/प्रत्यर्थी ने पति के प्रति विवाह के पश्चात् से ही कभी भी प्रेम, सहानुभूति, निकटता और परस्पर आदर की कभी भी परवाह नहीं की, इसलिए पति/याची ने विवाह-विच्छेद के लिए 2014 का वैवाहिक वाद संख्या 3918 फाइल किया । पत्नी/प्रत्यर्थी वाद में उपस्थित हुई और उसने समस्त तात्विक अभिकथनों से इनकार करते हुए अपना लिखित कथन फाइल किया कि याची ने विवाह के पश्चात् हावड़ा जिला के भीतर उसके लिए किसी भी मकान या निवास स्थान का प्रबंध नहीं किया, इसलिए उसने पति से विचार-विमर्श के पश्चात् एक किराए के फ्लैट का इंतजाम कर लिया है और दोनों उस फ्लैट में निवास कर रहे हैं और अपना वैवाहिक जीवन शांतिपूर्वक व्यतीत कर रहे हैं, वह अपने माता-पिता की देखभाल नहीं करती बल्कि अपने पति की देखभाल करती है और विद्यालय से वापस आने के पश्चात् समस्त कार्य करती है और याची को उससे कभी भी कोई शिकायत नहीं रही और वह बिना किसी विवाद के प्रत्यर्थी के साथ जीवन-यापन करता रहा है । याची/पति ने बोलपुर के अपर जिला

न्यायाधीश के न्यायालय में 2013 का एक अन्य वैवाहिक वाद संख्या 53 फाइल किया । इस वाद को पूर्व आदेश के सिद्धांत द्‌वारा बाधित अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए चूंकि पति ने हावड़ा के न्यायालय में नया वाद फाइल कर दिया है । पत्नी/प्रत्यर्थी द्‌वारा यह भी अभिकथित किया गया कि वह एक शिक्षित और सुसंस्कृत स्त्री है और परिवार के समस्त सदस्य उस पर निर्भर हैं और उसका अपने पति के साथ विवाह प्रेम संबंध के फलस्वरूप हुआ और विवाह के कुछ ही दिनों पश्चात् जब प्रत्यर्थी ने अपनी मौसी के फ्लैट में अस्थायी रूप से निवास करना आरंभ किया, तो उसको ज्ञात हुआ कि याची एक आत्म केंद्रित व्यक्ति है और वह सदैव अपने परिवार के सदस्यों और मित्रों से बातचीत के प्रयोजनार्थ दूरभाष पर व्यस्त रहता है । उसने प्रत्यर्थी से कहा कि वह अत्यधिक आर्थिक तनाव का सामना कर रहा है और वह अपने खर्चे पर बेहतर जीवन व्यतीत करने के लिए भी सहमत हो गया । याची 2012 के अप्रैल माह में कमर दर्द के कारण गंभीर रूप से बीमार हो गया और शय्याग्रस्त हो गया और उस समय पत्नी ने उसके उपचार के लिए समस्त प्रबंध किए और व्यक्तिगत रूप से उसकी देखभाल की । उसने सदैव समस्त गृहोपयोगी कर्तव्यों का निर्वहन किया है, जैसाकि देखभाल के समस्त कार्यों सहित नाश्ता, दोपहर का भोजन, भोजन का डिब्बा इत्यादि तैयार करना और तत्पश्चात् पढ़ाने के लिए अपने विद्‌यालय जाना । पति सदैव उसके कार्य में त्रुटियां निकालने का कार्य करता था और सामान को फेकते हुए उसको अपशब्द कहता था । 2012 के जुलाई माह में याची के परिवार के सदस्य उसके द्‌वारा किराए पर लिए गए निवास पर आए और उन्होंने भी प्रत्यर्थी के साथ अभद्रतापूर्ण व्यवहार किया और पति ने भी उससे बातचीत बंद कर दी । याची ने अपने परिजनों के सिखाने पर प्रत्यर्थी को माजू स्थित किराए के मकान में निवास करने के लिए विवश किया और उसने तारीख 15 अगस्त, 2012 को प्रत्यर्थी के भाई को बोलपुर से बुलाया और उससे कहा कि वह प्रत्यर्थी से विवाह-विच्छेद करना चाहता है और जब प्रत्यर्थी ने उससे संपर्क किया तो उसने प्रत्यर्थी को अपशब्द कहे और उसको बोलपुर न जाने के लिए धमकाया । उसने याची के साथ रहने के लिए अपने स्तर

पर सर्वोत्तम प्रयास किए किंतु वह याची और उसके परिजनों द्वारा उसके प्रति की गई क्रूरता के कारणवश मानसिक रूप से असंतुलित हो गई और इस निष्कर्ष पर पहुंची कि उसके जीवन को खतरा है । उसने इन सभी बातों के बावजूद वाद खारिज किए जाने की प्रार्थना की । जिला हावड़ा के द्रुत गति न्यायालय संख्या 1 के विद्वान् अपर जिला और सेशन न्यायाधीश श्रीमती मऊ चटर्जी द्वारा तारीख 19 दिसम्बर, 2016 के निर्णय और डिक्री द्वारा वैवाहिक वाद को डिक्री कर दिया गया । इस निर्णय और डिक्री से व्यथित होकर प्रस्तुत अपील फाइल की गई । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – हम विद्वान् अधिवक्ताओं द्वारा दी गई दलीलों पर विचारोपरांत और अभिलेख के परिशीलन के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि स्वीकृततः पक्षों के मध्य विवाह तारीख 24 फरवरी, 2012 के हिंदू विवाह अधिनियम के अंतर्गत संपन्न हुआ था । यह भी स्वीकृत तथ्य है कि विवाह के छह माह के पश्चात् दोनों पक्षों ने पृथक् रूप से रहना आरंभ कर दिया था । यह भी स्वीकृत तथ्य है कि यह मामला पक्षों के मध्य प्रेम विवाह का मामला है और प्रत्यर्थी/पति को इस बात की पूर्ण जानकारी थी कि अपीलार्थी/पत्नी उम्र में उससे आठ वर्ष बड़ी है, किंतु इसके बावजूद दोनों ने पूर्वोक्त तारीख पर विवाह किया । वादपत्र के पैरा 13 से यह भी स्पष्ट है कि अपीलार्थी/पत्नी ने माजू स्थित मकान तारीख 9 अगस्त, 2012 को छोड़ दिया था । तत्पश्चात् प्रत्यर्थी/पति मध्य माजू स्थित श्री सुबोध कुमार मंडल के मकान में पृथक् रूप से निवास कर रहा है, जो हावड़ा जिला में जगतबल्लभपुर पुलिस थाना के अंतर्गत है । हम इस तथ्य का भी अनदेखा नहीं कर सकते कि प्रत्यर्थी/पति मानसिक क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को अपने प्रकथनों में या परिसाक्ष्य में साबित करने में विफल रहा । यह तो विद्वान् न्यायाधीश की भूमिका थी, जिन्होंने आक्षेपित निर्णय में स्वयं पहल करते हुए परित्याग का मामला बना दिया, यद्यपि प्रत्यर्थी/पति क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन साबित करने में दयनीय रूप से विफल रहा । हम इस तथ्य के बाबत भी अनभिज्ञ भी नहीं बने रह

सकते कि पति द्वारा पत्नी को वापस लाने के लिए कोई प्रयास कभी नहीं किया गया, इसलिए परित्याग का अभिकथित पक्षकथन, जैसाकि वादपत्र में किया गया है, को साबित कर पाने में प्रत्यर्थी/पति विफल रहा है । वादी का यह कर्तव्य होता है कि वह साक्ष्य प्रस्तुत करने के द्वारा अपने पक्षकथन को साबित करे । दुर्भाग्य से पति क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को साबित कर पाने में पूर्णतया विफल रहा । यहां पर यह उल्लेख किया जाना महत्वपूर्ण होगा कि विद्वान् न्यायाधीश ने आक्षेपित निर्णय में ही अभिनिर्धारित किया है कि 'क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को साबित करना अत्यंत कठिन है' । किसी विवाह-बंधन को मात्र पृथक्-पृथक् घटनाओं के आधार पर भंग नहीं किया जा सकता । विवाह-बंधन पारिवारिक बंधन होता है । यह पति और पत्नी दोनों का कर्तव्य होना चाहिए कि वे इस बंधन को बनाए रखें, बजाय इसके कि पृथक्-पृथक् और बिखरी हुई घटनाओं के आधार पर उसको भंग करें । वैवाहिक जीवन में सामान्य विवाह, जो दिन-प्रतिदिन के जीवन में घटित होते हैं, मानसिक क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ पर्याप्त आधार नहीं होंगे । हम इस तथ्य का भी अनदेखा नहीं कर सकते कि प्रत्यर्थी/पति अपने इस पक्षकथन को साबित कर पाने में कि अपीलार्थी/पत्नी के अपने सहकर्मियों के साथ अवैध संबंध थे या अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी/पति के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करने से इनकार कर दिया था, दयनीय रूप से विफल रहा है । वे व्यक्ति, जिनके साथ अपीलार्थी/पत्नी के अवैध संबंध थे, को भी कार्रवाई में पक्ष नहीं बनाया गया । इसके अतिरिक्त, किसी ऐसे व्यक्ति के नाम का उल्लेख नहीं किया गया है जिसके साथ अपीलार्थी/पत्नी के इस प्रकार के अवैध संबंध चल रहे हैं । हम याची साक्षी-1 की प्रतिपरीक्षा के कुछ सुसंगत भागों का भी अनदेखा नहीं कर सकते, जैसाकि ऊपर उद्धृत किया गया है । हम अपीलार्थी/पत्नी द्वारा विवाह के पूर्व के उपनाम के प्रयोग में भी कोई त्रुटि नहीं पाते, क्योंकि वह एक कामकाजी महिला है और उसके उपनाम (मजूमदार) का प्रयोग अनेक शासकीय अभिलेखों में हुआ है । हम अपीलार्थी/पत्नी की आयु के संबंध में विद्वान् न्यायाधीश द्वारा की

गई मताभिव्यक्ति का भी अधिमूल्यन नहीं करते । हमको इस बात को ध्यान में रखना होगा कि पक्षों के मध्य विवाह कोई माता-पिता द्वारा किया गया सुनियोजित विवाह नहीं था बल्कि यह प्रेम विवाह था और चूंकि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के मध्य मानसिक समायोजन और सामंजस्य विकसित हो चुका था, इसलिए प्रेमवश और मानसिक समायोजनवश विवाह-बंधन के संबंध का अंत हो गया जबकि प्रत्यर्थी/पति दयनीय रूप से क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को साबित कर पाने में विफल रहा, अत: आक्षेपित निर्णय पक्षों के मध्य आयु के अंतर को ध्यान में रखते हुए पारित किया गया, इसलिए आक्षेपित निर्णय में सभी स्थानों पर अपीलार्थी/पत्नी की आयु का उल्लेख इस बात को भली-भांति जानते हुए किया गया है कि पत्नी की आयु पति की आयु से 8 वर्ष अधिक थी और मानसिक रूप से जुड़ाव वाला विवाह, जहां आयु कोई कारक नहीं होती या कोई वर्जन सृजित नहीं करती, संपन्न हुआ था । उपरोक्त चर्चा और मताभिव्यक्ति पर विचारोपरांत और अभिलेख का सावधानीपूर्वक परिशीलन किए जाने के पश्चात् और विद्वान् अधिवक्ताओं द्वारा निर्दिष्ट विनिश्चयों पर विचारोपरांत हमारी सुविचारित राय यह है कि चूंकि प्रत्यर्थी/पति क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को साबित करने में दयनीय रूप से विफल रहा है, इसलिए, हमको यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि आक्षेपित निर्णय और विनिश्चय को विधि की दृष्टि में और साथ ही मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मान्य नहीं ठहराया जा सकता । परिणामस्वरूप, आक्षेपित निर्णय और आदेश को लागत के संबंध में किसी आदेश के बिना अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । (पैरा 15, 16, 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 24 और 25)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2019] 2019 (3) सी. एल. जे. (कलकत्ता) 181 :
माइकल हेम्ब्रेम बनाम **रत्ना गुप्ता (हेम्ब्रेम)** ; 13

[2013] ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2176 :
केसरी निवास राव बनाम **डी. ए. दीपा** ; 6

[2010] 2010 (1) सी. एच. एन. (कलकत्ता) 534 :
शम्पा मुखर्जी बनाम **प्रणव मुखर्जी** ; 6

[2009] ए. आई. आर. 2009 कलकत्ता 167 :
अनंनता बनाम **रामचंदर** ; 5

[2007] (2007) 7 एस. सी. सी. 511 :
समर घोष बनाम **जया घोष** ; 12

[2004] 2004 (3) सी. एच. एन. 12 :
अभिजीत दास गुप्ता बनाम **रीता दास गुप्ता** ; 6

[2002] (2002) 5 एस. सी. सी. 706 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 2582 :
प्रवीण मेहता बनाम **इंद्रजीत मेहता** ; 12

[2002] (2002) 2 एस. सी. सी. 296 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 576 :
जी. वी. एन. कामेश्वर राव बनाम **जी. जबीली** । 12

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2017 की प्रथम अपील संख्या 48.

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13 के अधीन अपील ।

याची की ओर से सर्वश्री पिनाकी रंजन मित्रा और ज्योदीप बसू

प्रत्यर्थी की ओर से श्री सौनक भट्टाचार्या

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति संपत्ति चटर्जी ने दिया ।

न्या. चटर्जी – यह अपील जिला हावड़ा के द्रुत गति न्यायालय संख्या 1 की विद्वान् अपर जिला और सेशन न्यायाधीश श्रीमती मऊ चटर्जी द्वारा 2014 के वैवाहिक वाद संख्या 3918 में तारीख 19 दिसंबर, 2016 को पारित निर्णय और डिक्री से उद्भूत हुई है ।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार है :-

"2014 के वैवाहिक वाद संख्या 3918 के याची/पति का विवाह प्रत्यर्थी/पत्नी के साथ तारीख 24 फरवरी, 2012 को सलकिया स्थित इंदिरा भवन में हिंदू रीति-रिवाजों और प्रथाओं के अनुसार संपन्न हुआ था । याची माजू में स्थित आर. एन. बसु हाई स्कूल में भौतिक विज्ञान का शिक्षक है । वह अपने माता-पिता, जो वरिष्ठ नागरिक हैं, का एकमात्र पुत्र (संतान) है । प्रत्यर्थी भी उसी विद्यालय में शिक्षिका थी । तत्पश्चात्, उसको (प्रत्यर्थी को) तारीख 20 दिसंबर, 2013 से दोमपुर स्थित कोलोरा हाई स्कूल को स्थानांतरित कर दिया गया था । याची प्रत्यर्थी से प्रेम और अनुराग होने के कारण उसकी इच्छाओं का सम्मान करता था और उसकी सनक का अनदेखा करता रहता था । किंतु प्रत्यर्थी दिन-प्रतिदिन संवेदनहीन, क्रूर, अयुक्तियुक्त और अड़ियल होती चली गई । आरंभिकत:, वह अपने माता-पिता के 4/2, खेत्र चटर्जी लेन, सलकिया, हावड़ा स्थित घर में विद्यालय में अपनी सेवाएं देने के बहाने निवास करती रही, किंतु बाद में उसने अनेक बहानों के आधार पर याची या उसके परिजनों को कोई भी औपचारिक सूचना देने की परवाह करना भी बंद कर दिया । वह किसी भी सामान्य या निरर्थक पूछताछ पर भी याची के साथ अपने विवाह के संबंध में अत्यधिक कठोर और कड़ी प्रतिक्रियाएं देने लगी । उसने कभी भी अपने पति के साथ प्यार और आदर वाला व्यवहार नहीं किया । वह परिवार में गंभीर रूप से शांति भंग करती थी और याची के चरित्र के विरुद्ध आरोप लगाती थी और इस प्रकार उसने उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा को भी नुकसान पहुंचाया । आरंभिकत: याची ने उसके इस व्यवहार का अनदेखा किया किंतु अंततोगत्वा उसके इस व्यवहार के कारण याची का जीवन दयनीय होता चला गया । याची शर्म के कारण प्रत्यर्थी के इस प्रकार के आचरण के बारे में उसके माता-पिता को भी नहीं बता सका था, चूंकि याची के माता-पिता प्रत्यर्थी के प्रति अत्यधिक अनुराग रखते थे और उनके दुखी और परेशान हो जाने की आशंका थी ।

पति का एक अन्य पक्षकथन यह है कि पत्नी की आयु उससे लगभग आठ वर्ष अधिक थी । विवाह के समय भी उसकी आयु अधिक थी । उसके लिए बाद में गर्भधारण करना कठिन हो जाता । इसलिए, पति यथाशीघ्र उससे एक संतान चाहता था किंतु पत्नी की ऐसी इच्छा नहीं थी और वह किसी न किसी बहाने का आश्रय लेकर गर्भधारण से बचती रही, चूंकि उसके अपने अनेक सहकर्मियों के साथ अवैध संबंध थे । इसके पश्चात् उसने एक असत्य अभिवाक् का आश्रय लेते हुए कि उसको अपने वृद्ध माता-पिता की देखभाल करनी है यद्यपि उसके माता-पिता अपने पुत्र के साथ रहते हैं, जो उनकी देखभाल करता है, अपने पति का घर छोड़ दिया और अपने माता-पिता के घर चली गई । उसने अपने पति पर अपने माता-पिता के मकान स्थित 6 और 7/1/1, पंजाबी पाड़ा लेन, सलकिया के निकट स्थित एक फ्लैट में रहने के लिए भी दबाव डाला । चूंकि उसका पति अर्थराइटिस की विभिन्न समस्याओं से जुझ रहा था और अंततः वह अपनी पत्नी के दबाव के सामने झुक गया और अपने सास-ससुर के मकान के निकट स्थित किराए के फ्लैट में रहने लगा । पत्नी लगभग पूरे दिन और रात अपने माता-पिता के मकान में रहती थी और पति को अपनी देखभाल स्वयं ही करनी पड़ती थी । पति को चिकित्सकों ने सलाह दी कि उसे अपनी तंत्रिका संबंधी समस्याओं के संबंध में हावड़ा से माजू की थका देने वाली यात्रा से बचना चाहिए अन्यथा उनको उसकी रीढ़ की हड्डी की शल्य चिकित्सा करनी होगी । पत्नी ने अपने व्यवहार में कोई सुधार नहीं किया और उसने अधिक क्रूरता का बर्ताव आरंभ कर दिया । वह अपने पति को पसंद नहीं करती थी और उसके प्रत्येक कार्य में त्रुटि खोजने का प्रयास करती रहती थी । पत्नी ने पति और उसके परिजनों के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया । प्रत्यर्थी अपने माता-पिता के घर में रहने लगी थी और वह किराए के घर में भी कभी नहीं आती थी । पति तारीख 9 अगस्त, 2012 के पश्चात् तारीख 10 अगस्त, 2012 से मध्य माजू जगतबल्लभपुर, हावड़ा स्थित सुबोध कुमार मंडल के घर में पृथक् रूप से रहने के

लिए विवश हो गया । पत्नी/प्रत्यर्थी ने पति के प्रति विवाह के पश्चात् से ही कभी भी प्रेम, सहानुभूति, निकटता और परस्पर आदर करने की कभी भी परवाह नहीं की, इसलिए पति/याची ने विवाह-विच्छेद के लिए वाद फाइल किया है ।

इसके विपरीत पत्नी/प्रत्यर्थी वाद में उपस्थित हुई और उसने समस्त तात्विक अभिकथनों से इनकार करते हुए अपना लिखित कथन फाइल किया कि याची ने विवाह के पश्चात् से हावड़ा जिला के भीतर उसके लिए किसी भी मकान या निवास स्थान का प्रबंध नहीं किया, इसलिए उसने पति से विचार-विमर्श के पश्चात् एक किराए के फ्लैट का इंतजाम कर लिया है और दोनों उस फ्लैट में निवास कर रहे हैं और अपना वैवाहिक जीवन शांतिपूर्वक व्यतीत कर रहे हैं । उसने अपने माता-पिता कभी भी देखभाल नहीं की बल्कि वह अपने पति की देखभाल करती है और वह विद्यालय से वापस आने के पश्चात् समस्त कार्य करती है और याची को उससे कभी भी कोई शिकायत नहीं रही और वह बिना किसी विवाद के प्रत्यर्थी के साथ जीवन-यापन करता रहा है ।

याची/पति ने बोलपुर के अपर जिला न्यायाधीश के न्यायालय में 2013 का एक अन्य वैवाहिक वाद संख्या 53 फाइल किया । इस वाद को पूर्व आदेश के सिद्धांत द्वारा बाधित अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए, चूंकि पति ने हावड़ा के न्यायालय में नया वाद फाइल कर दिया है ।

पत्नी/प्रत्यर्थी द्वारा यह भी अभिकथित किया गया कि वह एक शिक्षित और सुसंस्कृत स्त्री है और परिवार के समस्त सदस्य उस पर निर्भर रहते हैं और उसका अपने पति के साथ विवाह संबंध के फलस्वरूप हुआ और विवाह के कुछ ही दिनों पश्चात् जब प्रत्यर्थी ने अपनी मौसी के फ्लैट में अस्थायी रूप से निवास करना आरंभ किया, तो उसको ज्ञात हुआ कि याची एक आत्म केंद्रित व्यक्ति है और वह सदैव अपने परिवार के सदस्यों और मित्रों से बातचीत के प्रयोजनार्थ दूरभाष पर व्यस्त रहता है । उसने प्रत्यर्थी से कहा कि वह अत्यधिक आर्थिक तनाव का सामना कर रहा है

और वह अपने खर्चे पर बेहतर जीवन व्यतीत करने के लिए भी सहमत हो गया था ।

याची 2012 के अप्रैल माह में कमर में दर्द के कारण गंभीर रूप से बीमार हो गया और शय्याग्रस्त हो गया और उस समय पत्नी ने उसके उपचार के लिए समस्त प्रबंध किए और व्यक्तिगत रूप से उसकी देखभाल की । उसने सदैव समस्त गृहोपयोगी कर्तव्यों का निर्वहन किया है, जैसाकि देखभाल के समस्त कार्यों सहित नाश्ता, दोपहर का भोजन, भोजन का डब्बा इत्यादि तैयार करना और तत्पश्चात् पढ़ाने के लिए अपने विद्यालय जाना । पति सदैव उसके कार्य में त्रुटियां निकालने का कार्य करता था और सामान को फेकते हुए उसको अपशब्द कहता था । 2012 के जुलाई माह में याची के परिवार के सदस्य उसके द्वारा किराए पर लिए गए निवास पर आए और उन्होंने प्रत्यर्थी के साथ अभद्रतापूर्व व्यवहार किया और पति ने भी उससे बातचीत बंद कर दी । याची ने अपने परिजनों के सिखाने पर प्रत्यर्थी को या माजू स्थित किराए के निवास में रहने के लिए विवश किया और उसने तारीख 15 अगस्त, 2012 को प्रत्यर्थी के भाई को बोलपुर से बुलाया और उससे कहा कि वह प्रत्यर्थी से विवाह-विच्छेद करना चाहता है और जब प्रत्यर्थी ने उससे संपर्क किया तो उसने प्रत्यर्थी को अपशब्द कहे और उसको बोलपुर न जाने के लिए धमकाया । उसने याची के साथ रहने के लिए अपने स्तर पर सर्वोत्तम प्रयास किए किंतु वह याची और उसके परिजनों द्वारा उसके प्रति की गई क्रूरता के कारणवश मानसिक रूप से असंतुलित हो गई और इस निष्कर्ष पर पहुंची कि उसके जीवन को खतरा है । उसने इन सभी बातों के बावजूद वाद का खारिज किए जाने की प्रार्थना की ।"

विद्वान् अधिवक्ताओं के निवेदन

3. अपीलार्थी/पत्नी की ओर से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री पिनाकी रंजन मित्रा ने निवेदन किया कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के मध्य विवाह तारीख 24 फरवरी, 2012 को हिंदू रीति-रिवाजों और

संस्कारों के अनुसार संपन्न हुआ था । तत्पश्चात्, अप्रैल माह में किसी समय प्रत्यर्थी/पति को यह ज्ञात हुआ कि अपीलार्थी/पत्नी के किसी अन्य व्यक्ति के साथ अवैध संबंध हैं । यह तथ्य उल्लेखनीय है कि पत्नी पति से आयु में 8 वर्ष बड़ी है किंतु यह प्रेम विवाह था । श्री मित्रा ने इस न्यायालय का ध्यान प्रत्यर्थी/पति याची साक्षी-1 की प्रतिपरीक्षा के एक भाग की ओर आकर्षित किया जिसे नीचे उद्धृत किया गया है :-

"मैंने विवाह के पश्चात् हावड़ा जिला के पुलिस थाना गोलाबाड़ी के पंजाबी पाड़ा लेन स्थित मकान संख्या 10/1 में रहना आरंभ कर दिया था । यह मकान सुष्मिता के नातेदार का है और हम इस मकान में रखरखाव के लागत के संदाय के आधार पर रह रहे थे । कुछ समय पश्चात् हमने जिला हावड़ा के पुलिस थाना गोला बाड़ी के पंजाबी पाड़ा लेन स्थित मकान संख्या 7/1/1 किराए पर ले लिया । किराए का करार हम दोनों के नाम में था । जब मैं पहले वाले मकान में रहता था, तब रीढ़ की हड्डी में पीड़ा से ग्रसित था । मुझे सलकिया मोहल्ले के आसपास के क्षेत्रों की स्पष्ट जानकारी नहीं है ।

ऐसी कोई बात नहीं है कि सुष्मिता मुझे डा. अशोक दास के पास ले गई थी -

मैं डा. अशोक दास का पता नहीं बता सकता । मैं विवाह के पूर्व हड्डीरोग के शल्य चिकित्सक डा. आर. के. दास के पास जाता था । मैं उनके द्वारा लिखे गए औषधि के पर्चे फाइल कर सकता हूं । मैंने सिटी लाइफ अस्पताल में डा. असित सेनापति से भी परामर्श किया था । मैं उनके पास अपनी पत्नी के साथ जाता था । मेरे पास उनके द्वारा लिखे गए औषधि के पर्चे हैं । उन्होंने मुझे पूर्ण विश्राम करने का परामर्श दिया था । मैंने पहले वाले मकान में कुछ दिनों तक विश्राम किया था ।"

उसने एक अन्य शिक्षक याची साक्षी-2 के परिसाक्ष्य को भी निर्दिष्ट किया । याची साक्षी-2 की मुख्य परीक्षा और प्रतिपरीक्षा के कुछ भागों को नीचे उद्धृत किया गया है -

"**याची साक्षी-2 की मुख्य परीक्षा** – मुझे एक समन प्राप्त हुआ है । मैं सुशांत साहा को जानता हूं । वह मेरा सहकर्मी था । मैं सुष्मिता मजूमदार को भी जानता हूं । वह भी मेरी सहकर्मी है । मैंने अपनी सेवा तारीख 8 अप्रैल, 2004 को माजू स्थित आर. एन. बसु हाई स्कूल से आरंभ की थी । सुशांत ने भी इसी विद्यालय में नवंबर, 2002 में सेवा आरंभ की थी । सुष्मिता मजूमदार ने इस विद्यालय में सेवा 1993 में आरंभ की थी । मेरे दोनों के साथ अच्छे संबंध थे । सुष्मिता मजूमदार का निवास सलकिया में है । मैं उसके घर अनेक बार गया हूं । सभी शिक्षक एक ही शिक्षक कक्ष में बैठा करते थे । सुष्मिता मजूमदार प्राण कृष्ण बाग के पास बैठा करती थी । वे 2007-2008 में सेवानिवृत्त हो गए थे । मुझे इस बात की जानकारी है कि सुष्मिता मजूमदार और सुशांत साहा का विवाह हो गया था और तत्पश्चात् उन्होंने विवाह-विच्छेद के लिए वाद फाइल किया था । मैंने सुष्मिता और प्राण कृष्ण बाग के मध्य संबंध के बारे में सुना था । जब मैं विद्यालय में सफाई का कार्य करता था तो मुझे (सफाई के दौरान) एक पत्र मिला था और मैं वह पत्र लाया हूं । यह वह पत्र है जिसे प्रदर्श संख्या 6 (जिसके संबंध में कोई आक्षेप नहीं किया गया) के रूप में चिह्नित किया गया है । मुझे इस बात की जानकारी है कि सुशांत रीढ़ की हड्डी में पीड़ा से ग्रसित था, जिस कारणवश वह विश्राम पर था । मैं उसके साथ चिकित्सक के पास अनेक अवसरों पर गया । वह विवाह के पश्चात् सलकिया स्थित मकान में किराए पर फरवरी, 2012 से रह रहा था । वह जुलाई-अगस्त, 2012 में माजू चला गया था । आज मैं जो कुछ भी कह रहा हूं, वह सत्य है ।

याची साक्षी-2 की प्रतिपरीक्षा – अब मेरी आयु 38 वर्ष है । मेरा मकान सुंदरवन के गोसाबा में स्थित है । अब मैं सोनारपुर में निवास कर रहा हूं । वर्ष 2002 से जब तक कि

मैं सेवा में सम्मिलित नहीं हो गया था, तब तक मुझे सुशांत और सुष्मिता के संबंध के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं था । जब मैंने सेवा आरंभ की, तो मुझे ज्ञात हुआ कि सुशांत विद्यालय के निकट एक किराए के मकान में निवास करता था । मैं भी उसके साथ निवास करता था । हमारे मध्य अच्छे संबंध थे । मुझे सुशांत और सुष्मिता के मध्य प्रेम संबंध के बारे में कोई जानकारी नहीं थी । मुझे सुशांत द्वारा उसके विवाह में आमंत्रित किया गया था । हो सकता है, सुष्मिता ने भी मुझे आमंत्रित किया हो ।

ऐसी कोई बात नहीं है कि हमारे विद्यालय से उनके विवाह में कोई भी नहीं गया था ।

मैं सुशांत के मकान को नहीं जाता था । मैं सुशांत और सुष्मिता के सलकिया स्थित मकान को भी नहीं गया । मैं उन चिकित्सकों के बारे में नहीं जानता जिनसे सुशांत ने सलकिया में परामर्श किया था । जब सुशांत विश्राम के पश्चात् माजू स्थित मकान में रहने लगा था, तब मैं उसके साथ पार्क क्लिनिक गया था और उसके कुछ समय पश्चात् उसने हुगली में होम्योपैथी का उपचार आरंभ कर दिया था । मैं कभी-कभी उसके साथ कार से भी जाता था । मुझे इस बात की कोई जानकारी नहीं है । मैं होम्योपैथी के चिकित्सक के नाम का स्मरण नहीं कर सकता । वह हुगली के भंडारहाटी का था ।"

श्री मेहता ने आगे दृढ़तापूर्वक दलील दी कि विद्वान् न्यायाधीश द्वारा एक तृतीय पक्षकथन भी पाया है, यद्यपि उस तृतीय पक्षकथन के बाबत वादपत्र में कोई आधार नहीं लिया गया ।

श्री मुखर्जी द्वारा दृढ़तापूर्वक यह दलील भी दी गई कि पति द्वारा पत्नी को वापस लाए जाने के बाबत कोई प्रयास कभी नहीं किया गया ।

श्री मित्रा द्वारा आगे इस बात पर जोर दिया गया कि चूंकि

प्रत्यर्थी/पति द्वारा पत्नी को वापस लाए जाने के बाबत कोई प्रयास नहीं किया गया, इसलिए पत्नी द्वारा परित्याग साबित नहीं किया जा सका । श्री मित्रा द्वारा यह दलील दी गई कि वे विवाह के पश्चात् मात्र छह माह की अवधि तक एक साथ रहे और इसलिए क्रूरता का पक्षकथन भी साबित नहीं किया जा सकता । साक्ष्य के आधार पर यह भी साबित नहीं किया जा सकता कि पत्नी माजू (पति के कार्यालय का स्थान) में भी निवास करना नहीं चाहती थी ।"

4. श्री मित्रा ने न्यायालय का ध्यान आक्षेपित निर्णय के एक भाग की ओर आकर्षित किया, जो फाइल का पृष्ठ संख्या 71 है और दलील दी कि विद्वान् न्यायाधीश ने स्वयमेव अभिनिर्धारित किया है कि क्रूरता और परित्याग को साबित किया जाना कठिन है । इस निर्णय के सुसंगत भाग को नीचे उद्धृत किया गया है :-

"याची/पति ने इस मामले को क्रूरता और परित्याग के आधार पर फाइल किया है । उसने अभिकथित किया है कि पत्नी उसकी उपेक्षा करती थी और उसके साथ भद्दी भाषा में गाली-गलौज करती थी । वह अपने माता-पिता के मकान में रहती थी और उसके अस्वस्थ होने के बाद भी देखभाल नहीं करती थी । वह संतान के लिए इच्छुक था किंतु पत्नी संतान नहीं चाहती थी । वह अपनी इच्छानुसार जीवनयापन करना चाहती है । अंततः, उसने उसका परित्याग कर दिया ।

पति के स्वास्थ्य के संबंध में उपेक्षा, भद्दी भाषा का प्रयोग और इसी प्रकार के अन्य प्रपीणनों को लिखित और मौखिक साक्ष्य द्वारा साबित करना अत्यधिक कठिन होता है क्योंकि कोई भी साक्षी अधिकांश समय घटनास्थल पर नहीं ठहरता । इन सभी बातों की परिकल्पना दोनों ही पक्षों की भावनाओं के आधार पर की जा सकती है और ये बातें मनोवैज्ञानिक होती हैं । इस प्रकार की क्रूरता और परित्याग के अभिकथनों का न्यायनिर्णयन केवल दोनों पक्षों द्वारा की गई स्वीकारोक्तियां और प्रस्तुत किए गए साक्ष्य की सहायता से किया जा सकता है । अनेक अवसरों पर विचारण के

समय न्यायाधीश द्वारा अवेक्षित पक्षों का आचरण और व्यवहार न्यायालय की सहायता करते हैं ।"

5. उन्होंने अपनी दलीलों के समर्थन में इस माननीय न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा श्रीमती **अनंता** बनाम **रामचंदर**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया ।

6. श्री मित्रा ने क्रूरता और परित्याग के अभिवचनों को साबित न किए जाने के बिंदु पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **केसरी निवास राव** बनाम **डी. ए. दीपा**[2] वाले मामले में दिए गए निर्णय के पैरा 12 और 13, **शम्पा मुखर्जी** बनाम **प्रणव मुखर्जी**[3] वाले मामले में दिए गए निर्णय के पैरा 11 और 12 और **अभिजीत दास गुप्ता** बनाम **रीता दास गुप्ता**[4] वाले मामले में दिए गए निर्णय के पैरा 12 और 19 का अवलंब लिया ।

7. इस प्रकार, श्री मित्रा ने अपनी दलीलों को समाप्त करते हुए दृढ़तापूर्वक निवेदन किया कि प्रत्यर्थी/पति अपने प्रकथनों में अथवा परिसाक्ष्य में और साथ ही दस्तावेजी साक्ष्य के आधार पर क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को साबित कर पाने में दयनीय रूप से विफल रहा है । इसलिए, न्यायालय को आक्षेपित निर्णय और आदेश को अपास्त कर देना चाहिए ।

8. इसके विपरीत प्रत्यर्थी/पति की तरफ से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री सप्तनगसु बसु ने दृढ़तापूर्वक दलील दी कि विवाह तारीख 24 फरवरी, 2012 को हिंदू रीति-रिवाजों के अंतर्गत संपन्न हुआ था और दोनों पक्ष मात्र छह माह तक एक साथ रहे ।

9. उन्होंने आगे निवेदन किया कि चूंकि प्रत्यर्थी/पति मेरुदंड रोग की समस्या से ग्रसित था, इसलिए उसको हड्डीरोग चिकित्सक द्वारा

---

[1] ए. आई. आर. 2009 कलकत्ता 167.

[2] ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2176.

[3] 2010 (1) सी. एच. एन. (कलकत्ता) 534.

[4] 2004 (3) सी. एच. एन. 12.

हावड़ा से माजू की लंबी और पीड़ादायक यात्रा न करने की सलाह दी गई थी, अन्यथा भी याची को मेरुदंड की शल्य चिकित्सा करानी पड़ सकती थी । श्री बसु ने वादपत्र के पैरा 10 के कतिपय भाग को निर्दिष्ट किया, जिसे नीचे उद्धृत किया गया है :-

"... अब यह तथ्य शेष रह जाता है कि याची को चिकित्सकों द्वारा अर्थराइटिस/तंत्रिका संबंधी समस्याओं के कारण हावड़ा से माजू की पीड़ादायक यात्रा से बचने की सलाह दी गई थी, अन्यथा उसको मेरुदंड की शल्य चिकित्सा करानी पड़ सकती थी ।"

10. श्री बसु ने अपीलार्थी/पत्नी की प्रतिपरीक्षा के कतिपय भाग को भी निर्दिष्ट किया, जिसे नीचे उद्धृत किया गया है :-

"... मैंने माजू स्थित आर. एन. बसु हाई स्कूल में तारीख 1 फरवरी, 1993 से सेवा आरंभ की थी । मैंने इस विद्यालय से तारीख 19 दिसंबर, 2013 को त्यागपत्र दे दिया था । मैं भूगोल और इतिहास में परास्नातक हूं । मैं कानून नहीं जानती । मैंने शपथपत्र में अपने वकील की सहायता से तथ्यों का उल्लेख किया है ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि यह कहना असत्य है कि हमने पंजबी पाड़ा लेन स्थित मकान संख्या 7/1/1 का इंतजाम नहीं किया था ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि यह असत्य है कि मैं हावड़ा में किसी स्थान का इंतजाम नहीं कर सकती थी । इसमें कोई संदेह नहीं कि यह असत्य है कि मुझे अपने पति की देखभाल करना पसंद नहीं था और मैं विद्यालय से वापस लौटने के पश्चात् घर के कार्य किया करती थी और इसमें मेरे पति को कोई आपत्ति नहीं थी और मेरा पति बिना किसी विवाद के मेरे साथ रहना चाहता है ।

मैं अपने सास-श्वसुर को कोई पत्र नहीं लिखती थी ताकि मेरा पति कोई विवाद उत्पन्न न करे ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि यह असत्य है कि मेरे पति सदैव फोन पर व्यस्त रहते थे और वे मेरी परवाह नहीं करते थे और

मुझसे कहा करते थे कि वे अत्यधिक आर्थिक कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि यह असत्य है कि वे सदैव धन और खर्चों की बात किया करते थे ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि यह असत्य है कि मेरे पति अप्रैल, 2012 से अस्वस्थ हो गए थे और मैं उनकी देखभाल और उपचार किया करती थी ।

मैंने उनके उपचार के लिए राज्य के बाहर कोई व्यवस्था नहीं की ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि मेरा पति उपचार के लिए मेरे द्वारा किए गए इंतजाम के संबंध में संतुष्ट नहीं थे और इस कारणवश उसने होम्योपैथी चिकित्सक से परामर्श किया था और अब वह स्वस्थ्य है ।

इसमें कोई संदेह नहीं कि यह असत्य है कि मेरे पति मेरी उपेक्षा करते थे, मुझे अपशब्द कहते थे और मेरे ऊपर वस्तुएं फेंकते थे ।

(मेरे परिवार के सदस्यों से आशय मेरे पिता, माता, भाई और काकी मां से है ।)"

11. श्री बसु ने प्रतिवादी साक्षी-1 की मुख्य परीक्षा के कुछ भाग को भी निर्दिष्ट किया, जिसको नीचे उद्धृत किया गया है :-

"... मेरा यह कहना है कि मैं एक शिक्षित और सुसंस्कृत व्यक्ति हूं और मेरे परिवार के सभी सदस्य मेरे ऊपर निर्भर हैं और मेरा विवाह प्रेम संबंधों के फलस्वरूप हुआ और विवाह के कुछ दिनों के पश्चात्, जब मैंने अपनी मौसी का फ्लैट अस्थायी रूप से लिया, तब मुझे इस बात की जानकारी हुई कि याची एक आत्मकेंद्रित व्यक्ति है और वह मुझसे बातचीत के लिए बिल्कुल भी इच्छुक नहीं रहता और इसके बजाय वह अपने परिवार के सदस्यों और

मित्रों से बातचीत के प्रयोजनार्थ सदैव दूरभाष पर व्यस्त रहता है और जब याची मेरे समक्ष उपस्थित होता था, तो वह तुरंत फोन बंद कर देता था और हमेशा मुझसे कहता था कि वह अत्यधिक आर्थिक कठिनाइयों का सामना कर रहा है ।

मेरा यह कहना है कि यदि मैं याची से अपने स्वयं के खर्च पर बेहतर जीवनयापन के लिए कहती थी, तो भी वह असहमत हो जाता था । मेरा यह कहना है कि अधिकांश दिनों में मेरी माता नाश्ता और रात्रि का भोजन अपने घर से भेजती थी । मेरा आगे यह कहना है कि याची सदैव मुझसे दिन-प्रतिदिन के जीवनयापन के संबंध में पैसे मांगता रहता था । मेरा यह कहना है कि अप्रैल, 2012 में याची कमर के दर्द के कारण गंभीर रूप से अस्वस्थ हो गया था और उस समय बिंदु पर मैंने उसके उपचार के लिए समस्त प्रबंध किए और व्यक्तिगत रूप से सभी प्रकार से उसका उपचार किया । मेरा आगे यह कहना है कि मैं उपचार के समस्त कार्यों को सम्मिलित करते हुए समस्त गृहोपयोगी कर्तव्यों का निर्वहन करती थी जैसाकि नाश्ता, दोपहर का भोजन और खाने का डिब्बा इत्यादि तैयार करना और तत्पश्चात् विद्यालय जाना । मैं आगे यह कहती हूं कि मैं याची को केवल उसकी अस्वस्थता से उबारने के लिए संलिप्त रही, किंतु याची ने मेरे समस्त प्रयासों के बावजूद सदैव मेरे कार्यों में गलतियां निकालने का प्रयास किया ।"

12. श्री बसु ने मानसिक क्रूरता के बिंदु पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **प्रवीण मेहता** बनाम **इंद्रजीत मेहता**[1] वाले मामले के पैरा 21 और 22, **जी. वी. एन. कामेश्वर राव** बनाम **जी. जबीली**[2] वाले मामले में दिए गए निर्णय के पैरा 16 और 18 का अवलंब लिया । श्री बसु ने आगे निवेदन किया कि विवाह असुधार्य रूप से टूट चुका है, चूंकि विवाह तारीख 24 फरवरी, 2012 को संपन्न हुआ था और विवाह के मात्र छह माह के पश्चात् दोनों पक्षों ने पृथक् रूप से रहना आरंभ कर दिया था ।

[1] (2002) 5 एस. सी. सी. 706 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 2582.

[2] (2002) 2 एस. सी. सी. 296 = ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 576.

उन्होंने अपनी दलील के समर्थन में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **समर घोष** बनाम **जया घोष**[1] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय के पैरा 101 का अवलंब लिया ।

13. श्री बसु ने इस माननीय न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा **माइकल हेम्ब्रेम** बनाम **रत्ना गुप्ता (हेम्ब्रेम)**[2] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय का भी अवलंब लिया ।

14. श्री बसु ने अपनी दलीलों को समाप्त करने के पूर्व निवेदन किया कि न्यायालय को इस अपील को खारिज कर देना चाहिए, तदद्वारा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश की पुष्टि कर देनी चाहिए ।

सकारण विनिश्चय

15. हम विद्वान् अधिवक्ताओं द्वारा दी गई दलीलों पर विचारोपरांत और अभिलेख के परिशीलन के पश्चात् इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि स्वीकृतत: पक्षों के मध्य विवाह तारीख 24 फरवरी, 2012 के हिंदू विवाह अधिनियम के अंतर्गत संपन्न हुआ था । यह भी स्वीकृत तथ्य है कि विवाह के छह माह के पश्चात् दोनों पक्षों ने पृथक् रूप से रहना आरंभ कर दिया था ।

16. यह भी स्वीकृत तथ्य है कि यह मामला पक्षों के मध्य प्रेम विवाह का मामला है और प्रत्यर्थी/पति को इस बात की पूर्ण जानकारी थी कि अपीलार्थी/पत्नी उम्र में उससे आठ वर्ष बड़ी है, किंतु इसके बावजूद दोनों ने पूर्वोक्त तारीख पर विवाह किया ।

17. वादपत्र के पैरा 13 से यह भी स्पष्ट है कि अपीलार्थी/पत्नी ने माजू स्थित मकान तारीख 9 अगस्त, 2012 को छोड़ दिया था । तत्पश्चात् प्रत्यर्थी/पति मध्य माजू स्थित श्री सुबोध कुमार मंडल के मकान में पृथक् रूप से निवास कर रहा है, जो हावड़ा जिला में जगतबल्लभपुर पुलिस थाना के अंतर्गत है ।

---

[1] (2007) 4 एस. सी. सी. 511.

[2] 2019 (3) सी. एल. जे. (कलकत्ता) 181.

18. हम इस तथ्य का भी अनदेखा नहीं कर सकते कि प्रत्यर्थी/पति मानसिक क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को अपने प्रकथनों में या परिसाक्ष्य में साबित करने में विफल रहा । यह तो विद्वान् न्यायाधीश की भूमिका थी, जिन्होंने आक्षेपित निर्णय में स्वयं पहल करते हुए परित्याग का मामला बना दिया, यद्यपि प्रत्यर्थी/पति क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन साबित करने में दयनीय रूप से विफल रहा ।

19. हम इस तथ्य के बाबत भी अनभिज्ञ भी नहीं बने रह सकते कि पति द्वारा पत्नी को वापस लाने के लिए कोई प्रयास कभी नहीं किया गया, इसलिए परित्याग का अभिकथित पक्षकथन, जैसाकि वादपत्र में किया गया है, को साबित कर पाने में प्रत्यर्थी/पति विफल रहा है । वादी का यह कर्तव्य होता है कि वह साक्ष्य प्रस्तुत करने के द्वारा अपने पक्षकथन को साबित करे । दुर्भाग्य से पति क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को साबित कर पाने में पूर्णतया विफल रहा ।

20. यहां पर यह उल्लेख किया जाना महत्वपूर्ण होगा कि विद्वान् न्यायाधीश ने आक्षेपित निर्णय में ही अभिनिर्धारित किया है कि 'क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को साबित करना अत्यंत कठिन है' । किसी विवाह-बंधन को मात्र पृथक्-पृथक् घटनाओं के आधार पर भंग नहीं किया जा सकता । विवाह-बंधन पारिवारिक बंधन होता है । यह पति और पत्नी दोनों का कर्तव्य होना चाहिए कि वे इस बंधन को बनाए रखें, बजाय इसके कि पृथक्-पृथक् और बिखरी हुई घटनाओं के आधार पर उसको भंग करें । वैवाहिक जीवन में सामान्य विवाह, जो दिन-प्रतिदिन के जीवन में घटित होते हैं, मानसिक क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ पर्याप्त आधार नहीं होंगे ।

21. हम इस तथ्य का भी अनदेखा नहीं कर सकते कि प्रत्यर्थी/पति अपने इस पक्षकथन को साबित कर पाने में कि अपीलार्थी/पत्नी के अपने सहकर्मियों के साथ अवैध संबंध थे या अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी/पति के साथ शारीरिक संबंध स्थापित करने से इनकार कर दिया था, दयनीय रूप से विफल रहा है । वे व्यक्ति जिनके साथ अपीलार्थी/पत्नी के अवैध संबंध थे, को भी कार्रवाई में पक्ष नहीं बनाया गया । इसके अतिरिक्त,

किसी ऐसे व्यक्ति के नाम का उल्लेख नहीं किया गया है जिसके साथ अपीलार्थी/पत्नी के इस प्रकार के अवैध संबंध चल रहे हैं ।

22. हम याची साक्षी-1 की प्रतिपरीक्षा के कुछ सुसंगत भागों का भी अनदेखा नहीं कर सकते, जैसाकि ऊपर उद्धृत किया गया है । हम अपीलार्थी/पत्नी द्वारा विवाह के पूर्व के उपनाम के प्रयोग में भी कोई त्रुटि नहीं पाते, क्योंकि वह एक कामकाजी महिला है और उसके उपनाम (मजूमदार) का प्रयोग अनेक शासकीय अभिलेखों में हुआ है ।

23. हम अपीलार्थी/पत्नी की आयु के संबंध में विद्वान् न्यायाधीश द्वारा की गई मताभिव्यक्ति का भी अधिमूल्यन नहीं करते । हमको इस बात को ध्यान में रखना होगा कि पक्षों के मध्य विवाह कोई माता-पिता द्वारा किया गया सुनियोजित विवाह नहीं था बल्कि यह प्रेम विवाह था और चूंकि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के मध्य मानसिक समायोजन और सामंजस्य विकसित हो चुका था, इसलिए प्रेमवश और मानसिक समायोजनवश विवाह-बंधन के संबंध का अंत हो गया जबकि प्रत्यर्थी/पति दयनीय रूप से क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को साबित कर पाने में विफल रहा, अतः आक्षेपित निर्णय पक्षों के मध्य आयु के अंतर को ध्यान में रखते हुए पारित किया गया, इसलिए आक्षेपित निर्णय में सभी स्थानों पर अपीलार्थी/पत्नी की आयु का उल्लेख इस बात को भलीभांति जानते हुए किया गया है कि पत्नी की आयु पति की आयु से 8 वर्ष अधिक थी और मानसिक रूप से जुड़ाव वाला विवाह, जहां आयु कोई कारक नहीं होती या कोई वर्जन सृजित नहीं करती, संपन्न हुआ था ।

24. उपरोक्त चर्चा और मताभिव्यक्ति पर विचारोपरांत और अभिलेख का सावधानीपूर्वक परिशीलन किए जाने के पश्चात् और विद्वान् अधिवक्ताओं द्वारा निर्दिष्ट विनिश्चयों पर विचारोपरांत हमारी सुविचारित राय यह है कि चूंकि प्रत्यर्थी/पति क्रूरता और परित्याग के पक्षकथन को साबित करने में दयनीय रूप से विफल रहा है, इसलिए, हमको यह अभिनिर्धारित करने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि आक्षेपित निर्णय और विनिश्चय को विधि की दृष्टि में और साथ ही मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मान्य नहीं ठहराया जा सकता ।

25. परिणामस्वरूप, आक्षेपित निर्णय और आदेश को लागत के संबंध में किसी आदेश के बिना अभिखंडित और अपास्त किया जाता है ।

26. अब हम श्री बसु द्वारा निर्दिष्ट किए गए विनिश्चय पर विचार करेंगे । **प्रवीण मेहता** (उपरोक्त) वाले मामले के तथ्य और हमारे समक्ष उपस्थित मामले के तथ्य एक-दूसरे से पूर्णतया भिन्न हैं । हमारे समक्ष उपस्थित मामले में पति ने अपीलार्थी/पत्नी को वापस लाने का प्रयास कभी नहीं किया और उसका उपचार किसी प्रसूतिरोग विशेषज्ञ द्वारा नहीं किया गया । दोनों पक्ष विवाह संपन्न होने के पश्चात् पति और पत्नी के रूप में केवल छह माह तक साथ रहे ।

27. **जी. वी. एन. कामेश्वर राव** (उपरोक्त) वाले मामले के तथ्य और हमारे समक्ष उपस्थित मामले के तथ्य भी एक-दूसरे से पूर्णतया भिन्न हैं । यह मामला हमारे समक्ष उपस्थित मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता ।

28. **समर घोष** (उपरोक्त) वाले मामले में दिए गए निर्णय के पैरा 101 के अधीन उप पैरा XIV में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि विवाह को केवल निरंतर पृथक्करण की लंबी अवधि को ध्यान में रखते हुए विवाह-संबंध के असुधार्य भंग के आधार पर विघटित किया जाना चाहिए और विवाह-विच्छेद की डिक्री अनुच्छेद 184 के अधीन माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रदान की जा सकती है । विवाह का असुधार्य रूप से भंग 1955 के हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 के अधीन विवाह के विघटन का आधार नहीं हो सकता । तद्नुसार, **समर घोष** (उपरोक्त) वाला मामला भी हमारे समक्ष उपस्थित मामले में लागू नहीं होता ।

29. यदि इस निर्णय की तत्काल प्रमाणित फोटोस्टेट प्रति के लिए आवेदन किया गया है, तो पक्षों को समस्त औपचारिकताओं के पूर्ण किए जाने के पश्चात् प्रदान कर दी जाएं ।

अपील मंजूर की गई ।

शु.

आकाश एजुकेशनल सर्विसेस लिमिटेड

बनाम

साहित सीतल सिंह बाजवा और अन्य

[2020 की आरंभिक प्रकीर्ण याचिका (आई.) (वाणिज्यिक) संख्या 121]

तारीख 29 जून, 2020

न्यायमूर्ति वी. कामेश्वर राव

संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) – धारा 27 – कारबार के निर्बंधन के प्रयोजनार्थ संविदा – प्रत्यर्थियों की प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी के प्रयोजनार्थ याची का कोचिंग सेंटर चलाने के लिए फ्रेंचाइजी के रूप में नियुक्ति – संविदा की शर्तों के अंतर्गत याची समान पाठ्यक्रम के प्रयोजनार्थ कोई अन्य कोचिंग सेंटर आरंभ करने से दो वर्षों की अवधि तक निषिद्ध थे – संविदा में इस बात का उल्लेख न होना कि संविदा की समाप्ति के पश्चात् प्रत्यर्थी आरंभिक फ्रेंचाइजी करार के व्यतीत हो जाने की तारीख तक समान पाठ्यक्रमों के लिए कोचिंग सेंटर नहीं चला सकते – फ्रेंचाइजी करार समाप्त किया जाना – प्रत्यर्थी को समान पाठ्यक्रमों को चलाने के प्रयोजनार्थ कोई अन्य कोचिंग सेंटर आरंभ करने से निषिद्ध नहीं किया जा सकता ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि याची "आकाश इंस्टीट्यूट/आकाश आई. आई. टी.-जे. ई. ई." के नाम के अंतर्गत कोचिंग सेंटर चला रहा है और मेडिकल, आई. आई. टी.-जे. ई. ई. और अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए उपस्थित होने वाले छात्रों को तैयारी कराता है । याची ने संपूर्ण देश में एक उत्कृष्ट कोचिंग चेन के रूप में ख्याति और प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली है । कोचिंग प्रदान करने की तकनीक और पद्धति विकसित करने में विशेषज्ञता के कारण और विशेषज्ञता पर आधारित नोट्स और अध्ययन सामग्री/कार्यक्रम तैयार किए जाने के कारण "आकाश इंस्टीट्यूट/आकाश आई. आई. टी.-जे. ई. ई." ने एक भिन्न हैसियत

अर्जित कर ली है । याची द्वारा अत्यधिक ख्याति और प्रतिष्ठा अर्जित कर लिया जाना इस बात से स्पष्ट है कि 12वीं के बोर्ड, मेडिकल, आई. आई. टी.-जे. ई. ई. और अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता प्राप्त करने वाले छात्रों की कई गुणा वृद्धि हुई है । प्रत्यर्थियों को तारीख 30 जून, 2016 के करार, जिसके द्वारा उनको 'आकाश इंस्टीट्यूट/आकाश आई. आई. टी.-जे. ई. ई.' के नाम के अंतर्गत पटेल चौक, शौली रोड पठानकोट, पंजाब के प्रथम और द्वितीय तल पर सेंटर चलाने की अनुज्ञा प्रदान की गई थी, द्वारा फ्रेंचाइजी नियुक्त किया गया था । फ्रेंचाइजी करार के नियमों और शर्तों के अनुसार प्रत्यर्थियों पर यह बाध्यता थी कि वे छात्रों से एकत्रित संपूर्ण शुल्क के 33 प्रतिशत का संदाय याची को डिमांड ड्राफ्ट द्वारा प्रत्येक 15 दिनों के व्यतीत हो जाने पर करेंगे अर्थात् अंग्रेजी कैलेंडर माह की 4 और 19 तारीख को । उनसे यह भी अपेक्षित था कि वे पूर्ववर्ती माह में एकत्रित शुल्क का विवरण कथन भी भेजेंगे । इस करार के अंतर्गत यह भी अनुध्यात किया गया था कि प्रत्यर्थी सेंटर द्वारा नियुक्त शिक्षकों और अन्य कर्मचारियों को नियमित रूप से भुगतान करेंगे । करार के नियमों और शर्तों, जिन पर पक्षों द्वारा सहमति व्यक्त की गई, के अनुसार, विशेष रूप से करार के खंड 5.5 के अधीन, प्रत्यर्थी याची को लिखित में छह माह की अग्रिम सूचना देने के लिए बाध्यताधीन थे, यदि उनकी इच्छा करार को समाप्त करने/उससे बाहर निकलने की थी । प्रत्यर्थी इस करार से विशिष्ट सत्र के पाठ्यक्रमों की समाप्ति पर ही बाहर निकल सकते थे । ऐसा छात्रों की हितों की रक्षा के उद्देश्य से किया गया था और इस प्रयोजनार्थ कि किसी भी छात्र की शिक्षा किसी भी प्रकार से प्रभावित न हो । इस करार के अंतर्गत यह अपेक्षा भी की गई थी कि प्रत्यर्थी करार से बाहर निकलने के पहले छह माह की सूचना देंगे । याची ने फ्रेंचाइजी करार की विधिमान्यता के दौरान प्रत्यर्थियों को अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराई । उनके अनुसार प्रत्यर्थियों ने करार के नियमों और शर्तों का अतिक्रमण किया और छात्रों से रकम/शुल्क प्राप्त करने के बावजूद याची को कमीशन का संदाय नहीं किया । याची को मई, 2018 से प्रत्यर्थियों द्वारा संदेय रकमें बकाया हैं और प्रत्यर्थियों ने अनेक अनुस्मरणों के बाद भी कुछ रकमों का ही

संदाय किया है । अतः याची ने प्रत्यर्थियों के विरुद्ध निम्नलिखित अनुतोषों की ईप्सा करते हुए वर्तमान याचिका फाइल की : (क) प्रत्यर्थियों, उनके प्रतिनिधियों, उत्तराधिकारियों, विधिक सहयोगियों इत्यादि को नए छात्रों का नामांकन करने, उनसे शुल्क एकत्रित करने और/या किसी भी प्रकार से उनको सेंटर फॉर कोचिंग स्टूडेंट्स, जो कक्षा 12 के बोर्ड, मेडिकल, आई. आई. टी.-जे. ई. ई. और अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए छात्रों को तैयारी कराता है, के परिचालन में सहबद्ध करने से दो वर्ष की अवधि के लिए निषिद्ध किया जाए, सिवाय उन छात्रों के पाठ्यक्रमों को पूरा करने के जिनको आकाश इंस्टीट्यूट/आकाश आई. आई. टी.-जे. ई. ई. में भर्ती किया गया है; (ख) प्रत्यर्थियों को सेंटर अर्थात् पटेल चौक, शौली रोड, पठानकोट, पंजाब के प्रथम और द्वितीय तल पर स्थित आकाश इंस्टीट्यूट/आकाश आई. आई. टी.-जे. ई. ई. के नाम वाले साइनबोर्ड, होडिंग और सभी प्रकार की सामग्री को तुरंत हटाने के लिए निर्देशित किया जाए । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – श्री थनाई की दूसरी दलील पर विचार करते हुए कि संविदा की आरंभिक अवधि वर्ष 2021 तक थी और प्रत्यर्थी उस अवधि तक कोई ऐसा सेंटर नहीं आरंभ कर सकते थे, से भी मैं इस कारणवश सहमत हूं कि उनके द्वारा खंड 7.6 का अवलंब लिया जाना इस प्रयोजनार्थ सुसंगत है कि संविदा की अवधि के दौरान प्रत्यर्थियों से यह अपेक्षित नहीं था कि वे उस कोचिंग सेंटर, जिसके लिए उनको फ्रेंचाइजी दी गई, के अलावा कोई अन्य कोचिंग सेंटर खोलें । अन्यथा भी, यह अभिवाक् खंड 6.4, स्पष्टतः समाप्ति के प्रभाव को विनिर्धारित करता है और कहीं पर भी यह अनुध्यात नहीं करता है कि प्रत्यर्थी समाप्ति के पश्चात् भी मूल करार, जिसको समाप्त किया जा चुका है, के व्यतीत हो जाने की अवधि तक कोई कोचिंग सेंटर नहीं चला सकते, को गलत ढंग से पढ़े जाने के कारण दिया गया है । श्री थनाई द्वारा जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया है और जिनको ऊपर निर्दिष्ट किया गया है, से मुझे इस कारणवश कोई सहायता नहीं मिलती कि गुजरात बोटलिंग कंपनी लिमिटेड वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने पैरा 37 में स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया कि चूंकि 1993 के करार के पैरा 14 में समाविष्ट

नकारात्मक अनुध्यापन का उपयोजन करार की विद्‌यमानता की अवधि तक सीमित है और उसमें अधिरोपित निर्बंधन केवल तभी क्रियान्वित होंगे जब 1993 के करार की अवधि अधिशेष होगी, उक्त अनुध्यापन को संविदा अधिनियम की धारा 27 की वर्जना को आकर्षित किए जाने के प्रयोजनार्थ व्यापार पर निर्बंधन अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता । यह मामला तथ्यों के आधार पर विभेदनीय है । इसी प्रकार से जहां तक निरंजन शंकर गोलिकारी वाले मामले में दिए गए निर्णय का संबंध है, उच्चतम न्यायालय ने अपील को यह अभिकथित करते हुए खारिज कर दिया कि नकारात्मक प्रसंविदा भिन्न-भिन्न मामलों में भिन्न-भिन्न होती हैं, चूंकि वह उस अवधि के दौरान लागू होती है जब संविदा समाप्त हो चुकी होती है और कुछ मामलों में नकारात्मक प्रसंविदा संविदा की अवधि के दौरान भी क्रियान्वित होती है । विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने अभिनिर्धारित किया कि नियोजन की अवधि के संबंध में नकारात्मक प्रसंविदा और समान प्रकृति के नियोजन को चलाने के लिए, जिसको अपीलार्थी द्‌वारा चलाया जा रहा है, जब वह प्रत्यर्थी के नियोजन के अधीन था, कंपनी के हित के संरक्षण के लिए युक्तिसंगत और आवश्यक था । उक्त निर्णय स्पष्टत: विभेदनीय है । जहां तक बी. एल. बी. इंस्टीट्‌यूट ऑफ फाइनेंशियल मार्केट्‌स लिमिटेड वाले मामले में दिए गए निर्णय का संबंध है, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी ने अपनी सेवा अवधि के दौरान सेवा करार में समाविष्ट नकारात्मक प्रसंविदा का भंग किया है और इसलिए व्यापार के निर्बंधन का सिद्धांत लागू नहीं हो सकता, चूंकि न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी को उस समय तक अपने सेवा करार की शर्तों द्‌वारा बाध्य अभिनिर्धारित होना चाहिए, जब तक कि मध्यस्थ विवाद में अपना पंचाट न दे दे । यह निर्णय स्पष्टत: विभेदनीय है । (पैरा 12 और 13)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2017] (2017) एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 1237 = ए. आई. आर. 2018 दिल्ली 892 : **ई. वी. मोटर्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **अनुराग अग्रवाल** ; 9

[2016]	(2016) एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 4812 : **स्टेलर इनफारमेशन टेक्नोलॉजी प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **राकेश कुमार** ;	9
[2015]	(2015) एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 8337 = 2015 (3) ए. डी. आर. 559 : **अरविन्दर सिंह और अन्य** बनाम **डा. लाल पैथलैब प्राइवेट लिमिटेड** ;	9, 11
[2008]	मनु./डी. ई./1359/2008 : **बी. एल. बी. इंस्टीट्यूट आफ फाइनेंशियल मार्केट्स लिमिटेड** बनाम **राम कुमार झा** ;	8, 13
[2006]	(2006) 4 एस. सी. सी. 227 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 3426 : **परसेप्ट डी. मार्क (इंडिया) (प्रा.) लिमिटेड** बनाम **जहीर खान और एक अन्य** ;	9, 11
[1995]	मनु./एस. सी./0472/1995 = ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 2372 : **गुजरात बोटलिंग कंपनी लिमिटेड और अन्य** बनाम **कोका कोला कंपनी और अन्य** ;	8, 13
[1981]	(1981) 2 एस. सी. सी. 246 = ए. आई. आर. 1980 एस. सी. 1717 : **सुपरिंटेंडेंस कंपनी ऑफ इंडिया (प्रा.) लिमिटेड** बनाम **कृष्ण मुरगाई** ;	9, 11
[1967]	मनु./एस. सी./0364/1967 = ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1098 : **निरंजन शंकर गोलिकारी** बनाम **सेंचुरी स्पिनिंग एंड मैन्युफेक्चरिंग कंपनी लिमिटेड** ।	8, 13

आरंभिक रिट अधिकारिता : **2020 की आरंभिक प्रकीर्ण याचिका (आई.) (वाणिज्यिक) संख्या 121.**

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका ।

याची की ओर से श्री नरेश थनाई और सुश्री खुशबू सिंह

प्रत्यर्थियों की ओर से श्रीमती शांता देवी रमन

आदेश

वर्तमान याचिका निम्नलिखित प्रार्थना के साथ फाइल की गई है :-

"(क) प्रत्यर्थियों, उनके प्रतिनिधियों, उत्तराधिकारियों, विधिक सहयोगियों इत्यादि को नए छात्रों का नामांकन करने, उनसे शुल्क एकत्रित करने और/या किसी भी प्रकार से उनको सेंटर फॉर कोचिंग स्टूडेंट्स, जो कक्षा 12 के बोर्ड, मेडिकल, आई. आई. टी.-जे. ई. ई. और अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए छात्रों को तैयारी कराती है, के परिचालन में सहबद्ध करने से दो वर्ष की अवधि के लिए निषिद्ध किया जाए, सिवाय उन छात्रों के पाठ्यक्रमों को पूरा करने के जिनको आकाश इंस्टीट्यूट/आकाश आई. आई. टी.-जे. ई. ई. में भर्ती किया गया है ;

(ख) प्रत्यर्थियों को सेंटर अर्थात् पटेल चौक, शौली रोड, पठानकोट, पंजाब के प्रथम और द्वितीय तल पर स्थित आकाश इंस्टीट्यूट/आकाश आई. आई. टी.-जे. ई. ई. के नाम के वाले साइन बोर्ड, होर्डिंग और सभी प्रकार की सामग्री को तुरंत हटाने के लिए निर्देशित किया जाए ; और

(ग) याची के पक्ष में वाद के खर्चे का आदेश पारित किया जाए और

(घ) याची के पक्ष में ऐसा कोई भी अन्य आदेश पारित किया जाए, जिसे यह माननीय न्यायालय मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उचित और समुचित प्रतीत करे ।"

2. याची का यह पक्षकथन है और यही दलील श्री थनाई द्वारा दी गई है कि याची "आकाश इंस्टीट्यूट/आकाश आई. आई. टी.-जे. ई. ई." के

नाम के अंतर्गत कोचिंग सेंटर चला रहा है और मेडिकल, आई. आई. टी.-जे. ई. ई. और अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए उपस्थित होने वाले और उनके अर्हता प्राप्त करने वाले छात्रों को तैयारी कराता है । याची ने संपूर्ण देश में एक उत्कृष्ट कोचिंग चेन के रूप में ख्याति और प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली है । कोचिंग प्रदान करने की तकनीक और पद्धति विकसित करने में विशेषज्ञता के कारण और विशेषज्ञों नोट्स और अध्ययन सामग्री/कार्यक्रम तैयार किए जाने के कारण "आकाश इंस्टीट्यूट/आकाश आई. आई. टी.-जे. ई. ई." ने एक भिन्न हैसियत अर्जित कर ली है । याची द्वारा अत्यधिक ख्याति और प्रतिष्ठा अर्जित कर लिया जाना 12वीं के बोर्ड, मेडिकल, आई. आई. टी.-जे. ई. ई. और अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं में सफलता प्राप्त करने वाले छात्रों की कई गुणा वृद्धि से स्पष्ट है ।

3. उन्होंने अभिकथित किया कि प्रत्यर्थियों को तारीख 30 जून, 2016 के करार, जिसके द्वारा उनको "आकाश इंस्टीट्यूट/आकाश आई. आई. टी.-जे. ई. ई." के नाम के अंतर्गत पटेल चौक, शौली रोड, पठानकोट, पंजाब के प्रथम और द्वितीय तल पर सेंटर चलाने की अनुज्ञा प्रदान की गई थी, द्वारा फ्रेंचाइजी नियुक्त किया गया था । याची का पक्षकथन यह भी है कि फ्रेंचाइजी करार (संक्षेप में 'करार') के नियमों और शर्तों के अनुसार प्रत्यर्थियों पर यह बाध्यता थी कि वे छात्रों से एकत्रित संपूर्ण शुल्क के 33 प्रतिशत का संदाय याची को डिमांड ड्राफ्ट द्वारा प्रत्येक 15 दिनों के व्यतीत हो जाने पर करेंगे अर्थात् अंग्रेजी कैलेंडर माह की 4 और 19 तारीख को । उनसे यह भी अपेक्षित था कि वे पूर्ववर्ती माह में एकत्रित शुल्क का विवरण कथन भी भेजेंगे । इस करार के अंतर्गत यह भी अनुध्यात किया गया था कि प्रत्यर्थी सेंटर द्वारा नियुक्त शिक्षकों और अन्य कर्मचारियों को नियमित रूप से भुगतान करेंगे ।

4. श्री थनाई ने आगे अभिकथित किया कि करार के नियमों और शर्तों, जिन पर पक्षों द्वारा सहमति व्यक्त की गई, के अनुसार, विशेष रूप से करार के खंड 5.5 के अधीन प्रत्यर्थी याची को लिखित में छह

माह की अग्रिम सूचना देने के लिए बाध्यताधीन थे, यदि उनकी इच्छा करार को समाप्त करने/उससे बाहर निकलने की थी । प्रत्यर्थी इस करार से विशिष्ट सत्र के पाठ्यक्रमों की समाप्ति पर ही तभी बाहर निकल सकते थे । ऐसा छात्रों की हितों की रक्षा के उद्देश्य से किया गया था और इस प्रयोजनार्थ कि किसी भी छात्र की शिक्षा किसी भी प्रकार से प्रभावित न हो, इस करार के अंतर्गत यह अपेक्षा भी की गई थी कि प्रत्यर्थी करार से बाहर निकलने के पहले छह माह की सूचना देंगे । उन्होंने आगे निवेदन किया कि याची ने फ्रेंचाइजी करार के विधिमान्यता के दौरान प्रत्यर्थियों को अध्ययन सामग्री उपलब्ध कराई थी । उनके अनुसार प्रत्यर्थियों ने करार के नियमों और शर्तों का अतिक्रमण किया और छात्रों से रकम/शुल्क प्राप्त करने के बावजूद याची को कमीशन का संदाय नहीं किया । याची को मई, 2018 से प्रत्यर्थियों द्वारा संदेय रकमें बकाया हैं और प्रत्यर्थियों ने अनेक अनुस्मरणों के बाद भी कुछ रकमों का ही संदाय किया है ।

5. उन्होंने यह भी अभिकथित किया कि इसके अतिरिक्त प्रत्यर्थियों ने तारीख 8 मई, 2020 की ई-मेल द्वारा याची को सूचित किया कि पठानकोट स्थित सेंटर, जिसे चलाने के लिए प्रत्यर्थियों को अनुज्ञा प्रदान की गई थी, बंद कर दिया गया है । उनके अनुसार, यह करार का भंग था । उन्होंने इस तथ्य को स्वीकार किया कि चाहे कुछ भी हो, याची ने तारीख 11 मई, 2020 के पत्र/ई-मेल द्वारा प्रत्यर्थियों को सूचित कर दिया था कि सेंटर का अचानक बंद किया जाना अपराधिकृत और अवैध है और इससे छात्रों के हितों पर गंभीर रूप से विपरीत प्रभाव पड़ा है । याची ने करार को समाप्त कर दिया और प्रत्यर्थियों से अपेक्षा की कि वे उन सत्रों के लिए छात्रों के पाठ्यक्रमों को पूर्ण कराएं जिनके लिए उन्होंने छात्रों से पहले ही शुल्क एकत्रित कर लिया है और याची से अध्ययन सामग्री भी प्राप्त कर ली है । उनके अनुसार वास्तव में याची ने तारीख 11 मई, 2020 के पत्र/ई-मेल द्वारा प्रत्यर्थियों से कहा था कि वे 2,21,35,360/- रुपए की राशि का संदाय याची को करेंगे ।

6. उनके अनुसार करार के खंड 6.4 के अनुसार, प्रत्यर्थी उक्त

परिसर का प्रयोग कोचिंग के क्रियाकलापों के लिए करार की समाप्ति/व्यतीत हो जाने की अवधि की तारीख से दो वर्षों की अवधि के लिए नहीं कर सकते थे, जो निम्नलिखित हैं :–

> "**6.4 फ्रेंचाइजी का परिसर** – किसी भी कारणवश, चाहे वह कुछ भी हो, करार की समाप्ति या उसका नवीनीकरण न किए जाने की स्थिति में, फ्रेंचाइजी समान परिसर का प्रयोग मेडिकल/आई. आई. टी.-जे. ई. ई./ इंजीनियरिंग की कोचिंग के क्रियाकलाप के लिए आकाश के साथ प्रतिस्पर्धा करते हुए अपने स्वयं के द्वारा या किसी अन्य ब्रांड के अंतर्गत कोचिंग चलाने के लिए करार की समाप्ति/व्यतीत हो जाने की तारीख से दो वर्ष की अवधि तक नहीं कर सकता । वह उन टेलीफोन नंबरों का भी प्रयोग नहीं कर सकता, जो उस समय कार्यान्वयन में था जब वह फ्रेंचाइजी था । उसको इन टेलीफोन नंबरों का अभ्यर्पण उस कंपनी को करना होगा जिसने यह टेलीफोन नंबर उसको जारी किए थे ।"

7. इसके अतिरिक्त उन्होंने यह दलील देते हुए कि प्रत्यर्थी कम से कम तारीख 29 जून, 2021 तक कोई कोचिंग सेंटर नहीं खोल सकते, करार के खंड 7.6 का भी अवलंब लिया जिसका शीर्षक है समान कारबार और जो निम्नलिखित है :–

> "**7.6 समान कारबार** – फ्रेंचाइजी इस बाबत सहमत है और वचन देता है कि न तो वह और न ही उससे संबद्ध लोग इस करार की अवधि के दौरान प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्षत: किसी अन्य कारबार, पेशा, क्रियाकलाप, कार्यान्वयनों, जो उस फ्रेंचाइजी सेंटर के पाठ्यक्रमों, प्रशिक्षण, सेवाओं, कारबार क्रियाकलापों और क्रियान्वयनों की समान प्रकृति के हैं या उनके प्रतियोगी हैं या विरोधाभासी हैं जिनके लिए यह करार निष्पादित किया गया है और जिनके संबंध में कोई भी पाठ्यक्रम सामग्री, जानकारी, सूचना और/या आंकड़े और/या उसके किसी भी भाग की आपूर्ति कंपनी द्वारा और/या कंपनी से सहबद्ध किसी व्यक्ति द्वारा की गई है या उसका प्रयोग किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है,

संलग्न होंगे, वचन देंगे, कार्य करेंगे, प्रायोजित करेंगे, समर्थन करेंगे, सहायता करेंगे या सहबद्ध होंगे और इस संबंध में कंपनी का विनिश्चय फ्रेंचाइजी पर अंतिम और बाध्यकारी होगा ।

फ्रेंचाइजी इस बाबत भी सहमत है कि वह इस करार की विधिमान्यता की अवधि के दौरान फ्रेंचाइजी सेंटर और/या उससे संबंधित किसी मामले के प्रयोजनार्थ किसी भी प्रकार से प्रयोग होने वाली संपत्ति या उसके किसी भाग को किसी अन्य व्यक्ति/पक्ष को कोई पाठ्यक्रम, प्रशिक्षण, कारबार, क्रियाकलापों या क्रियान्वयनों, जो कंपनी की राय में (जो राय फ्रेंचाइजी पर बाध्यकारी होगी), समान या प्रतियोगी प्रकृति के हैं या होंगे या उक्त फ्रेंचाइजी सेंटर के कारबार, क्रियाकलापों या कार्यान्वयनों को विपरीत रूप से प्रभावित करने वाले हैं, किराए, अनुज्ञप्ति/उप अनुज्ञप्ति, पट्टे पर नहीं देगा या किसी भी प्रकार से उपलब्ध नहीं कराएगा ।

पूर्वोक्त प्रयोजनों को ध्यान में रखते हुए फ्रेंचाइजी किसी पट्टा, अनुज्ञप्ति या अन्य करार, इंतजाम या समझ में प्रविष्ट होते समय अभिव्यक्त रूप से विनिर्दिष्ट और अनुध्यात करेगा कि इस परिसर का प्रयोग शैक्षणिक/प्रशिक्षण या किसी अन्य समान या प्रतियोगी कारबार, क्रियान्वयनों या क्रियाकलापों के लिए नहीं किया जाना है, जिसमें विफल रहने पर, पट्टेदार किराएदार, लाइसेंसी और/या अन्य कोई व्यक्ति फ्रेंचाइजी द्वारा संक्षिप्त रूप से और तुरंत बेदखल किए जाने का दायी होगा और इसमें विफल रहने पर कंपनी के लिए यह उपधारणा की जाएगी कि वह फ्रेंचाइजी द्वारा ऐसा करने के लिए अप्रतिसंहरणीय रूप से और बिना शर्त प्राधिकृत है और कंपनी वे सभी कार्य, विलेख, मामले और अन्य कार्य संपादित करेगी, जो फ्रेंचाइजी द्वारा या उसकी ओर से इस प्रयोजनार्थ किया जाना आवश्यक या वांछनीय हो ।

इसमें किसी अन्य बात के सम्मिलित होते हुए भी और इस करार के अधीन कंपनी के किसी भी अन्य अधिकारों के विद्यमान होते हुए भी, यदि फ्रेंचाइजी इस खंड के अधीन अपनी किन्हीं

बाध्यताओं का निर्वहन करने में असफल रहता है, तो कंपनी को फ्रेंचाइजी के पक्ष में किसी भी बाध्यता, चाहे वह कुछ भी हो, का पालन किए बिना इस करार को तुरंत समाप्त करने का अधिकार होगा ।"

8. उन्होंने अपने निवेदनों के समर्थन में निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया :-

(i) निरंजन शंकर गोलिकारी बनाम **सेंचुरी स्पिनिंग एंड मैन्युफेक्चरिंग कंपनी लिमिटेड**[1] **;**

(ii) बी. एल. बी. इंस्टीट्यूट आफ फाइनेंशियल मार्केट्स लिमिटेड बनाम **राम कुमार झा**[2] **;**

(iii) गुजरात बोटलिंग कंपनी लिमिटेड और अन्य बनाम **कोका कोला कंपनी और अन्य**[3] **।**

9. इसके विपरीत प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित अधिवक्ता सुश्री शांता देवी ने निवेदन किया कि याची ने तारीख 25 फरवरी, 2020 की ई-मेल द्वारा प्रत्यर्थियों को सूचित किया था कि उन्होंने अपने समस्त समर्थन और सेवाओं को वापस लेने का निर्णय ले लिया है और प्रत्यर्थियों को सलाह दी थी कि वे तत्काल प्रभाव से समस्त प्रवेश/रजिस्ट्रीकरण को रोक दें । उनके अनुसार प्रत्यर्थियों ने तारीख 8 मई, 2020 की ई-मेल द्वारा याची को सूचित किया था कि याची की कार्रवाई उनके आचरण और व्यवहार के कारण पठानकोट सेंटर बंद हो गया है । उन्होंने अभिकथित किया कि याची द्वारा याचिका के पैरा 18 में स्वीकार किया गया है कि याची ने तारीख 11 मई, 2020 की ई-मेल द्वारा करार को समाप्त कर दिया है । करार के समाप्त कर दिए जाने के कारण याची द्वारा प्रत्यर्थियों के व्यापार, कारबार या पेशे को निर्बंधित किए जाने की नकारात्मक प्रसंविदा 1872 के भारतीय संविदा

---

[1] मनु./एस. सी./0364/1967 = ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1098.

[2] मनु./डी. ई./1359/2008.

[3] मनु./एस. सी./0472/1995 = ए. आई. आर. 1965 एस. सी. 2372.

अधिनियम द्वारा बाधित है । इस प्रकार की कोई भी प्रसंविदा व्यर्थ है, जैसाकि अनेक निर्णयों में अभिनिर्धारित किया गया है । उन्होंने इस संबंध में निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया :-

(i) **सुपरिंटेंडेंस कंपनी ऑफ इंडिया (प्रा.) लिमिटेड** बनाम **कृष्ण मुरगाई**[1] ;

(ii) परसेप्ट डी. मार्क (इंडिया) (प्रा.) लिमिटेड बनाम **जहीर खान और एक अन्य**[2] ;

(iii) अरविन्दर सिंह और अन्य बनाम **डा. लाल पैथलैब प्राइवेट लिमिटेड**[3] ;

(iv) स्टेलर इनफारमेशन टेक्नोलॉजी प्राइवेट लिमिटेड बनाम **राकेश कुमार**[4] ;

(v) ई. वी. मोटर्स इंडिया प्राइवेट लिमिटेड बनाम **अनुराग अग्रवाल**[5] ।

10. उन्होंने यह भी अभिकथित किया कि श्री थनाई द्वारा दी गई यह दलील भ्रांतिपूर्ण है कि करार का खंड 7.6 वर्तमान स्थितियों में लागू होता है चूंकि यह करार तारीख 29 जून, 2021 तक लागू है, जब करार की अवधि पूर्ण हो जाएगी । उनके अनुसार खंड 7.6 कतई लागू नहीं होता क्योंकि यह खंड शीर्षक 'सामान्य नियम और शर्तें' के अंतर्गत आता है और यह खंड ऐसी स्थिति पर विचार करता है, जो 'करार की अवधि के दौरान' घटित होती है और चूंकि करार को तारीख 11 मई, 2020 की ई-मेल द्वारा समाप्त किया जा चुका है, इसलिए याची अब खंड 7.6 का आश्रय संविदा अधिनियम की धारा 27 की कठिनाइयों से बचने के लिए नहीं ले सकता, चूंकि उक्त खंड करार को समाप्त किए जाने के पश्चात् लागू नहीं होता । अन्य शब्दों में उक्त खंड केवल करार की अवधि के दौरान ही प्रभावी होता है ।

---

[1] (1981) 2 एस. सी. सी. 246 = ए. आई. आर. 1980 एस. सी. 1717.

[2] (2006) 4 एस. सी. सी. 227 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 3426.

[3] (2015) एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 8337 = 2015 (3) ए. डी. आर. 559.

[4] (2016) एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 4812.

[5] (2017) एस. सी. सी. ऑनलाइन दिल्ली 1237 = ए. आई. आर. 2018 दिल्ली 892.

11. पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात्, जहां तक श्री थनाई द्वारा दिए गए प्रथम निवेदन कि प्रत्यर्थी करार के खंड 6.4 को दृष्टि में रखते हुए उसी परिसर में दो वर्ष की अवधि के लिए कोचिंग सेंटर आरंभ नहीं कर सकते, का प्रश्न है, मैं विधि की सुस्थापित स्थिति को ध्यान में रखते हुए इस निवेदन से सहमत नहीं हूं, जिसका अवलंब सुश्री रमन द्वारा लिया गया है । **सुपरिंटेंडेंस कंपनी ऑफ इंडिया (प्राइवेट) लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय जिन तथ्यों से संबद्ध था, वे यह हैं कि अपीलार्थी कंपनी ने प्रत्यर्थी को अपने नई दिल्ली कार्यालय के लिए शाखा प्रबंधक के रूप में सेवारत किया था और नियोजन संविदा की एक शर्त यह थी कि 'आपको हमारे किसी प्रतियोगी की किसी ऐसी फर्म में सम्मिलित होने की अनुज्ञा नहीं होगी या प्रत्यक्षत: और/या अप्रत्यक्षत: दो वर्ष की अवधि के लिए किसी भी ऐसे स्थान पर जहां आप अंतिम रूप से तैनात रहे हों, आपके द्वारा कंपनी से सेवामुक्त होने के पश्चात् हमारे कारबार के समरूप अपना कारबार चलाने की अनुज्ञा नहीं होगी' । अपीलार्थी कंपनी ने प्रत्यर्थी की सेवाओं को समाप्त कर दिया, जिसके पश्चात् प्रत्यर्थी ने अपना स्वयं का कारबार आरंभ किया, जो अपीलार्थी के दिल्ली में कारबार के समान कारबार था । अपीलार्थी ने दिल्ली उच्च न्यायालय की शरण ली जिसमें विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि नकारात्मक प्रसंविदा व्यापार का भागिक निर्बंधन है और यह निर्बंधन युक्तिसंगत है और इसलिए संविदा अधिनियम की धारा 27 द्वारा बाधित नहीं है । खंड न्यायपीठ ने एकल न्यायाधीश के आदेश को पलट दिया । तत्पश्चात् उच्चतम न्यायालय ने बहुसंख्यक विचार द्वारा अपील को खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया कि शब्द 'छोड़ना' पक्षों द्वारा केवल किसी ऐसी स्थिति को निर्दिष्ट किए जाने के प्रयोजनार्थ आशयित था जहां कर्मचारी ने अपीलार्थी कंपनी की सेवा से स्वैच्छिक रूप से सेवामुक्त हो गया है । किंतु इस मामले में प्रत्यर्थी की सेवाओं को अपीलार्थी कंपनी द्वारा समाप्त किया गया था, इसलिए विवादित खंड में समाविष्ट निर्बंधात्मक प्रसंविदा लागू नहीं होगी और प्रत्यर्थी के विरुद्ध प्रवर्तनीय नहीं होगी । इसी प्रकार से **परसेप्ट डी. मार्क (इंडिया) (प्रा.)**

लिमिटेड (उपरोक्त) वाले मामले के तथ्य ये हैं कि अपीलार्थी एक कंपनी है जो माडल सेलिब्रिटी को आगे बढ़ाने और उनके प्रबंधन में के कारबार में संलग्न है । अपीलार्थी कंपनी प्रत्यर्थी संख्या 1, जो कि एक क्रिकेटर है, के साथ तारीख 30 अक्तूबर, 2000 को तीन वर्ष की अवधि के लिए एक करार में प्रविष्ट हुई । तत्पश्चात् प्रत्यर्थी संख्या 1 ने अपीलार्थी कंपनी को यह अभिकथित करते हुए एक पत्र जारी किया कि वह करार की शर्तों का नवीकरण किए जाने और/या उनको विस्तारित किए जाने का इच्छुक है । अब करार के निबंधनों के खंड 31 के संबंध में विवाद्यक उद्भूत हुआ जिसको अपीलार्थी कंपनी द्वारा अपने पत्र व्यवहार में दोहराया गया था और जिसमें इस खंड के अनुसार प्रत्यर्थी संख्या 1 किसी उत्पाद या सेवा के संबंध में आगे बढ़ाए जाने, प्रोन्नत किए जाने, विज्ञापन किए जाने या अन्य संसाधनों की बाबत कोई प्रस्ताव स्वीकार नहीं कर सकता था और वह इस प्रकार के किसी भी प्रस्ताव को स्वीकार करने के पूर्व अपीलार्थी कंपनी को लिखित में किसी अन्य तृतीय पक्ष के कारार के नियमों और शर्तों को उपलब्ध कराने और अपीलार्थी को उस प्रस्ताव का मिलान अन्य प्रस्तावों के साथ करने का अधिकार देने का प्रस्ताव उपलब्ध कराने की बाध्यता के अधीन था । संविदा की अवधि तारीख 29 अक्तूबर, 2003 को समाप्त हो जाएगी । प्रत्यर्थी संख्या 1 भिन्न अस्तित्व प्रत्यर्थी संख्या 2 के साथ एक करार में प्रविष्ट हुआ जिसके द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 2 प्रत्यर्थी संख्या 1 के समस्त मामलों के प्रबंधन के लिए तारीख 1 दिसंबर, 2003 से अभिकर्ता के रूप में नियुक्त किया गया । इस बात की जानकारी होने पर कि प्रत्यर्थी संख्या 2 और प्रत्यर्थी संख्या 1 इसी प्रकार की एक संविदा में प्रविष्ट हो चुके हैं, अपीलार्थी कंपनी ने माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 9 के अधीन याचिका फाइल की और प्रार्थना की कि जब तक माध्यस्थम् कार्यवाहियां पूर्ण न हो जाएं, प्रत्यर्थी संख्या 1 को प्रत्यर्थी संख्या 1 के प्रति पहले अपनी बाध्यताओं का निर्वहन किए बिना किसी भी तृतीय पक्ष के साथ किसी करार में प्रविष्ट होने या किसी करार के अंतर्गत कोई कार्य करने से व्यादेश द्वारा निषिद्ध किया जाए । विद्वान् एकल न्यायाधीश ने अंतरिम आदेश प्रदान कर दिया । खंड न्यायपीठ के समक्ष

अपील में, जिसे इस शर्त पर मंजूर किया गया था कि प्रत्यर्थी संख्या 1 और प्रत्यर्थी संख्या 2 या किसी तृतीय पक्ष के मध्य करार की प्रति न्यायालय के समक्ष चार सप्ताह की अवधि के भीतर प्रस्तुत की जाए । उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि चूंकि तारीख 19 दिसंबर, 2003 को अंतर्वर्ती आवेदन को अस्वीकृत कर दिए जाने के कारण कोई भी व्यादेश क्रियान्वयन में नहीं था और विगत ढाई वर्षों के दौरान तारीख 22 नवंबर, 2003 की संविदा क्रियान्वयन में थी और शीघ्र ही पूर्ण होने वाली थी, इसलिए खंड न्यायपीठ द्वारा स्थगन प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ अंतरिम व्यादेश का कोई भी आदेश प्रदान किए जाने से इनकार कर दिया गया था । उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि संविदा अधिनियम की धारा 27 का निर्वचन जिसका अवलंब खंड न्यायपीठ द्वारा लिया गया, का अनुसरण 1874 से 2006 के मध्य समान और निरंतर रूप से किया गया है और यदि इस पर पुनर्विचार किए जाने की आवश्यकता है तो वह अंतर्वर्ती प्रक्रम पर ही किया जा सकता है । उच्चतम न्यायालय ने पैरा 54 में अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी कंपनी ने एक नकारात्मक प्रसंविदा को प्रवर्तित करने की ईप्सा की थी जो अपीलार्थी के अनुसार करार व्यतीत हो जाने की अवधि तक अधिशेष थी । उच्चतम न्यायालय इस बाबत अभिनिर्धारित किए जाने के प्रयोजनार्थ उच्च न्यायालय से सहमत था कि वह खंड अननुज्ञेय था चूंकि वह खंड संविदा की अवधि के व्यतीत हो जाने के पश्चात् प्रवर्तित किया जाना ईप्सित था, जो संविदा अधिनियम की धारा 27 के अधीन प्रथमदृष्ट्या ही अकृत्य है । इसी प्रकार, से **अरविन्दर सिंह** (उपरोक्त) वाले मामले में तथ्य यह थे कि अपीलार्थी पेशे से रेडियोलॉजिस्ट और पैथालॉजिस्ट थे और मैसर्स एमोलेक्स एक्सरे एंड डायगनॉस्टिक सेंटर के नाम से पैथालॉजी लेबोरेट्री का कारबार चला रहे थे जिसका अधिग्रहण बाद में अपीलार्थियों द्वारा स्थापित कंपनियों द्वारा कर लिया गया था जिसका नाम मैसर्स एमोलैक डायगनॉस्टिक प्राइवेट लिमिटेड था जिसमें उनके द्वारा शत-प्रतिशत इक्विटी धारित थी । तत्पश्चात् प्रत्यर्थी ने कारबार का और मैसर्स एमोलैक डायगनॉस्टिक प्राइवेट लिमिटेड की आस्तियों का अधिग्रहण कर लिया । अपीलार्थियों ने

प्रत्यर्थी के साथ तारीख 26 जनवरी, 2011 के फुटकर कारबार का करार निष्पादित किए जिसके अंतर्गत दोनों प्रत्यर्थी के लिए न्यूनतम दो वर्ष की अवधि के लिए कार्य करने के लिए सहमत हो गए और इस बाबत भी सहमत हो गए कि प्रत्यर्थी के कारबार से पांच वर्ष की अवधि तक कोई प्रतियोगी कारबार नहीं करेंगे । जब मूल वाद फाइल किया गया तो विद्वान् एकल न्यायाधीश ने इस बात को ध्यान में रखते हुए कि चाही गई डिग्री अपीलार्थियों, जो वाद में प्रतिवादी थे, को कोई भी ऐसा कारबार संबंधी क्रियाकलाप चलाने से प्रत्यक्षत: या अप्रत्यक्ष रूप से निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ ईप्सित थी, जिसमें प्रत्यर्थी के साथ प्रतियोगिता संभव थी और इस तथ्य का भी उल्लेख किया कि मैसर्स एमोलैक डायगनॉस्टिक प्राइवेट लिमिटेड की शत-प्रतिशत शेयरधारिता, उसकी ख्याति को भी क्रय कर लिया गया था और तद्नुसार उन्होंने संविदा अधिनियम की धारा 27 के अपवाद का लाभ लेने के लिए आवेदन किया । खंड न्यायपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि यदि किसी को किसी भी प्रकार का विधिपूर्ण पेशा, व्यापार या कारबार चलाने से निषिद्ध किया जाता है, तो उस सीमा तक यह खंड अकृत्य है । उन्होंने अभिनिर्धारित किया कि धारा 27 में प्रयुक्त शब्द पेशा, व्यापार, कारबार विनिर्दिष्ट शब्द हैं और सहचर्येण ज्ञायते (Noscitur a Socials) का नियम लागू होगा और सजाती (Ejusedem Generis) का नियम लागू होगा जो उनको विधायन के उपधारित आशय का अर्थ देने के प्रयोजनार्थ नैसर्गिक अर्थ से दूर करता है । उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थियों को पैथालॉजिस्ट या रेडियोलॉजिस्ट के रूप में किसी भी प्रकार से उनके पेशे को चलाने से प्रतिषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ व्यादेश की परिधि के अंतर्गत लाया जाना उनको किसी भी हैसियत में पैथालॉजिस्ट या रेडियोलॉजिस्ट के रूप में कार्य करने के अक्षम बना देगा और यह संविदा अधिनियम की धारा 27 के विपरीत होगा और प्रत्यर्थी, जो वाद में वादी है, का व्यादेश का आवेदन खारिज कर दिया ।

12. श्री थनाई की दूसरी दलील पर विचार करते हुए कि संविदा की आरंभिक अवधि वर्ष 2021 तक थी और प्रत्यर्थी उस अवधि तक कोई

ऐसा सेंटर आरंभ नहीं कर सकते थे, से भी मैं इस कारणवश सहमत हूं कि उनके द्वारा खंड 7.6 का अवलंब लिया जाना इस प्रयोजनार्थ सुसंगत है कि संविदा की अवधि के दौरान प्रत्यर्थियों से यह अपेक्षित नहीं था कि वे उस कोचिंग सेंटर, जिसके लिए उनको फ्रेंचाइजी दी गई, के अलावा कोई अन्य कोचिंग सेंटर खोलें ।

13. अन्यथा भी, यह अभिवाक् खंड 6.4 स्पष्टत: समाप्ति के प्रभाव को विनिर्धारित करता है और कहीं पर भी यह अनुध्यात नहीं करता है कि प्रत्यर्थी समाप्ति के पश्चात् भी मूल करार, जिसको समाप्त किया जा चुका है, के व्यतीत हो जाने की अवधि तक कोई कोचिंग सेंटर नहीं चला सकते, को गलत ढंग से पढ़े जाने के कारण दिया गया है । श्री थनाई द्वारा जिन निर्णयों का अवलंब लिया गया है और जिनको ऊपर निर्दिष्ट किया गया है, से मुझे इस कारणवश कोई सहायता नहीं मिलती कि **गुजरात बोटलिंग कंपनी लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय ने पैरा 37 में स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया कि चूंकि 1993 के करार के पैरा 14 में समाविष्ट नकारात्मक अनुध्यापन का उपयोजन करार की विद्यमानता की अवधि तक सीमित है और उसमें अधिरोपित निर्बंधन केवल तभी क्रियान्वित होंगे जब 1993 के करार की अवधि अधिशेष होगी, उक्त अनुध्यापन को संविदा अधिनियम की धारा 27 की वर्जना को आकर्षित किए जाने के प्रयोजनार्थ व्यापार पर निर्बंधन अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता । यह मामला तथ्यों के आधार पर विभेदनीय है । इसी प्रकार से जहां तक **निरंजन शंकर गोलिकारी** (उपरोक्त) वाले मामले में दिए गए निर्णय का संबंध है, उच्चतम न्यायालय ने अपील को यह अभिकथित करते हुए खारिज कर दिया कि नकारात्मक प्रसंविदा भिन्न-भिन्न मामलों में भिन्न-भिन्न होती हैं, चूंकि वह उस अवधि के दौरान लागू होती है जब संविदा समाप्त हो चुकी होती है और कुछ मामलों में नकारात्मक प्रसंविदा संविदा की अवधि के दौरान भी क्रियान्वित होती है । विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय दोनों ने अभिनिर्धारित किया कि नियोजन की अवधि के संबंध में नकारात्मक प्रसंविदा और समान प्रकृति के नियोजन को चलाने के लिए, जिसको अपीलार्थी द्वारा चलाया जा रहा है, जब वह प्रत्यर्थी के नियोजन के अधीन था, कंपनी के हित के संरक्षण के लिए युक्तिसंगत

और आवश्यक था । उक्त निर्णय स्पष्टतः विभेदनीय है । जहां तक **बी. एल. बी. इंस्टीट्यूट ऑफ फाइनेंशियल मार्केट्स लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में दिए गए निर्णय का संबंध है, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी ने अपनी सेवा अवधि के दौरान सेवा करार में समाविष्ट नकारात्मक प्रसंविदा का भंग किया है और इसलिए व्यापार के निर्बंधन का सिद्धांत लागू नहीं हो सकता चूंकि न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यर्थी को उस समय तक अपने सेवा करार की शर्तों द्वारा बाध्य अभिनिर्धारित होना चाहिए, जब तक कि मध्यस्थ विवाद में अपना पंचाट न दे दे । यह निर्णय स्पष्टतः विभेदनीय है ।

14. क्योंकि कोई अन्य दलील प्रस्तुत नहीं की गई है, मेरा विचार है कि याची द्वारा की गई प्रार्थना प्रदान नहीं की जा सकती । अतः, याचिका खारिज की जाती है । लागत के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जाता ।

15. दलीलों के अनुक्रम के दौरान दोनों ही पक्षों के काउंसेलों ने इस न्यायालय के समक्ष याची को प्रत्यर्थियों द्वारा करार के अंतर्गत संदेय शुल्क के संबंध में पक्षों के मध्य विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए मध्यस्थ को नियुक्त किए जाने के प्रयोजनार्थ अपनी अनापत्ति प्रस्तुत कर दी है । यदि ऐसी बात है, तो यह न्यायालय वरिष्ठ अधिवक्ता श्री सुधांशु बत्रा को पक्षों के मध्य विवादों के न्यायनिर्णय के लिए एकल मध्यस्थ के रूप में नियुक्त करती है । एकल मध्यस्थ के शुल्क का संदाय 1996 के मध्यस्थ और सुलह अधिनियम की चौथी अनुसूची के अधीन विनियमित होगा । एकल मध्यस्थ को यह स्वतंत्रता होगी कि वह कार्यवाहियों को वीडियो कान्फ्रेंसिंग के माध्यम से संचालित करेगी । पक्ष आरंभिक सुनवाई के लिए एकल मध्यस्थ के समक्ष उनसे उनके मोबाइल संख्या 9811035392 पर वार्ता करने के पश्चात् उपस्थित हो सकते हैं । पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल को स्वतंत्रता है कि वे इस आदेश को एकल मध्यस्थ श्री बत्रा को सूचित कर दें ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

सदानंद सिंह कंस्ट्रक्शन

बनाम

प्रबंध निदेशक, एन. बी. सी. सी.

(2016 की रिट याचिका संख्या 41)

तारीख 5 जून, 2020

न्यायमूर्ति संजय करोल

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26) – धारा 11(4) – मध्यस्थ की नियुक्ति और अधिकारिता – करार में विवाद के निपटारे के लिए माध्यस्थम् खंड का विद्‌यमान न होना – करार में माध्यस्थम् के बाबत नकारात्मक में उल्लेख होना – यह तथ्य कि दोनों पक्ष करार के अंतर्गत परिकल्पित विवाद निस्तारण प्रणाली के निबंधनों के अनुसार विवाद का समाधान कर पाने में विफल रहे और माध्यस्थम् द्‌वारा विवाद का समाधान किए जाने की शर्त नकारात्मक में है – उच्च न्यायालय को माध्यस्थम् द्‌वारा विवाद के निपटारे की अधिकारिता प्रदत्त नहीं होती ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह हैं कि याची ने 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11(4) के उपबंधों के अनुसार मध्यस्थ की नियुक्ति की ईप्सा करते हुए वर्तमान आवेदन/याचिका फाइल की । याची के अनुसार उसके अर्थात् सदानंद सिंह कंस्ट्रक्शन प्राइवेट लिमिटेड, धराहा, जिला मुंगेर, बिहार और प्रत्यर्थी अर्थात् नेशनल बिल्डिंग कंस्ट्रक्शन कारपोरेशन लिमिटेड के मध्य तारीख 16 जनवरी, 2006 को एक करार हुआ, जिसके निबंधनों के अनुसार कतिपय कार्य निष्पादित किए गए थे, कार्य के दौरान पक्षों के मध्य संदायों के संबंध में विवाद उद्भूत हुए और याची ने 2009 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 10983 और 2014 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 14104, **सदानंद सिंह कंस्ट्रक्शन प्राइवेट लिमिटेड** बनाम

नेशनल बिल्डिंग कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड वाले ममले फाइल करते हुए इस न्यायालय की शरण ली जिनमें इस न्यायालय द्वारा याची की शिकायत के निस्तारण के लिए कतिपय निर्देश जारी किए गए । याची द्वारा यह अभिकथित किया गया है कि विवाद के निस्तारण के लिए करार के अंतर्गत उपबंधितख तंत्र का आश्रय लिए जाने के बावजूद प्रत्यर्थी कोई कार्रवाई करने में विफल रहे और इस प्रकार अब उसके समक्ष अन्य कोई विकल्प शेष नहीं रह गया है, सिवाय इसके कि वह 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11(4) के अधीन वर्तमान याचिका फाइल करे । एकमात्र विवाद्यक जो इस न्यायालय के समक्ष विचारार्थ उद्भूत हुआ, यह है कि क्या प्रश्नगत करार में ऐसा कोई खंड समाविष्ट है, जिसके द्वारा दोनों पक्षों ने स्वयं को माध्यस्थम् द्वारा विवाद के निपटारे के लिए बाध्य कर लिया था या नहीं । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित - विधि का यह स्थिरीकृत सिद्धांत है कि मध्यस्थ नियुक्त किए जाने के लिए इस न्यायालय की परिधि, चाहे वह अधिनियम की धारा 11 के अधीन हो, के संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा एस. बी. पी. एंड कंपनी बनाम पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड और एक अन्य और उत्तराखंड पूर्व सैनिक कल्याण निगम लिमिटेड बनाम नार्दर्न कोलफिल्ड लिमिटेड वाले मामले में स्थिरीकृत कर दिया है । आवश्यक रूप से इस न्यायालय से माध्यस्थम् करार की विद्यमानता के बाबत परीक्षण किया जाना अपेक्षित है, जो वर्तमान मामले में पटना उच्च न्यायालय है । मात्र इस कारणवश कि पक्ष करार के अधीन परिकल्पित विवाद निस्तारण प्रणाली के निबंधनों का पालन करने में विफल रहे हैं, इससे माध्यस्थम् द्वारा इस प्रकार के निपटारे के लिए कोई अधिकारिता प्रदत्त नहीं होती और इसके अतिरिक्त वर्तमान मामले में करार की शर्त, जिसके द्वारा माध्यस्थम् की प्रक्रिया द्वारा विवाद का निपटारा किए जाने के लिए कोई सहमति नहीं दी गई है, नकारात्मक में उल्लिखित है । अतः, यह न्यायालय वर्तमान याचिका में कोई गुणागुण नहीं पाती और तद्नुसार खारिज की जाती है और याची को

उन अनुतोषों का आश्रय लेने का अधिकार होगा, जो विधि के अनुसार अन्यथा उपलब्ध हों । (पैरा 5, 6 और 7)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2020]	(2020) 2 एस. सी. सी. 455 = ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 979 : **उत्तराखंड पूर्व सैनिक कल्याण निगम लिमिटेड** बनाम **नार्दन कोलफिल्ड लिमिटेड** ;	5
[2005]	(2005) 8 एस. सी. सी. 618 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 450 = 2005 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 5932 : **एस. बी. पी. एंड कंपनी** बनाम **पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड और एक अन्य** ।	5

आरंभिक (सिविल) अधिकारिता : 2016 की रिट याचिका संख्या 41.

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11 के अधीन याचिका ।

याची की ओर से श्री उदय प्रसाद सिंह

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री सतीश कुमार सिन्हा

आदेश

पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुना ।

2. याची ने 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11(4) के उपबंधों के अनुसार मध्यस्थ की नियुक्ति की ईप्सा करते हुए वर्तमान आवेदन फाइल किया है ।

3. याची के अनुसार उसके अर्थात् सदानंद सिंह कंस्ट्रक्शन प्राइवेट लिमिटेड, धराहा जिला मुंगेर, बिहार और प्रत्यर्थी अर्थात् नेशनल बिल्डिंग कंस्ट्रक्शन कारपोरेशन लिमिटेड के मध्य तारीख 16 जनवरी, 2006 को एक करार हुआ जिसके निबंधनों के अनुसार कतिपय कार्य निष्पादित

किए गए, कार्य के दौरान पक्षों के मध्य संदायों के संबंध में विवाद उद्भूत हुए और याची ने 2009 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 10983 और 2014 की सी. डब्ल्यू. जे. सी. संख्या 14104, **सदानंद सिंह कंस्ट्रक्शन प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **नेशनल बिल्डिंग कंस्ट्रक्शन कंपनी लिमिटेड** वाला मामला फाइल करते हुए इस न्यायालय की शरण ली जिसमें इस न्यायालय द्वारा याची की शिकायत के निस्तारण के लिए कतिपय निर्देश जारी किए गए ।

4. यह अभिकथित किया गया है कि याची द्वारा विवाद के निस्तारण के लिए करार के अंतर्गत उपबंधित तंत्र का आश्रय लिए जाने के बावजूद प्रत्यर्थी कोई कार्रवाई करने में विफल रहे और इस प्रकार अब उसके समक्ष अन्य कोई विकल्प शेष नहीं रह गया है, सिवाय इसके कि वह 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11(4) के अधीन वर्तमान याचिका फाइल करे । एकमात्र विवाद्यक जो हमारे विचारणार्थ वर्तमान याचिका में उद्भूत हुआ, यह है कि क्या प्रश्नगत करार में ऐसा कोई खंड समाविष्ट है, जिसके द्वारा दोनों पक्षों ने स्वयं को माध्यस्थम् द्वारा उनके विवाद के निपटारे के लिए बाध्य कर लिया था या नहीं । तुरंत निर्देश के लिए करार के दो खंडों को नीचे प्रत्युत्पादित किया गया है :-

"24. **विवाद निस्तारण प्रणाली**

यदि किसी प्रकार का कोई विवाद या मतभेद, चाहे वह जो भी हों इस संविदा से या इसके संबंध में या इस संविदा के अंतर्गत निष्पादित किए जाने वाले कार्यों या उन कार्यों के अंतर्गत किए जाने वाले रखरखाव से उद्भूत होंगे, चाहे वे संविदा के आरंभ होने के पहले के हों या कार्य की प्रगति के दौरान के या संविदा की समाप्ति, परित्याग या भंग के पश्चात् के, उस विवाद को सशक्त स्थायी समिति के समक्ष निर्दिष्ट किया जाएगा जिसमें समाविष्ट होंगे –

(i) एक शासकीय सदस्य और सशक्त स्थायी समिति के अध्यक्ष, जो राज्य सरकार के अपर सचिव रैंक से निम्नतर रैंक के न हों ।

(ii) एक गैर-शासकीय सदस्य, जो नेशनल बिल्डिंग कंस्ट्रक्शन लिमिटेड के महाप्रबंधक के रैंक के निम्नतर न हो ।

(iii) एक गैर-शासकीय सदस्य, जो उप प्रबंधक स्तर के तकनीकी विशेषज्ञ होंगे और जिनका चयन ठेकेदार द्वारा तीन व्यक्तियों के उस पैनल में से किया जाएगा जो उसको नियोजक द्वारा दिया जाएगा । प्रत्येक मामले के संबंध में ऐसा कोई भी विनिश्चय, जिसको निर्दिष्ट किया जाएगा, पुनर्विलोकन के अध्यधीन होगा, जैसाकि इसमें इसके ऊपर उपबंधित किया गया है और अंतिम ठेकेदार पर बाध्यकारी होगा । यदि कार्य पहले से ही प्रगति पर है, तो ठेकेदार सक्षम प्राधिकारी के विनिश्चय की प्राप्ति के लंबन के दौरान, जैसाकि ऊपर वर्णित है, सम्यक् तत्परता के साथ कार्य के निष्पादन के लिए अग्रसर होगा, जिसमें उस कार्य का रखरखाव भी सम्मिलित होगा ।

24.1 *** *** ***

24.2 ठेकेदार और नियोजक दस्तावेजी समर्थन के साथ अपने पक्षकथन को लिखित में प्रस्तुत करने के हकदार होंगे ।

यदि ऐसा अपेक्षित हो, तो स्थायी सशक्त समिति ठेकेदार और नियोजक को विनिर्दिष्ट अवधि के लिए लिखित दलीलें देने का एक अवसर प्रदान कर सकती है । सशक्त समिति अपना विनिश्चय अपील की तारीख से 90 दिनों की अवधि के भीतर पारित करेगी, जिसमें विफल रहने पर ठेकेदार विवाद के समाधान के लिए समुचित न्यायालय की शरण ले सकता है ।

24.3 स्थायी सशक्त समिति का विनिश्चय नियोजक पर दावों के संदाय के प्रयोजनार्थ आरंभिक संविदा मूल्य के पांच प्रतिशत तक बाध्यकारी होगा । ठेकेदार 'समस्त दावों के पूर्ण और अंतिम निपटारे में' हस्ताक्षर करने के पश्चात् संदाय स्वीकार और प्राप्त कर सकता है । यदि वह विनिश्चय को स्वीकार नहीं करता तो न्यायालय की शरण लेने से वर्जित नहीं होगा । इसी प्रकार से, यदि नियोजक सशक्त स्थायी समिति के आरंभिक संविदा मूल्य की पांच प्रतिशत

की सीमा के विनिश्चय को स्वीकार नहीं करता, तो वह विधि के अंतर्गत सक्षम न्यायालय की शरण लेने के लिए स्वतंत्र होगा ।

25. **माध्यस्थम्**

25.1 विवाद निस्तारण प्रणाली के खंड 24 के उपबंधों को दृष्टि में रखते हुए संविदा की यह शर्त है कि पक्षों के मध्य किसी विवाद के निपटारे के लिए कोई माध्यस्थम् नहीं होगा । इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि पक्षों ने करार के खंड 24 के निबंधनों के अनुसार विवाद निस्तारण तंत्र उपबंधित किए जाने के लिए सहमति व्यक्त की है और उस समिति को दृष्टि में रखते हुए वे इस बाबत सहमत हैं कि पक्षों के मध्य किसी विवाद के निपटारे के लिए कोई माध्यस्थम् नहीं होगा, जो निबंधन करार के खंड 25 के अधीन उपबंधित है ।"

5. विधि का यह स्थिरीकृत सिद्धांत है कि मध्यस्थ नियुक्त किए जाने के लिए इस न्यायालय की परिधि, चाहे वह अधिनियम की धारा 11 के अधीन हो, के संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ द्वारा **एस. बी. पी. एंड कंपनी** बनाम **पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड और एक अन्य**[1] और **उत्तराखंड पूर्व सैनिक कल्याण निगम लिमिटेड** बनाम **नार्दर्न कोलफिल्ड लिमिटेड**[2] वाले मामले में स्थिरीकृत कर दिया है ।

6. आवश्यक रूप से इस न्यायालय से माध्यस्थम् करार की विद्यमानता के बाबत परीक्षण किया जाना अपेक्षित है, जो वर्तमान मामले में पटना उच्च न्यायालय है । मात्र इस कारणवश कि पक्ष करार के अधीन परिकल्पित विवाद निस्तारण प्रणाली के निबंधनों का पालन करने में विफल रहे हैं, इससे माध्यस्थम् द्वारा इस प्रकार के निपटारे के लिए कोई अधिकारिता प्रदत्त नहीं होती और इसके अतिरिक्त वर्तमान मामले में करार की शर्त, जिसके द्वारा माध्यस्थम् की प्रक्रिया द्वारा विवाद का निपटारा किए जाने के लिए कोई सहमति नहीं दी गई है, नकारात्मक में उल्लिखित है ।

---

[1] (2005) 8 एस. सी. सी. 618 = ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 450 = 2005 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 5932.

[2] (2020) 2 एस. सी. सी. 455 = ए. आई. आर. 2020 एस. सी. 979.

7. अतः, यह न्यायालय वर्तमान याचिका में कोई गुणागुण नहीं पाती और तद्नुसार खारिज की जाती है और याची को उन अनुतोषों का आश्रय लेने का अधिकार होगा, जो विधि के अनुसार अन्यथा उपलब्ध हों ।

8. यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि वह अवधि जिसके लिए याची इस न्यायालय के समक्ष अनुतोष का आश्रय ले रहा है, परिसीमा के प्रयोजनार्थ अपवर्जित की जाएगी ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

(2020) 1 सि. नि. प. 821 **मद्रास**

राधाबाई और एक अन्य

बनाम

जी. भीमन उर्फ भीमा और अन्य

(2008 की द्वितीय अपील संख्या 104)

तारीख 16 मार्च, 2020

न्यायमूर्ति एम. गोविन्द राज

सुखाचार अधिनियम, 1882 (1882 का 5) – धारा 15 – प्रतिवादियों द्वारा सुखाचार का दावा करते हुए आवागमन के मार्ग का दावा – आवश्यकता के आधार पर सुखाचार का दावा – वादी यह साबित किए जाने के बाबत कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत कर पाने में विफल रहे कि उन्होंने उपसेवी भूमि स्वामी की जानकारी में 20 वर्ष से अधिक की अवधि तक शांतिपूर्वक फुटपाथ का उपभोग किया – यदि वादी को अपनी संपत्ति में आवागमन के लिए आनुकल्पिक मार्ग उपलब्ध है, तो वह सुखाचार के अनुतोष के हकदार नहीं है ।

संक्षेप में मामले का तथ्य यह है कि वादियों के पिता श्री वी. विश्वनाथन ने उटाकैमन्ड कस्बे में आर. एस. संख्या 1788 और 1787

में 8.5 सेंट की माप वाली भूमि सुखाचार के समस्त अधिकारों और भूमि के साथ सहबद्ध समस्त लाभों और विशेषाधिकारों सहित तारीख 4 फरवरी, 1980 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख संख्या 218/1980 द्वारा क्रय की थी । उन्होंने उक्त संपत्ति को वादियों के पक्ष में 0.028/16 सेंट प्रत्येक के बराबर-बराबर भागों में विभाजित करके तारीख 20 अक्तूबर, 1981 के रजिस्ट्रीकृत दान विलेख संख्या 305 और 306/81 द्वारा दान कर दिया था । तत्पश्चात् वर्ष 1981 में वादी उक्त दान के फलस्वरूप शांतिपूर्वक भूमि के कब्जे में थे और पांच फीट की चौड़ाई वाले मार्ग (फुटपाथ) के अधिकार का उपभोग अपने-अपने भागों में आवागमन के लिए कर रहे थे, जो उनकी संपत्ति में आवागमन का एकमात्र मार्ग है । फुटपाथ पत्थर की सीढ़ियों द्वारा बनाया गया था, जो नगर निगम कार्यालय मार्ग (फुटपाथ) से आरंभ होता है और वादियों की संपत्ति तक जाता है । मार्ग का अधिकार वादियों और अन्य संलग्न संपत्तियों के स्वामियों के उपभोग और प्रयोग में अत्यधिक लम्बी अवधि से बिना किसी व्यवधान और रुकावट के था । यह वादियों की संपत्ति में आवागमन का एक मात्र मार्ग है और प्रतिवादियों ने अपने पुराने भवन को ढ़हाते हुए उसके स्थान पर नवनिर्माण के आशय से फुटपाथ की दीवार को हटाने का प्रयास किया और तदद्वारा वादियों के संपत्ति के अधिकार का अतिलंघन किया । प्रतिवादियों द्वारा फुटपाथ में अधिष्ठित पत्थरों को हटाने के प्रयास का विरोध किया गया और तारीख 22 जुलाई, 2005 को एक सर्वेक्षण किया गया और इस मार्ग को सामान्य मार्ग घोषित कर दिया गया और अब प्रतिवादियों का इस मार्ग पर कोई दावा नहीं है । वादियों ने इसको वादकारण प्रतीत करते हुए प्रतिवादियों को फुटपाथ को मजबूती प्रदान करने वाली दीवार से पत्थर हटाने और वादियों के मार्ग के अधिकार के शांतिपूर्ण उपभोग में व्यवधान उपस्थित करने से निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ स्थायी व्यादेश का वाद फाइल किया । विचारण न्यायालय ने मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पर विचारोपरांत यह निष्कर्ष निकाला कि वादी के पक्ष में आवश्यकता के आधार पर सुखाधिकार का कोई मामला नहीं बनता और वाद को खारिज कर दिया । वादी ने इस निर्णय के विरुद्ध प्रथम अपील फाइल की और निचले अपीली न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वादी अपने मार्ग के

अधिकार को साबित कर पाने में विफल रहे हैं और वे सुखाधिकार के अधिकार के हकदार नहीं हैं, चूंकि उनको वादी की संपत्ति से आनुकल्पिक मार्ग उपलब्ध है और अपील को खारिज कर दिया । वादी ने इस निर्णय से व्यथित होकर वर्तमान द्वितीय अपील फाइल की है । द्वितीय अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह सामान्य कथन कि वादी के पिता मार्ग और सुखाधिकार के अधिकारों के हकदार थे, प्रतिवादियों द्वारा उनके द्वारा अनन्य प्रयोग के लिए क्रय की गई संपत्ति पर कोई अधिकार सृजित नहीं करते । नक्शे का रेखाचित्र, जिसे प्रदर्श सी-2 के रूप में प्रदर्शित किया गया है, से भी यह साबित होता है कि वादी की संपत्ति की ओर जाने वाला एक पृथक् मार्ग उपलब्ध है । इसके अतिरिक्त राजस्व अभिलेखों, जो प्रदर्श ए-4, ए-5 और बी-7 से बी-10 हैं, स्पष्टत: दर्शित होता है कि वादियों का फुटपाथ के प्रयोग पर कोई भी अधिकार या हित नहीं है, इसके अतिरिक्त उनका कोई सुखाधिकार का अधिकार भी नहीं है । कोई ऐसा व्यक्ति, जो सुखाधिकार के अधिकारों का दावा करता है, को इस बात को साबित करना होगा कि उसको अपनी संपत्ति के आवागमन के लिए उपसेवी संपत्ति, जिसके ऊपर वह सुखाधिकार के अधिकारों का दावा करता है, के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग उपलब्ध नहीं है और वह इस अधिकार का उपभोग 20 वर्षों से अधिक अवधि से बिना किसी व्यवधान के शांतिपूर्वक करता चला आ रहा है । यद्यपि वर्तमान मामले में वादियों ने यह अभिवाक् किया है कि वे और संपत्ति के अन्य स्वामी इस अधिकार का उपभोग कर रहे थे, किंतु वे कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत कर पाने में विफल रहे और इस बात को साबित कर पाने में विफल रहे कि वे फुटपाथ का उपभोग उपसेवी संपत्ति के स्वामी के ज्ञान के बिना शांतिपूर्वक 20 वर्ष से अधिक अवधि से कर रहे थे । इसके विपरीत प्रतिवादियों ने वादी के पक्षकथन को गलत साबित किया और इस बात को मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा साबित कर दिया कि वादी की संपत्ति के आवागमन के लिए आनुकल्पिक मार्ग उपलब्ध है । इसलिए, अपीलार्थियों द्वारा उठाए गए विधि के प्रश्न संख्या 1 एक का उत्तर नकारात्मक में दिया जाता है । जहां तक विधि के प्रश्न संख्या 2 का संबंध है, उनकी संपत्ति के आवागमन का मार्ग पूर्वी दीवार है अर्थात्

नगरपालिका कार्यालय मार्ग । संपत्ति का विभाजन किए जाने के द्‌वारा इस आवागमन के मार्ग को समाप्त नहीं किया गया है और दोनों ही वादियों को एक ही मार्ग से आवागमन का अधिकार प्राप्त है और इसलिए संपत्ति को दो भागों में विभाजित किए जाने के बाद भी संपत्ति के दोनों में से एक अंशधारक को आवागमन का मार्ग उपलब्ध है और दूसरा दावा नहीं कर सकता, यह प्रश्न वर्तमान मामले में उद्भूत नहीं होगा । विचारण न्यायालय द्‌वारा प्रस्तुत किया गया उदाहरण पूर्णतया भिन्न संदर्भ में है और यह उदाहरण वादी के मामले में लागू नहीं होगा, चूंकि दोनों ही संपत्तियों के आवागमन का मार्ग नगरपालिका कार्यालय मार्ग के द्‌वारा है । विधि का द्‌वितीय प्रश्न भी मान्य ठहराए जाने योग्य नही है । संपूर्ण साक्ष्य के परिशीलन से प्रतिवादियों द्‌वारा कोई स्वीकारोक्ति दर्शित नहीं होती । उन्होंने इस बात को स्वीकार नहीं किया है कि वादियों को प्रतिवादियों से संबंधित पत्थर की सीढ़ियों द्‌वारा अनन्य रूप से आवागमन का मार्ग उपलब्ध था, इसके विपरीत साक्ष्य अन्यथा हैं । इसलिए, विधि का प्रश्न संख्या 3 का उत्तर भी अपीलार्थी के विरुद्ध दिया जाता है । (पैरा 14 और 15)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2008 की द्‌वितीय अपील संख्या 104.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्‌वितीय अपील ।

याची की ओर से श्री जी. कुमुद झाबाख

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री एन. दामोदरन

आदेश

वर्तमान द्‌वितीय अपील निचले न्यायालयों द्‌वारा स्थायी व्यादेश के वाद में दिए गए समवर्ती निर्णयों के विरुद्ध फाइल की गई है ।

2. सुविधा की दृष्टि से पक्षों को वाद में उनके क्रमानुसार संबोधित किया गया है ।

3. वादी प्रस्तुत अपील में अपीलार्थी हैं ।

4. वादियों के अनुसार उनके पिता श्री वी. विश्वनाथन ने उटाकैमन्ड कस्बे में आर. एस. संख्या 1788 और 1787 में 8.5 सेंट की माप वाली भूमि सुखाचार के समस्त अधिकारों और उसके साथ सहबद्ध समस्त लाभों और विशेषाधिकारों के साथ सहित तारीख 4 फरवरी, 1980 के रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख संख्या 218/1980 द्वारा क्रय की थी । उन्होंने उक्त संपत्ति को वादियों के पक्ष में 0.028/16 सेंट प्रत्येक के बराबर-बराबर भागों में तारीख 20 अक्तूबर, 1981 के रजिस्ट्रीकृत दान विलेख संख्या 305 और 306/81 द्वारा दान कर दिया था । तत्पश्चात् वर्ष 1981 में वादी उक्त दान के फलस्वरूप शांतिपूर्वक भूमि के कब्जे में थे और पांच फीट की चौड़ाई वाले मार्ग (फुटपाथ) के अधिकार का उपभोग अपने-अपने भागों में आवागमन के लिए कर रहे थे, जो उनकी संपत्ति में आवागमन का एकमात्र मार्ग है । फुटपाथ पत्थर की सीढ़ियों द्वारा बनाया गया, जो नगर निगम कार्यालय मार्ग (फुटपाथ) से आरंभ होता है और वादियों की संपत्ति तक पहुंचता है । मार्ग का अधिकार वादियों और अन्य संलग्न संपत्तियों के स्वामियों के उपभोग और प्रयोग में अत्यधिक लम्बी अवधि से बिना किसी व्यवधान और रुकावट के था । यह वादियों की संपत्ति में आवागमन का एक मात्र मार्ग है और प्रतिवादियों ने अपने पुराने भवन को ढ़हाते हुए उसके स्थान पर नवनिर्माण के आशय से फुटपाथ की दीवार को हटाने का प्रयास किया और तदद्वारा वादियों के संपत्ति के अधिकार का अतिलंघन किया । प्रतिवादियों द्वारा फुटपाथ में अधिष्ठित पत्थरों को हटाने के प्रयास का विरोध किया गया और तारीख 22 जुलाई, 2005 को एक सर्वेक्षण किया गया और इस मार्ग को सामान्य मार्ग घोषित कर दिया गया और अब प्रतिवादियों का इस मार्ग पर कोई दावा नहीं है । इसको वादकारण प्रतीत करते हुए प्रतिवादियों को फुटपाथ को मजबूती प्रदान करने वाली दीवार से पत्थर हटाने से और वादियों के मार्ग के अधिकार के शांतिपूर्ण उपभोग में व्यवधान उपस्थित करने से निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ स्थायी व्यादेश का वाद फाइल किया ।

5. प्रतिवादियों ने वादपत्र में समाविष्ट अभिकथनों से इनकार किया । उनका यह दावा है वादियों के पिता को संपत्ति का विक्रय करने

वाले विक्रेता के पास केवल 7.5 सेंट भूमि थी, जबकि वादी के पिता ने 8.5 सेंट भूमि क्रय कर ली है । क्रय के समय वादी की पूर्वी दीवार को नगर पालिका कार्यालय मार्ग के रूप में दर्शित किया गया था, जो आर. एस. संख्या 1783/2 में स्थित है । वादियों और प्रतिवादियों की संपत्तियों के मध्य एक फुटपाथ विद्‌यमान है । वादियों के पास प्रतिवादियों की भूमि पर कब्जा या मार्ग के उपभोग का अधिकार कभी भी नहीं था, जैसाकि दावा उनके द्‌वारा किया गया । विवादित फुटपाथ का निर्माण प्रतिवादियों द्‌वारा रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख के माध्यम से भूमि को क्रय किए जाने के पश्चात् किया गया था । अनुकल्पित फुटपाथ, जिसे मूल विक्रेता और वादी के पिता के मध्य निष्पादित हुए विक्रय विलेख में दर्शित किया गया है, से स्पष्टत: यह दर्शित होता है कि वादियों को प्रतिवादियों से संबंधित फुटपाथ का अनन्य रूप से प्रयोग करने की कोई आवश्यकता नहीं थी । वास्तव में वादियों ने राजस्व विलेखों में संपत्ति के स्वामियों के रूप में उनके नामों को सम्मिलित किए जाने का प्रयास किया था । उनके पक्ष में पट्टा अंतरित हो गया था और प्रतिवादियों द्‌वारा अपील किए जाने के पश्चात् इस अंतरण की प्रविष्टि को वर्ष 1996 में ही काट दिया गया था और उसकी मूल स्थिति में प्रत्यावर्तित कर दिया गया था । प्रतिवादियों ने सीढ़ियों को कभी भी नहीं हटाया और वादियों को प्रतिवादियों से संबंधित फुटपाथ पर मार्ग का कोई अधिकार उपलब्ध नहीं है । वास्तव में उनको अपनी संपत्ति में आवागमन का अधिकार नगरपालिका मार्ग से है, जो वादियों की संपत्ति की पूर्वी दीवार है ।

6. विचारण न्यायालय ने समुचित विवाद्‌यक विरचित किए । वादी के पति ने स्वमेव अपना परीक्षण वादी साक्षी 1 के रूप में कराया जिसे ए1 और ए2 के रूप में चिह्नित किया गया । प्रतिवादी संख्या 1 और 2 ने अपना परीक्षण प्रतिवादी साक्षी 1 और प्रतिवादी साक्षी 2 के रूप में कराया जिसे प्रदर्श बी-1 से बी-14 के रूप में चिह्नित किया गया । न्यायालय द्‌वारा अधिवक्ता आयुक्त और सर्वेक्षणकर्ता का भी परीक्षण आयुक्त साक्षी 1 और आयुक्त साक्षी 2 के रूप में किया गया, जिन्हें प्रदर्श सी-1 और सी-2 के रूप में चिह्नित किया गया ।

7. विचारण न्यायालय ने मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य पर विचारोपरांत यह निष्कर्ष निकाला कि वादी के पक्ष में आवश्यकता के आधार पर सुखाधिकार का कोई मामला नहीं बनता और वाद को खारिज कर दिया ।

8. वादी ने इस निर्णय के विरुद्ध अपील फाइल की और निचले अपीली न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वादी अपने मार्ग के अधिकार को साबित कर पाने में विफल रहे हैं और यह निष्कर्ष निकाला कि वे सुखाधिकार के अधिकार के हकदार नहीं हैं चूंकि उनको वादी की संपत्ति से आनुकल्पिक मार्ग उपलब्ध है और अपील को खारिज कर दिया । वादी ने इस निर्णय से व्यथित होकर वर्तमान अपील फाइल की है ।

9. इस न्यायालय ने तारीख 17 अगस्त, 2009 को द्वितीय अपील को विधि के निम्नलिखित प्रश्नों के आधार पर विचारार्थ ग्रहण किया :–

"(1) क्या निचले न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में न्यायत: सही है कि भारतीय सुखाचार अधिनियम की धारा 15 के लागू होने के प्रयोजनार्थ संपत्ति का स्वत्व एक पूर्वपेक्षा है ?

(2) क्या निचले न्यायालय यह अभिनिर्धारित करने में न्यायत: सही हैं कि आवश्यकता के आधार पर सुखाधिकार के सिद्धांत को लागू किए जाने के प्रयोजनार्थ वह संपत्ति जिसे दो भागों में विभाजित किए जाने पर कोई एक भाग जिसका कोई मार्ग नहीं है, के बाबत मार्ग का दावा किया जा सकता है ?

(3) क्या निचले न्यायालय न्यायत: साक्ष्य में प्रतिवादी द्वारा की गई स्वीकारोक्ति का अनदेखा करते हुए किसी दस्तावेज की अपेक्षा कर सकते हैं ?"

10. वादियों के विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि प्रतिवादियों ने स्पष्टत: स्वीकार किया है कि वादी उनके द्वारा संपत्ति क्रय किए जाने के पहले भी मार्ग का प्रयोग कर रहे थे । निचले न्यायालय ने वाद को त्रुटिपूर्वक यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया कि वादी मार्ग पर स्वत्व नहीं रखते । उनके पिता द्वारा वर्ष 1991 में निष्पादित दान

विलेख, जो प्रदर्श ए-2 और ए-3 हैं, को चुनौती नहीं दी गई थी और वे उनमें उल्लिखित मार्ग के निरंतर रूप से कब्जे में थे और उसका उपभोग कर रहे थे । इसलिए, उनको आवश्यकता के आधार पर सुखाचार का अधिकार प्रदान किया जाए और इस आधार पर वाद को खारिज किया जाना कि वाद घोषणा के लिए फाइल नहीं किया गया, दोषपूर्ण आधार है । यदि एक बार प्रतिवादी वादियों द्वारा मार्ग के प्रयोग को स्वीकार कर लेते हैं, तो यह निश्चायक सबूत है और जब इस सबूत की पुष्टि राजस्व अभिलेखों द्वारा की जाती है कि इस मार्ग का प्रयोग दोनों पक्षों द्वारा किया जाता रहा है, तो निचले न्यायालयों को वाद को डिक्री कर देना चाहिए था । ऐसा करने में विफल रहना गलत है और 1872 के भारतीय सुखाचार अधिनियम की धारा 15 के स्पष्टीकरण 1 के अनुसार, जब अपीलार्थी मार्ग के अधिकार का उपभोग 20 वर्षों से अधिक अवधि से अपील फाइल किए जाने की तारीख तक बिना किसी व्यवधान के कर रहे थे, जैसाकि वर्ष 1981 के दान विलेख से स्पष्ट है, तो उनके पक्ष में सुखाचार का अधिकार प्रदान किया जाना चाहिए । इसलिए, उन्होंने दलील दी कि निचले न्यायालयों के निर्णयों को पलटा जाना चाहिए ।

11. इसके विपरीत प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि स्वमेव वादियों के पिता की संपत्ति के विक्रेता के कब्जे में केवल 7.5 सेंट भूमि थी । जबकि वादियों के पिता ने जितनी भूमि क्रय की थी, उससे अधिक भूमि प्रतिवादियों की संपत्ति पर अतिक्रमण करने के अंतरस्थ हेतु के साथ दान कर दी ।

12. प्रदर्श ए-2, ए-3, बी-6 और सी-1 के रूप में चिह्नित दस्तावेजों द्वारा यह पूर्णत: साबित हो जाता है कि वादी की संपत्ति के लिए नगरपालिका मार्ग के द्वारा आवागमन का मार्ग विद्यमान हैं । जब आनुकल्पिक मार्ग उपलब्ध है, तो वे आवश्यकता के आधार पर किसी सुखाचार के अधिकार का दावा करने के हकदार नहीं है । साक्षियों की प्रतिपरीक्षा के दौरान यह स्पष्टत: साबित हो गया है कि नगरपालिका कार्यालय की ओर जाने के लिए एक मार्ग है, जो प्रतिवादियों से संबंधित विवादित फुटपाथ और अपीलार्थियों की संपत्तियों के मध्य उपलब्ध है । जब यह बात साबित हो चुकी है कि वादी की संपत्ति को आवागमन के

लिए एक पृथक् मार्ग उपलब्ध है, जो प्रतिवादियों से संबंधित फुटपाथ से लगा हुआ है और यह बात भी साबित हो चुकी है कि पूर्ववर्ती स्वामी द्वारा संपत्ति तक आवागमन की सुविधा उपलब्ध करा दी गई थी, स्वमेव ही इस बात को साबित करती हैं कि वादी किसी भी वैवेकिक और साम्यापूर्ण अनुतोष के हकदार नहीं हैं और निचले न्यायालयों ने वाद को न्यायतः खारिज किया ।

13. मैंने परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार किया ।

14. स्वीकृततः फुटपाथ की माप 5 फीट x 61 फीट है जो विवाद की विषयवस्तु है । वादियों के पिता ने वर्ष 1980 में 8.5 सेंट की माप वाला एक भवन भूखंड क्रय किया था । उन्होंने इस संपत्ति को कार्थियायिनी अम्माल से क्रय किया था । वादी के पिता को भवन भूखंड बेचने वाली विक्रेता उक्त कार्थियायिनी अम्माल ने इस संपत्ति को मीनाक्षी अम्माल नाम एक अन्य महिला से खरीदा था । वर्ष 1961 के विक्रय विलेख प्रदर्श बी-6 के परिशीलन से यह प्रकट होता है कि मात्र 7.5 सेंट की माप वाली भूमि का अंतरण कार्थियायिनी अम्माल के पक्ष में किया गया था जबकि वादी के पिता ने कार्थियायिनी अम्माल से माल के अधिकार और अन्य सुखाधिकारों के साथ 8.5 सेंट की माप वाली भूमि को क्रय किया और विलेख में ऐसा कोई भी दस्तावेजी साक्ष्य या लेखन नहीं था जिसके आधार पर यह कहा जा सके कि उन्होंने अधिक माप की भूमि क्रय की थी । जब वादी के पिता को विक्रय करने वाली महिला ने स्वयं ही केवल 7.5 सेंट माप वाली भूमि क्रय की थी, तो उनके लिए यह संभव नहीं था कि वे उस भूमि से अधिक भूमि का विक्रय करती, जो उनके अधिकार में थी । इसके विपरीत प्रतिवादियों के पक्ष में निष्पादित विक्रय विलेख जिसको प्रदर्श बी-2, बी-3 और बी-4 के रूप में चिह्नित किया गया है, के परिशीलन से स्पष्टतः यह दर्शित होता है कि वादग्रस्त संपत्ति अनन्य रूप से उन से संबंधित थी और वे उस संपत्ति पर स्पष्ट और विधिमान्य स्वत्व रखते हैं । प्रदर्श बी-1, जो कि एक फोटोग्राफ है, के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि विवादित मार्ग के साथ-साथ एक अन्य मार्ग चल रहा है । आयुक्त ने अपनी प्रतिपरीक्षा में स्पष्टतः स्वीकार किया है कि एक मार्ग विद्यमान है, जो वादियों की

संपत्ति से नगरपालिका कार्यालय के मार्ग तक जाता है । वादियों की तरफ से चिह्नांकित प्रदर्शों, जो प्रदर्श ए-2 और ए-3, भी नगरपालिका कार्यालय मार्ग को संपत्ति की पूर्वी दीवार के रूप में दर्शित करते हैं । जब यह बात साबित हो चुकी है कि वादी की संपत्ति को आवागमन के लिए एक अन्य मार्ग नगरपालिका कार्यालय मार्ग के द्वारा विद्यमान है, तो अपीलार्थियों का यह दावा कि उनको वर्ष 1991 में निष्पादित हुए दान विलेख के माध्यम से सुखाधिकार के अधिकार प्राप्त थे, मान्य नहीं ठहराया जा सकता । वर्ष 1991 में निष्पादित किया गया दान विलेख पिता द्वारा पुत्रियों के पक्ष में निष्पादित किया गया था, जो स्वयं प्रमाणित दस्तावेज है । प्रतिवादी इस दस्तावेज के पक्ष नहीं हैं । वादियों के पिता के मूल विक्रेता द्वारा निष्पादित विक्रय विलेख में 5 फीट × 61 फीट माप वाले फुटपाथ के बारे में कोई उल्लेख नहीं है । यह सामान्य कथन कि वादी के पिता मार्ग और सुखाधिकार के अधिकारों के हकदार थे, प्रतिवादियों द्वारा उनके द्वारा अनन्य प्रयोग के लिए क्रय की गई संपत्ति पर कोई अधिकार सृजित नहीं करते । नक्शे का रेखाचित्र, जिसे प्रदर्श सी-2 के रूप में प्रदर्शित किया गया है, से भी यह साबित होता है कि वादी की संपत्ति की ओर जाने वाला एक पृथक् मार्ग उपलब्ध है । इसके अतिरिक्त राजस्व अभिलेखों, जो प्रदर्श ए-4, ए-5 और बी-7 से बी-10 हैं, स्पष्टत: दर्शित होता है कि वादियों का फुटपाथ के प्रयोग पर कोई भी अधिकार या हित नहीं है, इसके अतिरिक्त उनका कोई सुखाधिकार का अधिकार भी नहीं है । कोई ऐसा व्यक्ति, जो सुखाधिकार के अधिकारों का दावा करता है, को इस बात को साबित करना होगा कि उसको अपनी संपत्ति के आवागमन के लिए उपसेवी संपत्ति, जिसके ऊपर वह सुखाधिकार के अधिकारों का दावा करता है, के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग उपलब्ध नहीं है और वह इस अधिकार का उपभोग 20 वर्षों से अधिक अवधि से बिना किसी व्यवधान के शांतिपूर्वक करता चला आ रहा है । यद्यपि वर्तमान मामले में वादियों ने यह अभिवाक् किया है कि वे और संपत्ति के अन्य स्वामी इस अधिकार का उपभोग कर रहे थे, किंतु वे कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत कर पाने में विफल रहे और इस बात को साबित कर पाने में विफल रहे कि वे फुटपाथ का उपभोग उपसेवी संपत्ति के स्वामी के ज्ञान के बिना शांतिपूर्वक 20 वर्ष

से अधिक अवधि से कर रहे थे । इसके विपरीत प्रतिवादियों ने वादी के पक्षकथन को गलत साबित किया और इस बात को मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा साबित कर दिया कि वादी की संपत्ति के आवागमन के लिए आनुकल्पिक मार्ग उपलब्ध है । इसलिए, अपीलार्थियों द्वारा उठाए गए विधि के प्रश्न संख्या 1 एक का उत्तर नकारात्मक में दिया जाता है ।

15. जहां तक विधि के प्रश्न संख्या 2 का संबंध है, उनकी संपत्ति के आवागमन का मार्ग पूर्वी दीवार है अर्थात् नगरपालिका कार्यालय मार्ग । संपत्ति का विभाजन किए जाने के द्वारा इस आवागमन के मार्ग को समाप्त नहीं किया गया है और दोनों ही वादियों को एक ही मार्ग से आवागमन का अधिकार प्राप्त है और इसलिए संपत्ति को दो भागों में विभाजित किए जाने के बाद भी संपत्ति के दोनों में से एक अंशधारक को आवागमन का मार्ग उपलब्ध है और दूसरा दावा नहीं कर सकता, यह प्रश्न वर्तमान मामले में उद्भूत नहीं होगा । विचारण न्यायालय द्वारा प्रस्तुत किया गया उदाहरण पूर्णतया भिन्न संदर्भ में है और यह उदाहरण वादी के मामले में लागू नहीं होगा, चूंकि दोनों ही संपत्तियों के आवागमन का मार्ग नगरपालिका कार्यालय मार्ग के द्वारा है । विधि का द्वितीय प्रश्न भी मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है । संपूर्ण साक्ष्य के परिशीलन से प्रतिवादियों द्वारा कोई स्वीकारोक्ति दर्शित नहीं होती । उन्होंने इस बात को स्वीकार नहीं किया है कि वादियों को प्रतिवादियों से संबंधित पत्थर की सीढ़ियों द्वारा अनन्य रूप से आवागमन का मार्ग उपलब्ध था, इसके विपरीत साक्ष्य अन्यथा हैं । इसलिए, विधि का प्रश्न संख्या 3 का उत्तर भी अपीलार्थी के विरुद्ध दिया जाता है ।

16. परिणामतः, यह द्वितीय अपील खारिज की जाती है । लागत के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जाता । संबद्ध प्रकीर्ण याचिका बंद की जाती है ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

धर्मेन्द्र रघुबंशी

बनाम

राधा गोयल

(2019 की प्रकीर्ण रिट याचिका संख्या 5417)

तारीख 5 जून, 2020

न्यायमूर्ति वंदना कासरेकर

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 (1963 का 47) – धारा 20 [सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 का आदेश 1, नियम 10] – विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद – तृतीय पक्ष द्वारा वाद में पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के लिए आवेदन – यदि तृतीय पक्ष द्वारा वादग्रस्त संपत्ति के स्वत्व और हित के संबंध में उचित और तर्कसंगत साक्ष्य प्रस्तुत किए जाते हैं, तो उसे वाद के पक्ष के रूप में संयोजित किया जा सकता है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 वादियों ने प्रत्यर्थी संख्या 3 (मूल वाद का प्रतिवादी संख्या 1) के विरुद्ध तहसील और जिला धार के डेडला ग्राम में स्थित भूमि, जिसका सर्वे संख्या 472/1/2, क्षेत्रफल 0.565 हेक्टेयर है, के संबंध में संविदा के बाबत विनिर्दिष्ट पालन और अनुषंगिक अनुतोष का दावा करते हुए सिविल वाद फाइल किया । यह वाद तारीख 14 मई, 2018 को तारीख 15 सितंबर, 2016 के अभिकथित करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए फाइल किया गया । इस वाद के लंबन के दौरान प्रत्यर्थी संख्या 3 ने वादग्रस्त भूमि के संबंध में तारीख 8 जुलाई, 2019 को एक रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख इसमें के याची के पक्ष में निष्पादित कर दिया, जिसके आधार पर वादग्रस्त भूमि का कब्जा याची को हस्तगत कर दिया गया । इस प्रकार याची ने संपूर्ण विक्रय प्रतिफल का संदाय करके वादग्रस्त भूमि क्रय कर ली और वह वादग्रस्त भूमि का वादियों और प्रतिवादी संख्या 1 के मध्य पूर्ववर्ती करार या उक्त सिविल वाद के लंबन की सूचना के बिना सद्भाविक क्रेता हो गया । याची ने इस विक्रय विलेख के आधार पर

राजस्व प्राधिकारियों के समक्ष नामांतरण के लिए आवेदन किया और नामांतरण कार्यवाहियों के अनुक्रम के दौरान वादियों द्वारा संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए फाइल किए गए वाद के लंबन के आधार पर नामांतरण आक्षेप उठाए गए, जिस पर याची को वर्तमान वाद के लंबन के संबंध में प्रथम बार सूचना प्राप्त हुई । तत्पश्चात् याची ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 सपठित धारा 151 के अधीन विचारण न्यायालय के समक्ष वाद में याची को प्रतिवादी के रूप में पक्ष बनाए जाने के लिए आवेदन फाइल किया ताकि वाद की प्रतिरक्षा उचित प्रकार से की जा सके और वाद के पक्षों के मध्य किसी भी प्रकार की दुरभिसंधि के कारण उसके अधिकारों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े । प्रत्यर्थियों ने याची द्वारा फाइल किए गए आवेदन का विरोध किया । तत्पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने याची द्वारा आदेश 1, नियम 10 के अधीन फाइल किए गए आवेदन पर दलीलें सुनने के पश्चात् तारीख 30 सितंबर, 2019 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया । याची ने इस आदेश से व्यथित होकर वर्तमान याचिका फाइल की है । याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – पूर्वोक्त विनिश्चयों को दृष्टि में रखते हुए मेरा यह विचार है कि इस प्रतिपादना को आत्यंतिक प्रतिपादना के रूप में अधिकथित नहीं किया जा सकता कि जब कभी भी 'ए' द्वारा विनिर्दिष्ट पालन के लिए कोई वाद 'बी' के विरुद्ध फाइल किया जाता है, तो तृतीय पक्ष 'सी' को उस वाद में कभी भी संयोजित नहीं किया जा सकता । मेरे विचार से यदि 'सी' स्वत्व या हित के बाबत कोई उचित संगतता दर्शित कर सकता है, तो वह निश्चित रूप से संयोजन के लिए आवेदन फाइल कर सकता है । इस प्रतिपादना के विरुद्ध विपरीत दृष्टिकोण अपनाना कार्यवाहियों की गुणजता को जन्म देगा क्योंकि तब 'सी' को तब तक प्रतीक्षा करनी होगी जब तक कि 'बी' के विरुद्ध डिक्री पारित नहीं हो जाती और तत्पश्चात् उसको इस आधार पर डिक्री के रद्दकरण के लिए वाद फाइल करना होगा कि 'ए' को विवादित संपत्ति में कोई स्वत्व प्राप्त नहीं था । स्पष्टतः इस प्रकार के मत का समर्थन नहीं किया जा सकता । अन्यथा रूप से भी इस मामले में ऊपर की गई चर्चा के

अनुसार मामले का भविष्य याची के अधिकार को प्रत्यक्षत: प्रभावित करेगा, इसलिए उसको पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने की अनुज्ञा प्रदान की जानी चाहिए । जहां तक याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा गुरमीत सिंह भाटिया वाले मामले में पारित निर्णय को उद्धृत किए जाने का संबंध है, यह पहले ही अभिकथित किया जा चुका है कि यह निर्णय जबलपुर बस ऑपरेटर एसोसिएशन और अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य वाले मामले में इस न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ द्वारा अधिकथित विधि को दृष्टि में रखते हुए लागू होगा । अत: ऊपर की गई चर्चा और इस न्यायालय द्वारा उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए अनेक विनिश्चयों का उल्लेख करते हुए व्यक्त किए गए विचार को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट है कि यह उचित मामला है जिसमें इस न्यायालय को मध्यक्षेप करना चाहिए चूंकि निचले न्यायालय ने मामले के तात्विक पहलू पर विचार नहीं किया है और याची को पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत किए गए आवेदन को अस्वीकृत करके अपनी अधिकारिता के परे जाकर कार्य किया है । तथापि, निचले न्यायालय द्वारा पारित आदेश पर विचार करते हुए यदि यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि निचले न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष दूषित है और विधि अनुसार नहीं है, तो इस न्यायालय को अपनी अधीक्षण अधिकारिता के अधीन मामले में मध्यक्षेप करने का अधिकार है । उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट है कि वे मामले जिनका प्रत्यर्थियों ने अवलंब लिया है, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर लागू नहीं होते । (पैरा 16, 17 और 18)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 3577 : **गुरमीत सिंह भाटिया** बनाम **किरण कांत रॉबिन्सन** ;	8, 9, 10, 14, 17
[2019]	ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 मध्य प्रदेश 1134 : **तिलक सहकारी गृह निर्माण संस्था** बनाम **अकील अहमद और अन्य** ;	12

[2017]	2017 एस. सी. सी. ऑनलाइन मद्रास 41 और 48 = (2017) 1 एम. डब्ल्यू. एन. (सिविल) 647 : **भाग्य लक्ष्मी** बनाम **कनगराज** ;	14
[2013]	2013 एस. सी. सी. ऑनलाइन मद्रास 3230 : **मणिकंदन और अन्य** बनाम **इस्माइल और अन्य** ;	14
[2013]	ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2389 : **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड** बनाम **नानक बिल्डर्स** ;	7, 9, 12
[2008]	ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2134 : **भरत कारसनदास ठक्कर** बनाम **किरण कंस्ट्रक्सन कंपनी और अन्य** ;	14
[2007]	ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 3166 : **सुमतिबाई** बनाम **पारस फाइनेंस** ;	11, 12
[2005]	ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 2813 : **कस्तूरी** बनाम **इयामपेरुमल** ;	10, 11
[2003]	ए. आई. आर. 2003 मध्य प्रदेश 81 : **जबलपुर बस ऑपरेटर एसोसिएशन और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य** ।	17

अपीली रिट अधिकारिता : 2019 की प्रकीर्ण रिट याचिका संख्या 5417.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री नितिन फड़के

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री रजत रघुबंशी

आदेश

याची ने वर्तमान रिट याचिका संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन 2018 के सिविल वाद संख्या 59-ए में धार के प्रथम सिविल न्यायाधीश, वर्ग-1 के न्यायालय के प्रथम अपर न्यायाधीश द्वारा पारित तारीख 30

नवंबर, 2019 (संलग्नक - पी/1) के आदेश को चुनौती देते हुए फाइल की है, जिसके द्वारा याची द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 के अधीन फाइल किए गए आवेदन को अस्वीकृत कर दिया गया ।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 वादियों ने प्रत्यर्थी संख्या 3 (प्रतिवादी संख्या 1) के विरुद्ध तहसील और जिला धार के डेडला ग्राम में स्थित सर्वे संख्या 472/1/2, जिसका क्षेत्रफल 0.565 हेक्टेयर है, धारण करने वाली वादग्रस्त भूमि के संबंध में संविदा के बाबत विनिर्दिष्ट पालन और अनुषंगिक अनुतोष का दावा करते हुए सिविल वाद फाइल किया ।

3. पूर्वोक्त वाद को तारीख 14 मई, 2018 को तारीख 15 सितंबर, 2016 के अभिकथित करार के विनिर्दिष्ट पालन के लिए फाइल किया गया है । इस वाद के लंबन के दौरान प्रत्यर्थी संख्या 3 ने तारीख 8 जुलाई, 2019 को एक रजिस्ट्रीकृत विक्रय विलेख वादग्रस्त भूमि के संबंध में इसमें के याची के पक्ष में निष्पादित किया जिसके आधार पर वादग्रस्त भूमि का कब्जा याची को हस्तगत किया जा चुका है । याची ने संपूर्ण विक्रय प्रतिफल का संदाय करके वादग्रस्त भूमि क्रय कर ली है और वह वादग्रस्त भूमि का वादियों और प्रतिवादी संख्या 1 के मध्य पूर्ववर्ती करार या उक्त सिविल वाद के लंबन की सूचना के बिना सद्भाविक क्रेता है ।

4. याची ने पूर्वोक्त विक्रय विलेख के आधार पर राजस्व प्राधिकारियों के समक्ष नामांतरण के लिए आवेदन किया और नामांतरण कार्यवाहियों के अनुक्रम के दौरान वादियों द्वारा संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए फाइल किए गए वर्तमान वाद के लंबन के आधार पर नामांतरण के संबंध में वादियों द्वारा आक्षेप उठाए गए, जिस पर याची को वर्तमान वाद के लंबन के संबंध में प्रथम बार सूचना प्राप्त हुई । तत्पश्चात् याची ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 सपठित धारा 151 के अधीन विचारण न्यायालय के समक्ष वाद में याची को प्रतिवादी के रूप में पक्ष बनाए जाने के लिए आवेदन फाइल किया, जिससे कि वाद की प्रतिरक्षा उचित प्रकार से की जा सके और वाद के

पक्षों के मध्य किसी भी प्रकार की दुरभिसंधि के कारण उसके अधिकारों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े । प्रत्यर्थियों ने याची द्वारा फाइल किए गए आवेदन का विरोध किया । तत्पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने याची द्वारा आदेश 1, नियम 10 के अधीन फाइल किए गए आवेदन पर दलीलें सुनने के पश्चात् तारीख 30 सितंबर, 2019 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया । याची ने इस आदेश से व्यथित होकर वर्तमान याचिका फाइल की है ।

5. याची के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि निचले न्यायालय ने 1882 के संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 के उपबंधों का गलत निर्वचन करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित किया गया आक्षेपित आदेश इस बात पर विचार किए बिना पारित किया गया है कि याची वादग्रस्त भूमि का सद्भाविक क्रेता था और उसको वर्तमान वाद की जानकारी या सूचना नहीं थी और इन परिस्थितियों में याची को वाद में प्रतिवादी के रूप में पक्ष बनाया जाना मुकदमेबाजी में जटिलताओं से बचने और मुकदमेबाजी की गुणजता को रोकने के लिए आवश्यक था । आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह ज्ञात होता है कि विचारण न्यायालय ने इस आवेदन पर विचार करते हुए परोक्ष रूप से उक्त विक्रय विलेख को अकृत और शून्य अभिनिर्धारित कर दिया और तद्नुसार घोर अधिकारिता संबंधी त्रुटि कारित की है । निचला न्यायालय इस बात पर विचार करने में विफल रहा कि याची को पक्ष बनाया जाना आवश्यक था, चूंकि वह उचित और आवश्यक पक्ष है ।

6. याची के विद्वान् काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि याची वादग्रस्त भूमि के मूल्यवान प्रतिफल के संदाय के कारण सद्भाविक क्रेता है और उसको लंबित मुकदमेबाजी की कोई सूचना नहीं थी । उन्होंने निवेदन किया कि चूंकि प्रतिवादी संख्या 1 ने वादग्रस्त भूमि याची को संपूर्ण विक्रय प्रतिफल प्राप्त करने के पश्चात् विक्रय की है, इसलिए, यह संभव है कि प्रतिवादी संख्या 1 वाद की प्रतिरक्षा गंभीरता के साथ न करे या यह भी संभव है कि वह वादी के साथ दुरभिसंधि कर ले । इन दोनों ही अधिसंभाव्यताओं का परिणाम यह होगा कि याची के हितों पर

घोर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और उसको हानि का सामना करना पड़ेगा । पूर्वोक्त स्थिति की अधिसंभाव्यता को निराकृत्य किए जाने और याची के हित का संरक्षण किए जाने के प्रयोजनार्थ यह न्यायहित में होगा कि उसको सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 22, नियम 10 के उपबंधों को दृष्टि में रखते हुए वाद में प्रतिवादी के रूप में पक्ष बनाया जाए ।

7. उन्होंने आगे निवेदन किया कि वाद के लंबन के दौरान वादग्रस्त संपत्ति के विक्रय के अवैध प्रभाव पर माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड** बनाम **नानक बिल्डर्स**[1] वाले मामले में विचार किया गया है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस निर्णय के पैरा 24 और 58(2) और (3) में संपत्ति अंतरण अधिनियम की धारा 52 के उपबंधों और साथ ही पूर्ववर्ती निर्णयज विधियों पर विचारोपरांत निम्नलिखित शब्दों में अधिकथित किया है :-

> "24. यह सुस्थापित विधि है कि निर्णीतानुसरण का सिद्धांत ऐसा सिद्धांत है, जो इस सिद्धांत पर आधारित है कि यह न्याय प्रशासन के लिए आवश्यक है कि किसी वाद में न्यायालय द्वारा दिया गया विनिश्चय न केवल मुकदमेबाजी में अंतर्वलित पक्षों पर बाध्यकारी होना चाहिए, बल्कि उन सभी पर बाध्यकारी होना चाहिए जिन्होंने वाद के लंबन के दौरान स्वत्व अभिप्राप्त किया है । इस सिद्धांत के उपबंध वास्तव में किसी अंतरण को, जो अन्यथा रूप से न किया गया हो, शून्य करते हैं बल्कि मुकदमेबाजी के पक्षों के अधिकारों के अधीन भी करते हैं ।
>
> 58(2) वाद के लंबन के दौरान अपीलार्थी के पक्ष में अंतरण का प्रभाव उसके पक्ष में स्वत्व का अंतरण किए जाने का है, किंतु ऐसा स्वत्व वाद में वादी के अधिकारों के अधीन रहेगा और किसी ऐसे निर्देश के अधीन रहेगा जिसे न्यायालय ने उसमें समस्त परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए पारित किया हो ।
>
> (3) चूंकि अपीलार्थी ने संपूर्ण संपत्ति, जो वाद की विषय-वस्तु

[1] ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 2389.

है, को क्रय कर लिया है, इसलिए अपीलार्थी वाद में प्रतिवादी के रूप में संयोजित किए जाने का हकदार है ।"

8. उन्होंने निवेदन किया कि **गुरमीत सिंह भाटिया** बनाम **किरण कांत रॉबिन्सन**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय इन तथ्यों के आधार पर विभेदनीय है कि इस मामले में प्रतिवादी द्वारा विक्रय विलेख अस्थायी व्यादेश के आदेश के भंग में निष्पादित किया गया था, जबकि वर्तमान मामले में विचारण न्यायालय द्वारा अस्थायी व्यादेश का कोई भी आदेश पारित नहीं किया गया है ।

9. उन्होंने ससम्मान निवेदन किया कि चूंकि **गुरमीत सिंह भाटिया** (उपरोक्त) वाले मामले में दिया गया विनिश्चय उस न्यायपीठ द्वारा पारित किया गया है जिसमें दो माननीय न्यायाधीश सम्मिलित थे और इस विनिश्चय में **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले, जिसे समान सामर्थ्य वाली न्यायपीठ द्वारा पारित किया गया था, में दिए गए पूर्ववर्ती विनिश्चय पर विचार नहीं किया गया या उस विनिश्चय पर कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया और इसलिए इस माननीय न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ द्वारा अधिकथित विधि को दृष्टि में रखते हुए **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में दिया गया पूर्ववर्ती विनिश्चय निर्णयज विधि के रूप में बाध्यकारी होगा ।

10. उन्होंने निवेदन किया कि **गुरमीत सिंह भाटिया** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया गया विनिश्चय **कस्तूरी** बनाम **इयामपेरुमल**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए विनिश्चय पर आधारित है, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए फाइल किए गए वाद में तृतीय पक्ष, जिसका दावा वादग्रस्त संपत्ति के स्वतंत्र स्वत्व और कब्जे पर आधारित था, को संयोजित किए जाने के संबंध में विरचित विवाद्यक पर विचार किया । यह पूर्वोक्त निर्णय के आरंभिक पैरा में ही माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा विरचित विधि के प्रश्न से स्पष्ट है, जो निम्नलिखित है :-

---

[1] ए. आई. आर. 2019 एस. सी. 3577.

[2] ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 2813.

"एक मात्र प्रश्न जिसे इस मामले में निर्णीत किए जाने की आवश्यकता है, यह है कि क्या किसी संपत्ति के विक्रय के लिए संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए फाइल किए गए किसी वाद, जिसे क्रेता द्वारा विक्रेता के विरुद्ध संस्थित कराया गया है, में संविदा का कोई तृतीय पक्ष यह दावा करते हुए कि उसका संविदात्मक संपत्ति पर स्वतंत्र स्वत्व और कब्जा है और वह उक्त वाद में पक्ष/प्रतिवादी के रूप में संयोजित किए जाने का हकदार है ।"

11. इसके पश्चात् माननीय उच्चतम न्यायालय ने **सुमतिबाई** बनाम **पारस फाइनेंस**[1] वाले मामले में **कस्तूरी** (उपरोक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि को निर्णय के पैरा 14 (पृष्ठ 3169) पर विभेदित किया, जो निम्नलिखित है :-

"14. पूर्वोक्त विनिश्चय को दृष्टि में रखते हुए हमारा यह विचार है कि **कस्तूरी** (उपरोक्त) वाला मामला स्पष्टत: विभेदनीय है । हमारे विचार में इसे आत्यंतिक प्रतिपादना के रूप में अधिकथित नहीं किया जा सकता कि जब कभी भी विनिर्दिष्ट पालन के लिए कोई वाद 'ए' द्वारा 'बी' के विरुद्ध फाइल किया जाता है, तो तृतीय पक्ष 'सी' को उस वाद में कभी भी संयोजित नहीं किया जा सकता"

12. उन्होंने निवेदन किया कि **सुमतिबाई** (उपरोक्त) और **थॉमसन प्रेस (इंडिया) लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि का अनुसरण इस माननीय न्यायालय द्वारा **तिलक सहकारी गृह निर्माण संस्था** बनाम **अकील अहमद और अन्य**[2] वाले मामले में किया गया है और उस मामले में याची द्वारा संयोजित किए जाने के लिए की गई प्रार्थना को निर्णय के पैरा 26 और 38 में यह अभिनिर्धारित करते हुए मंजूर किया गया है :-

"26. अत:, ऊपर की गई चर्चा और विभिन्न न्यायालयों द्वारा व्यक्त किए गए विचारों को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट है कि क्या किसी मध्यक्षेपी, जिसे पक्ष के रूप में सम्मिलित किया जाना

---

[1] ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 3166.

[2] ए. आई. आर. ऑनलाइन 2019 मध्य प्रदेश 1134.

है या नहीं, इस तथ्य पर निर्भर करता है कि क्या उसके असंयोजन से उसके अधिकार प्रभावित होंगे । यदि ऐसा है, तो उसकी उपस्थिति आवश्यक है ।

38. ऊपर की गई चर्चा और इस न्यायालय द्वारा उच्चतम न्यायालय और साथ ही उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए विभिन्न विनिश्चयों का उल्लेख करते हुए व्यक्त किए गए विचारों को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट है कि यह एक उचित मामला है जिसमें यह न्यायालय मध्यक्षेप कर सकता है, चूंकि निचले न्यायालय ने मामले के तात्विक पहलू पर विचार नहीं किया है और याची को पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत किए गए आवेदन को अस्वीकृत करके अपनी अधिकारिता के परे जाकर कार्य किया है ।"

13. उन्होंने आगे निवेदन किया कि याची वर्तमान मामले में वादग्रस्त भूमि के स्वतंत्र स्वत्व का दावा नहीं कर रहा है और वास्तव में संयोजन के लिए उसकी प्रार्थना उस विक्रय विलेख पर आधारित है जिसको प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा उसके पक्ष में वाद के लंबन के दौरान निष्पादित किया गया है । प्रतिवादी के रूप में याची के संयोजन से न तो वाद की प्रकृति किसी भी प्रकार से परिवर्तित होगी और न ही इसके परिणामस्वरूप वादियों के हितों पर किसी प्रकार का कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा । अतः, उन्होंने उपरोक्त तथ्यों और निवेदनों को ध्यान में रखते हुए निवेदन किया कि वर्तमान प्रकीर्ण याचिका मंजूर की जाए ।

14. प्रत्यर्थियों के काउंसेल ने याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई दलीलों का विरोध किया और निवेदन किया कि याची द्वारा फाइल किए गए आवेदन पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया जाना चाहिए, चूंकि यह न्यायालय और विधि की प्रक्रिया का दुरूपयोग है । इसके अतिरिक्त प्रत्यर्थी ने यह भी अभिकथित किया कि विनिर्दिष्ट पालन के लिए फाइल किए गए वाद में किसी अन्य पक्ष को प्रस्तावित नहीं किया जा सकता, केवल आवश्यक और उचित पक्ष को ही संयोजित किया जा सकता है । उन्होंने आगे निवेदन किया कि याचिका पूर्णतः भ्रमपूर्ण है और यह याचिका मात्र वाद के विचारण को विलंबित करने के लिए फाइल की गई

है और इसलिए उन्होंने प्रार्थना की कि आवेदन और साथ ही याचिका को खारिज किया जाए । उन्होंने प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 (मूल वादी) द्वारा **गुरमीत सिंह भाटिया** (उपरोक्त), **भरत कारसनदास ठक्कर** बनाम **किरण कंस्ट्रक्सन कंपनी और अन्य**[1], **भाग्य लक्ष्मी** बनाम **कनगराज**[2] और **मणिकंदन और अन्य** बनाम **इस्माइल और अन्य**[3] वाले मामलों में उद्धृत निर्णय का सार भी अपने निवेदनों के समर्थन में फाइल किया ।

15. पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख का परिशीलन किया ।

16. पूर्वोक्त विनिश्चयों को दृष्टि में रखते हुए मेरा यह विचार है कि इस प्रतिपादना को आत्यंतिक प्रतिपादना के रूप में अधिकथित नहीं किया जा सकता कि जब कभी भी 'ए' द्वारा विनिर्दिष्ट पालन के लिए कोई वाद 'बी' के विरुद्ध फाइल किया जाता है, तो तृतीय पक्ष 'सी' को उस वाद में कभी भी संयोजित नहीं किया जा सकता । मेरे विचार से यदि 'सी' स्वत्व या हित के बाबत कोई उचित संगतता दर्शित कर सकता है, तो वह निश्चित रूप से संयोजन के लिए आवेदन फाइल कर सकता है । इस प्रतिपादना के विरुद्ध विपरीत दृष्टिकोण अपनाना कार्यवाहियों की गुणजता को जन्म देगा क्योंकि तब 'सी' को तब तक प्रतीक्षा करनी होगी जब तक कि 'बी' के विरुद्ध डिक्री पारित नहीं हो जाती और तत्पश्चात् उसको इस आधार पर डिक्री के रद्दकरण के लिए वाद फाइल करना होगा कि 'ए' को विवादित संपत्ति में कोई स्वत्व प्राप्त नहीं था । स्पष्टत: इस प्रकार के मत का समर्थन नहीं किया जा सकता । अन्यथा रूप से भी इस मामले में ऊपर की गई चर्चा के अनुसार मामले का भविष्य याची के अधिकार को प्रत्यक्षत: प्रभावित करेगा इसलिए उसको पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने की अनुज्ञा प्रदान की जानी चाहिए ।

17. जहां तक याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा **गुरमीत सिंह भाटिया** (उपरोक्त) वाले मामले में पारित निर्णय को उद्धृत किए जाने का

---

[1] ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2134.

[2] 2017 एस. सी. सी. ऑनलाइन मद्रास 41 और 48 = (2017) 1 एम. डब्ल्यू. एन. (सिविल) 647.

[3] 2013 एस. सी. सी. ऑनलाइन मद्रास 3230.

संबंध है, यह पहले ही अभिकथित किया जा चुका है कि यह निर्णय **जबलपुर बस ऑपरेटर एसोसिएशन और अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ द्वारा अधिकथित विधि को दृष्टि में रखते हुए लागू होगा ।

18. अत: ऊपर की गई चर्चा और इस न्यायालय द्वारा उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए अनेक विनिश्चयों का उल्लेख करते हुए व्यक्त किए गए विचार को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट है कि यह उचित मामला है जिसमें इस न्यायालय को मध्यक्षेप करना चाहिए चूंकि निचले न्यायालय ने मामले के तात्विक पहलू पर विचार नहीं किया है और याची को पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत किए गए आवेदन को अस्वीकृत करके अपनी अधिकारिता के परे जाकर कार्य किया है । तथापि, निचले न्यायालय द्वारा पारित आदेश पर विचार करते हुए यदि यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि निचले न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष दूषित है और विधि अनुसार नहीं है, तो इस न्यायालय को अपनी अधीक्षण अधिकारिता के अधीन मामले में मध्यक्षेप करने का अधिकार है ।

19. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए यह स्पष्ट है कि वे मामले जिनका प्रत्यर्थियों ने अवलंब लिया है, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर लागू नहीं होते ।

20. परिणामस्वरूप याचिका मंजूर की जाती है । तारीख 30 सितंबर, 2019 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है । तद्नुसार, याची द्वारा संयोजन के लिए फाइल किए गए आवेदन को मंजूर किया जाता है ।

याचिका मंजूर की गई ।

शु.

---

[1] ए. आई. आर. 2003 मध्य प्रदेश 81.

गगन सिंह और एक अन्य

बनाम

हेमराज और अन्य

(2018 की सिविल पुनरीक्षण याचिका संख्या 147)

तारीख 10 सितंबर, 2019

न्यायमूर्ति संदीप शर्मा

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) – धारा 65 और 66 – द्वितीयक साक्ष्य – न्यायालय के समक्ष विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में अभिलेख पर स्वीकार किए जाने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया जाना और विपक्षी को इसकी सूचना न दिया जाना – इस आधार पर न्यायालय आवेदन को अस्वीकृत नहीं कर सकता, विशेष रूप से तब जब वादी का यह विनिर्दिष्ट पक्षकथन भी नहीं है कि द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किए जाने के लिए ईप्सित दस्तावेज प्रतिवादी के कब्जे में है ।

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 – धारा 65 और 66 – घोषणात्मक वाद में विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति प्रस्तुत किया जाना – वादी द्वारा सुस्पष्टतः अभिकथित किया जाना कि दोनों पक्षों ने विक्रय विलेख के निष्पादन के पश्चात् मूल विक्रय विलेख संबद्ध राजस्व प्राधिकारियों को हस्तगत कर दिया था – वादी के इस कथन को प्रतिवादी द्वारा सुस्पष्ट रूप से विवादित न किया जाना – यदि विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति को प्राथमिक साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जाता है, तो इससे प्रतिवादी के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा, विशेष रूप से तब जब उसे समुचित प्रक्रम पर इस दस्तावेज के खंडन का अवसर प्राप्त होगा ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि वादियों ने वाद फाइल किया, जिसके द्वारा इस घोषणा की ईप्सा की गई कि वादी और प्रतिवादी संख्या 2 वादग्रस्त भूमि के बाबत प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा वादियों और

प्रतिवादी संख्या 2 के बाबत पक्ष में तारीख 8 दिसंबर, 1986 को निष्पादित विक्रय विलेख के आधार पर स्वामी और कब्जेदार हैं । वादी ने ऊपरनिर्दिष्ट वाद में व्यादेश के पारिणामिक अनुतोष की भी ईप्सा की । प्रतिवादी संख्या 1 ने लिखित कथन फाइल करते हुए वादियों के दावे का खंडन किया । उसने प्रतिदावा (काउंटर क्लेम) भी फाइल किया । वादी की तरफ से वाद लंबन के दौरान भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के अधीन आवेदन फाइल किया गया, जिसमें यह प्रकथन किया गया कि विक्रय विलेख की मूल प्रति की खोज नहीं की जा सकी और उसके बारे में यह अवधारणा की जाती है कि वह प्रतिवादी संख्या 1 के कब्जे में है । वादी ने उक्त आवेदन में आगे यह प्रकथन किया कि मूल दस्तावेज वादियों की पहुंच के बाहर है और वे उसको प्राथमिक साक्ष्य में प्रस्तुत कर पाने में असमर्थ है और इसलिए उनको इस दस्तावेज के विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति के आधार पर प्राथमिक साक्ष्य के रूप में साबित करने की अनुज्ञा प्रदान की जाए । वादी ने इस आवेदन में स्पष्टत: प्रकथन किया है कि उन्होंने तारीख 15 दिसंबर, 1986 के विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति इंदोरा के उप-रजिस्ट्रार कार्यालय से प्राप्त कर ली है और इस प्रमाणित प्रति को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं । वादी द्वारा फाइल किए गए पूर्वोक्त आवेदन का प्रतिवादी संख्या 1, जिसने इस बाबत विनिर्दिष्ट रूप से इनकार किया कि मूल विक्रय विलेख उसकी अभिरक्षा में है, की तरफ से विरोध किया गया । प्रतिवादी संख्या 1 ने आवेदन के प्रत्युत्तर में अभिकथित किया कि वादपत्र के पैरा 6 में समाविष्ट प्रकथनों के अनुसार वादी ने स्वयं उल्लेख किया है कि आवेदक/वादी ने मूल विक्रय विलेख की प्रति राजस्व प्राधिकारियों को नामांतरण के प्रवेश और प्रमाणीकरण के लिए हस्तगत कर दी थी । प्रतिवादी संख्या 1 ने आवेदन के प्रत्युत्तर में यह प्रकथन भी किया कि वादी ने वर्तमान वाद विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति के आधार पर फाइल किया है और इसलिए उसको अभिकथित प्रमाणित प्रति के आधार पर साक्ष्य प्रस्तुत करने का कोई अधिकार नहीं है, विशेष रूप से तब जब कि वह उस दस्तावेज की मूल या प्रमाणित प्रति प्रस्तुत करने में विनिर्दिष्ट रूप से विफल हो चुका है । विद्वान् निचले न्यायालय ने तारीख 16 अगस्त, 2017 के आदेश द्वारा वादी

द्वारा फाइल किए गए आवेदन को इस प्राथमिक आधार पर खारिज कर दिया कि वादियों का यह दायित्व था कि वे अधिनियम की धारा 65 के अधीन आवेदन फाइल करने के पूर्व विपक्षी को सूचना जारी करते । इस आदेश से व्यथित होकर वादी द्वारा वर्तमान पुनरीक्षण याचिका फाइल की गई । पुनरीक्षण याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – हमारे समक्ष उपस्थित मामले में वादियों ने वादपत्र में यह प्रकथन करते हुए कि वादियों और प्रतिवादियों ने विक्रय विलेख निष्पादित करने के पश्चात् मूल विक्रय विलेख की प्रति राजस्व प्राधिकारियों को दे दी थी और इस तथ्य के आधार पर विक्रय विलेख की विद्यमानता सम्यक् रूप से स्थापित हो जाती है, जिसे द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किया जाना ईप्सित है । इसलिए निचले विद्वान् न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष कि वादी यह दर्शित करने में विफल रहे कि द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ ईप्सित दस्तावेज विद्यमान नहीं हैं । प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा फाइल किए गए लिखित कथन के पैरा 2 में विक्रय विलेख, जिसको इसमें इसके पश्चात् निर्दिष्ट किया गया है, को विधित: विधिमान्य और असली दस्तावेज नहीं माना गया है, किंतु इसकी विद्यमानता के संबंध में कोई विनिर्दिष्ट इनकार भी नहीं है । यह प्रश्न कि क्या द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किए जाने के लिए ईप्सित विक्रय विलेख कूटरचित दस्तावेज है या नहीं, का निर्णय केवल पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर किया जा सकता है, जब दोनों पक्षों को साक्ष्य पेश करने का अवसर प्रदान किया जाएगा । इस प्रक्रम पर अधिनियम की धारा 65 के अधीन फाइल किए गए आवेदन पर विचार करते हुए इस न्यायालय से यह अपेक्षित नहीं है कि वह मामले के गुणागुण पर विचार करे, इसके विपरीत इस न्यायालय से मात्र यह अपेक्षित है कि वह द्वितीयक साक्ष्य को पेश करते हुए साबित किए जाने के लिए आशयित दस्तावेज की विधिमान्यता के प्रश्न पर विचार करे । जैसाकि इस निर्णय में ऊपर उल्लेख किया गया है, आवेदकों/वादियों ने वादपत्र के पैरा संख्या 6 और 7 में सुस्पष्ट रूप से प्रकथन किया है कि वादियों और प्रतिवादियों दोनों ने ही विक्रय विलेख निष्पादित करने के पश्चात् मूल

विक्रय विलेख की प्रति संबद्ध राजस्व प्राधिकारियों को हस्तगत कर दी थी, किंतु प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा इस प्रकथन से सुस्पष्ट रूप से इनकार नहीं किया गया है । प्रतिवादी संख्या 1 ने मात्र यह अभिकथन किया है कि वह वादग्रस्त भूमि का स्वामी और कब्जेदार है । विक्रय विलेख की सत्यापित प्रति, जिसे द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किया जाना ईप्सित है, को आवेदन के साथ सम्यक् रूप से प्रस्तुत किया गया है, जिसकी प्रमाणिकता और वास्तविकता को प्रतिवादियों द्वारा आवेदन के उत्तर में फाइल किए गए अपने जवाब में चुनौती नहीं दी है । उपरनिर्दिष्ट निर्णय में न्यायालय ने सुस्पष्ट रूप से मताभिव्यक्ति की है कि यदि पक्ष द्वितीयक साक्ष्य पेश करना चाहते हैं, तो न्यायालय उस दस्तावेज या उसकी अंतर्वस्तु के अधिसंभाव्य मूल्य का परीक्षण करने के लिए बाध्य होगी, जिसे न्यायालय के समक्ष पेश किया गया है और द्वितीयक साक्ष्य के रूप में पेश किए गए दस्तावेज की ग्राह्यता के प्रश्न को निर्णीत करेगी । माननीय उच्चतम न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि न तो साक्ष्य में किसी दस्तावेज की मात्र ग्राह्यता उस दस्तावेज का सबूत होती है और न ही वह दस्तावेज मात्र प्रदर्श बना दिए जाने से सबूत के रूप में छूट प्राप्त हो जाता है, जिसे अन्यथा रूप से विधि अनुसार सबूत के रूप में साबित किया जाना अपेक्षित होता है । हमारे समक्ष उपस्थित मामले में भी, यदि किसी दस्तावेज को साबित किए जाने के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन को मंजूर कर लिया जाता है, तो प्रतिवादियों के हितों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा, जो अन्यथा भी किसी भी परिस्थिति में उस दस्तावेज का खंडन करने का अवसर पाएंगे । हमारे समक्ष उपस्थित मामले में, यदि आवेदन में समाविष्ट प्रकथनों को संपूर्णता में पढ़ा जाता है, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि वादियों ने तारीख 15 दिसंबर, 1986 के विक्रय विलेख को द्वितीय साक्ष्य पेश करते हुए साबित करने की अनुज्ञा की न्यायालय से ईप्सा की । जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, तारीख 15 दिसंबर, 1986 के विक्रय विलेख की विद्यमानता के तथ्य को विनिर्दिष्ट रूप से कभी भी नकारा नहीं गया, साथ ही प्रतिवादियों ने इसके आधार पर विभाजन कार्यवाहियों के लिए आवेदन किया है । विधि के पूर्वोक्त

उपबंधों के सावधानीपूर्वक परिशीलन से यह ज्ञात होता है कि धारा 66 के अधीन सूचना का आत्यंतिक प्रयोजन मात्र दूसरे पक्ष, जिसके कब्जे या शक्त्यधीन वह दस्तावेज है के संज्ञान में यह लाना है कि उसे दस्तावेज पेश करना है । ताकि उस पक्ष को उस दस्तावेज को पेश करने के द्वारा अपनी प्रतिरक्षा में सर्वोत्तम साक्ष्य सुनिश्चित करने का अवसर प्रदान किया जा सके । यद्यपि, हमारे समक्ष उपस्थित मामले में प्रस्तुत किए गए आवेदन में ऐसा कोई विनिर्दिष्ट प्रकथन नहीं किया गया है कि दस्तावेज, जिसको द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किया जाना ईप्सित है, प्रतिवादियों के कब्जे में है, फिर भी यह अभिकथित किया गया है कि प्रश्नगत दस्तावेज राजस्व प्राधिकारियों को नामांतरण प्रमाणित किए जाने के प्रयोजनार्थ हस्तगत कर दिया गया था, किंतु इन सब बातों के बावजूद अधिनियम की धारा 65 के अधीन मात्र आवेदन का फाइल किया जाना प्रतिवादियों को प्रश्नगत दस्तावेज को प्रस्तुत करने की पर्याप्त सूचना थी, यदि वह दस्तावेज उनके कब्जे में था । अधिनियम की धारा 66 के अधीन सूचना का जारी न किया जाना निचले न्यायालय के लिए आवेदन को अस्वीकृत किए जाने का कारण नहीं हो सकता था, विशेष रूप से जब यह वादियों का विनिर्दिष्ट पक्षकथन नहीं था कि द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किए जाने के लिए ईप्सित दस्तावेज प्रतिवादियों के कब्जे में है । इसलिए, इस न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि प्रतिवादियों ने प्रश्नगत विक्रय विलेख की सत्यापित प्रति को अभिलेख पर प्रस्तुत करते हुए उस दस्तावेज की विद्यमानता को साबित कर दिया है, जिसे उनके द्वारा राजस्व प्राधिकारियों को नामांतरण को सत्यापित किए जाने के प्रयोजनार्थ हस्तगत किया जाना आशयित था । (पैरा 15, 16, 17, 18 और 20)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2016] (2016) 16 एस. सी. सी. 483 = 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6271 :
राकेश मोहिन्द्रा बनाम **अनीता बेड़ी और अन्य** ; 11

[2013]	ए. आई. आर. ऑनलाइन 2013 पंजाब और हरियाणा = 2014 (1) आर. सी. आर. (सिविल) 467 : **सुरिन्दर कौर** बनाम **महल सिंह और अन्य** ;	6
[2013]	(2013) 2 एस. सी. सी. 114 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 415 : **यू. श्री** बनाम **यू. श्रीनिवास** ;	13
[2011]	ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1492 : **एच. सिद्दीकी (मृतक) द्वारा विधिक उत्तराधिकारी** बनाम **ए. रामलिंगम** ;	12
[2003]	ए. आई. आर. 2003 पंजाब और हरियाणा 150 = 2002 (4) आर. सी. आर. (सिविल) 830 : **हरि सिंह** बनाम **शीश राम** ।	6

पुनरीक्षण (सिविल) अधिकारिता : 2018 की सिविल पुनरीक्षण याचिका संख्या 147.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115 के अधीन पुनरीक्षण ।

याचियों की ओर से सर्वश्री अजय शर्मा और अमीत जामवाल

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री विजेन्दर कटोच

आदेश

सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अधीन फाइल की गई यह सिविल पुनरीक्षण याचिका हिमाचल प्रदेश के जिला कांगड़ा के इंदोरा के विद्वान् सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ वर्ग) द्वारा 2017 के सी. एम. ए. संख्या 233 में पारित तारीख 16 अगस्त, 2017 के आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा याचियों (जिनको इसमें इसके पश्चात् वादी कहकर निर्दिष्ट किया गया है) द्वारा भारतीय साक्ष्य अधिनियम (संक्षेप में अधिनियम) की धारा 65 के अधीन फाइल किए गए आवेदन, जिसके द्वारा तारीख 15 दिसंबर, 1986 के विक्रय विलेख को द्वितीयक

साक्ष्य के रूप में साबित किए जाने की अनुज्ञा की ईप्सा की गई, को अस्वीकृत कर दिया गया ।

2. संक्षेप में तथ्य, जो अभिलेख से प्रकट होते हैं, ये हैं कि वादियों ने एक वाद फाइल किया, जिसके द्वारा इस घोषणा की ईप्सा की गई कि वादी और प्रतिवादी संख्या 2 वादग्रस्त भूमि, जिसका विवरण वादपत्र में दिया गया है, के प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा वादियों और प्रतिवादी संख्या 2 के पक्ष में तारीख 8 दिसंबर, 1986 को निष्पादित विक्रय विलेख के आधार पर स्वामी और कब्जेदार हैं । वादी ने ऊपरनिर्दिष्ट वाद में व्यादेश के परिणामिक अनुतोष की भी ईप्सा की ।

3. प्रतिवादी संख्या 1 ने लिखित कथन फाइल करते हुए वादियों के दावे का खंडन किया । उसने प्रतिदावा (कांउटर क्लेम) (संलग्नक पी-3) भी फाइल किया ।

4. वादी की तरफ से वाद के लंबन के दौरान भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के अधीन एक आवेदन (संलग्नक पी-4) फाइल किया गया, जिसमें यह प्रकथन किया गया कि विक्रय विलेख की मूल प्रति खोजी नहीं जा सकी और उसके बारे में यह अवधारणा की जाती है कि वह प्रतिवादी संख्या 1 के कब्जे में है । वादी ने उक्त आवेदन में आगे यह प्रकथन किया कि मूल दस्तावेज वादियों की पहुंच के बाहर है और वे उसको साक्ष्य में प्रस्तुत कर पाने में असमर्थ है और इसलिए उनको इस दस्तावेज को विक्रय विलेख की प्रमाणिक प्रति के आधार पर द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित करने की अनुज्ञा प्रदान की जाए । वादी ने इस आवेदन में स्पष्टत: प्रकथन किया है कि उन्होंने तारीख 15 दिसंबर, 1986 के विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति इंदोरा के उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय से प्राप्त कर ली है और इस प्रमाणित प्रति को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में (न्यायालय के समक्ष) साक्ष्य में प्रस्तुत करना चाहते हैं ।

5. वादी द्वारा फाइल किए गए पूर्वोक्त आवेदन का प्रतिवादी संख्या 1, जिसने इस बाबत विनिर्दिष्ट रूप से इनकार किया कि मूल विक्रय विलेख उसकी अभिरक्षा में है, की तरफ से विरोध किया गया ।

प्रतिवादी संख्या 1 ने आवेदन के प्रत्युत्तर में अभिकथित किया कि वादपत्र के पैरा 6 में समाविष्ट प्रकथनों के अनुसार वादी ने स्वयं उल्लेख किया है कि आवेदक/वादी में मूल विक्रय विलेख की प्रति राजस्व अधिकारियों को नामांतरण के प्रवेश और प्रमाणीकरण के लिए दे दी थी । प्रतिवादी संख्या 1 ने आवेदन के प्रत्युत्तर में यह प्रकथन भी किया है कि वादी ने वर्तमान वाद विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति के आधार पर फाइल किया है और इसलिए उसको अभिकथित प्रमाणित प्रति के आधार साक्ष्य प्रस्तुत करने का कोई अधिकार नहीं है, विशेष रूप से तब जब कि वह उस दस्तावेज की मूल या प्रमाणित प्रति प्रस्तुत करने में विनिर्दिष्ट रूप से विफल हो चुका है ।

6. विद्वान् निचले न्यायालय ने तारीख 16 अगस्त, 2017 के आदेश द्वारा वादी द्वारा फाइल किए गए आवेदन को इस प्राथमिक आधार पर खारिज कर दिया कि वादियों का यह दायित्व था कि वे अधिनियम की धारा 65 के अधीन आवेदन फाइल करने के पूर्व विपक्षी को सूचना जारी करते । विद्वान् निचले न्यायालय ने इस निष्कर्ष के समर्थन में **सुरिन्दर कौर** बनाम **महल सिंह और अन्य**[1] और साथ ही **हरि सिंह** बनाम **शीश राम**[2] वाले मामलों में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णयों का अवलंब लिया, जिनमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि इसके पहले कि किसी पक्ष को यह दर्शित किए जाने के प्रयोजनार्थ द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुज्ञा प्रदान की जाए कि दस्तावेज विद्यमान हैं, यह आवश्यक है कि अधिनियम की धारा 66 के अधीन उस पक्ष को सूचना जारी की जाए, जिसकी अभिरक्षा में दस्तावेज रखा गया है ।

7. वादियों ने पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में वर्तमान कार्यवाही फाइल करते हुए इस न्यायालय की शरण ली और प्रार्थना की कि तारीख 16 अगस्त, 2017 के आक्षेपित आदेश को अपास्त किया जाए और उनको प्रश्नगत

---

[1] ए. आई. आर. ऑनलाइन 2013 पंजाब और हरियाणा = 2014 (1) आर. सी. आर. (सिविल) 467.

[2] ए. आई. आर. 2003 पंजाब और हरियाणा 150 = 2002 (4) आर. सी. आर. (सिविल) 830.

दस्तावेजों को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित करने की अनुज्ञा प्रदान की जाए ।

8. पक्षों का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान् काउंसेलों को सुनने और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन करने के पश्चात् यह न्यायालय विद्वान् निचले न्यायालय द्वारा अधिनियम की धारा 65 के अधीन वादियों द्वारा फाइल किए गए आवेदन को खारिज करते हुए दिए गए कारणों से सहमत हैं ।

9. वादपत्र (संलग्नक पी.-1) में समाविष्ट प्रकथनों का सावधानीपूर्वक परिशीलन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि वादियों ने सुस्पष्ट रूप से यह अभिवाक् किया है कि वादियों और प्रतिवादियों ने विक्रय विलेख निष्पादित किए जाने के पश्चात् मूल विक्रय विलेख संबद्ध राजस्व प्राधिकारियों को हस्तगत कर दिया था, ताकि उसके आधार पर उनके पक्ष में नामांतरण की कार्रवाई की जा सके ।

10. वादियों ने अधिनियम की धारा 65 के अधीन फाइल किए गए आवेदन के पैरा 4 में द्वितीयक साक्ष्य के माध्यम से प्रश्नगत विक्रय विलेख को साबित किए जाने की ईप्सा करते हुए विनिर्दिष्ट रूप से प्रकथन किया कि उन्होंने इंदोरा के उप-रजिस्ट्रार के कार्यालय से उपरोक्त दस्तावेज की प्रमाणित प्रति अभिप्राप्त कर ली है और उसको द्वितीयक साक्ष्य के माध्यम से साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत करना चाहते हैं । वादियों का यह पक्षकथन नहीं है कि वे दस्तावेज, जिनको द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किए जाने की ईप्सा की गई है, प्रत्यर्थियों/प्रतिवादियों के कब्जे में है और इस प्रकार निचले विद्वान् न्यायालय द्वारा समनुदेशित तर्कणा कि आवेदकों/वादियों पर यह बाध्यकारी था कि वे मूल विक्रय विलेख प्रस्तुत करने के लिए विपक्षी को सूचना जारी करते, दोनों पक्षों द्वारा अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए अभिवचनों के पूर्णतया विपरीत है ।

11. अधिनियम की धारा 65 उन परिस्थितियों पर विचार करती है, जिनके अधीन दस्तावेजों की विद्यमानता, दशा या अंतर्वस्तुओं को साबित किए जाने से संबंधित द्वितीयक साक्ष्य से संबंधित दस्तावेजों को प्रस्तुत किया जा सकता है । अधिनियम की धारा 65 के उपबंधों, यदि उनको संपूर्णता में पढ़ा जाए, से यह स्पष्ट है कि द्वितीयक साक्ष्य

प्रस्तुत किया जा सकता है यदि मूल दस्तावेज नष्ट हो गया हो या खो गया हो या जब उसकी अंतर्वस्तुओं के संबंध में साक्ष्य प्रस्तुत करने वाले पक्ष अपनी स्वयं की चूक या उपेक्षा के कारण उद्भूत न होने वाले किसी कारणवश उसको युक्तिसंगत समय के भीतर प्रस्तुत नहीं कर सकते । द्वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत करने का आशय रखने वाले पक्ष से यह अपेक्षा की जाती है कि वह प्राथमिक दस्तावेज को प्रस्तुत न किए जाने की स्थितियों को साबित करें । जब तक कि यह साबित नहीं कर दिया जाता कि मूल दस्तावेज नष्ट हो गए हैं या खो गए हैं या उन दस्तावेजों के संबंध में, जिनका प्रयोग किया जाना ईप्सित है, किसी पक्ष द्वारा जानबूझकर अपने कब्जे में रखे गए हैं, तो उस दस्तावेज के संबंध में द्वितीयक साक्ष्य स्वीकार नहीं किए जा सकते । इस संबंध में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **राकेश मोहिन्द्रा** बनाम **अनीता बेड़ी और अन्य**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लिया गया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया है :-

"14. अधिनियम की धारा 65 उन परिस्थितियों पर विचार करती है, जिनके अधीन दस्तावेजों के अस्तित्व, दशा या अंतर्वस्तुओं को साबित किए जाने के संबंध में द्वितीयक साक्ष्य दिया जा सकेगा । उचित मूल्यांकन के लिए अधिनियम की धारा 65 को नीचे उद्धृत किया गया है –

"65. अवस्थाएं, जिनमें दस्तावेजों के संबंध द्वितीयक साक्ष्य दिया जा सके – किसी दस्तावेज के अस्तित्व, दशा या अंतर्वस्तु का द्वितीयक साक्ष्य निम्नलिखित अवस्थाओं में दिया जा सकेगा –

(क) जबकि यह दर्शित कर दिया जाए या प्रतीत होता हो कि मूल ऐसे व्यक्ति के कब्जे में या शक्त्यधीन है :-

जिसके विरुद्ध उस दस्तावेज का साबित किया जाना ईप्सित है, अथावा

जो न्यायालय की आदेशिका की पहुंच के बाहर है या

[1] (2016) 16 एस. सी. सी. 483 = 2015 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 6271.

ऐसी आदेशिका के अध्यधीन नहीं है अथवा जो उसे पेश करने के लिए वैध रूप से आबद्ध है,

और जबकि ऐसा व्यक्ति धारा 66 में वर्णित सूचना के पश्चात् उसे पेश नहीं करता है ;

(ख) जबकि मूल के अस्तित्व, दशा या अंतर्वस्तु को उस व्यक्ति द्वारा, जिसके विरुद्ध उसे साबित किया जाना है या उसके हित प्रतिनिधि द्वारा लिखित रूप में स्वीकृत किया जाना साबित कर दिया गया है ;

(ग) जबकि मूल नष्ट हो गया या खो गया है अथवा जबकि उसकी अंतर्वस्तु का साक्ष्य देने की प्रस्तावना करने वाला पक्षकार अपने स्वयं के व्यतिक्रम या उपेक्षा से अनुद्भूत अन्य किसी कारण से उसे युक्तियुक्त समय में पेश नहीं कर सकता ;

(घ) जबकि मूल इस प्रकृति का है कि उसे असानी से स्थानांतरित नहीं किया जा सकता ;

(ङ) जबकि मूल धारा 74 के अर्थ के अंतर्गत एक लोक दस्तावेज है ;

(च) जबकि मूल ऐसा दस्तावेज है, जिसकी प्रमाणित प्रतीत का साक्ष्य में दिया जाना इस अधिनियम द्वारा या भारत में प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा अनुज्ञात है ;

(छ) जबकि मूल ऐसे अनेक लेखाओं या अन्य दस्तावेजों से गठित है जिनकी न्यायालय में सुविधापूर्वक परीक्षा नहीं की जा सकती और वह तथ्य, जिसे साबित किया जाना है, संपूर्ण संग्रह का साधारण परिणाम है ।

अवस्थाओं (क), (ग) और (घ) में दस्तावेजों की अंतर्वस्तु का कोई भी द्वितीयक साक्ष्य ग्राह्य है ।

अवस्था (ख) में वह लिखित स्वीकृति ग्राह्य है ।

अवस्था (ङ) या (च) में दस्तावेज की प्रमाणित प्रति ग्राह्य है, किंतु अन्य किसी भी प्रकार का द्वितीयक साक्ष्य ग्राह्य नहीं है ।

अवस्था (छ) में दस्तावेजों के साधारण परिणाम का साक्ष्य ऐसे किसी व्यक्ति द्वारा दिया जा सकेगा, जिसने उनकी परीक्षा की है और जो ऐसे दस्तावेजों की परीक्षा करने में कुशल है ।"

15. द्वितीयक साक्ष्य पेश करने की पूर्व शर्तें यह है कि ऐसे मूल दस्तावेजों को उस पक्ष द्वारा सर्वोत्तम प्रयासों के बावजूद पेश नहीं किया जा सका, जिसने उन दस्तावेजों का अवलंब लिया, वह उनको (दस्तावेजों को) पेश करने में असमर्थ रहा, जो उसके नियंत्रण के परे हैं । वह पक्ष, जिसने द्वितीयक साक्ष्य पेश करने की ईप्सा की, को प्राथमिक साक्ष्य पेश न करने के कारणों को साबित करना चाहिए । जब तक कि यह बात साबित नहीं हो जाती कि मूल दस्तावेज खो गए हैं या नष्ट हो गए हैं या उन दस्तावेजों को उस पक्ष द्वारा जानबूझकर अपने कब्जे में रखा गया है, जिनका साक्ष्य में प्रयोग किया जाना ईप्सित है, उस दस्तावेज के संबंध में द्वितीयक साक्ष्य स्वीकार किया नहीं जा सकता ।

16. उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश के पैरा 9 में निम्नलिखित बातों का उल्लेख किया : (अनीता बेड़ी **बनाम** राकेश मोहेन्द्रा, एस. सी. सी. ऑनलाईन एच. पी. 4258 = ए. आई. आर. 2014 एच. पी. 63 वाला मामला) –

"9. लिखित कथन में प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/बी. के बारे में कोई प्रकथन नहीं है । लिखित कथन तारीख 19 फरवरी, 2007 को फाइल किया गया था । वास्तव में प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/बी. मात्र एक फोटोकापी है । वादी रजिस्ट्रीकृत इच्छा विलेख, जिसे उनके पक्ष में वर्ष 1984 में निष्पादित किया गया था, के आधार पर संपत्ति का दावा कर रहे हैं । प्रतिवादी के लिए यह आवश्यक था कि वह उस इच्छा विलेख को उसी तरीके में साबित करता है, जिस तरीके में तारीख 24

अगस्त, 1982 के इस दस्तावेज को निष्पादित किया गया था । प्रतिवादी ने प्रतिवादी साक्षी 1 के रूप में उपस्थित होते हुए अपनी प्रतिपरीक्षा में स्वीकार किया है कि उसने सिवाय अपने शपथ-पत्र, जो प्रदर्श ए. डब्ल्यू. 1/ए. है, में किसी भी ऐसे दस्तावेज का उल्लेख नहीं किया है कि उसकी उपस्थिति में न्यायमूर्ति स्वर्गीय टेकचंद द्वारा प्रत्याख्यान पत्र निष्पादित किया गया था । प्रतिवादी साक्षी 2 के कथन से यह साबित नहीं होता है कि प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/ए. कभी विद्यमान भी था । प्रतिवादी साक्षी 2 श्री गुरुचरण सिंह ने अपनी प्रतिपरीक्षा में सुस्पष्टतः स्वीकार किया है कि वह प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/बी. की मूल प्रति नहीं लाया है । उसने इस बात को भी स्वीकार किया कि प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/बी पर पी. सी. ढ़ांडा के हस्ताक्षर पठनीय नहीं थे । उसने इस बात का भी उल्लेख किया कि उन दस्तावेजों में कुछ दृश्य भी नहीं था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने 1872 के भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के अधीन प्रस्तुत किए गए आवेदन को मंजूर करते हुए मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य को पूर्णतः गलत पढ़ा है, विशेष रूप से प्रतिवादी साक्षी 2 गुरचरण सिंह और प्रतिवादी साक्षी 3 दीपक नारंग के कथनों को । आवेदक 1872 के भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के उपबंधों का पालन करने में दयनीय रूप से विफल रहा है । विद्वान् विचारण न्यायालय ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने में त्रुटि की है कि आवेदक ने दस्तावेज, जो प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/बी. है, को पेश करके पर्याप्त कार्रवाई की है ।"

17. उच्च न्यायालय इस न्यायालय द्वारा यशोदा **बनाम** श्रीमती के. शोभारानी [ए. आई. आर. 2007 एस. सी. 1721] और एच. सिद्दीकी (मृतक) द्वारा विधिक उत्तराधिकारी **बनाम** ए. रामलिंगम [ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1442] वाले मामलों में दिए गए निर्णय के विनिश्चयानुपात का अवलंब लेते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि प्रतिवादी मूल दस्तावेजों की विद्यमानता और निष्पादन को साबित कर पाने में विफल रहा है और वह इस

बात को साबित कर पाने में भी विफल रहा है कि उसने प्राधिकारियों को तारीख 24 अगस्त, 1982 के प्रत्याख्यान पत्र की मूल प्रति हस्तगत कर दी थी । इसलिए, उच्च न्यायालय का यह विचार है कि द्‌वितीयक साक्ष्य प्रस्तुत किए जाने का कोई मामला नहीं बनता ।

18. प्रतिवादी साक्षी 2, जो अंबाला के डी.ई.ओ. कार्यालय में उच्च श्रेणी लिपिक के रूप में कार्यरत था, ने मूल जी.एल.आर. रजिस्टर तैयार किया था । उसने प्रत्याख्यान पत्र की फोटोकापी को सम्मिलित करते हुए कागजों की चार प्रतियां तैयार की थीं । उसने अभिकथित किया है कि मूल दस्तावेज डी.ई.ओ. की अभिरक्षा में बने रहे । प्रतिपरीक्षा में उसके द्‌वारा दिए गए शपथपूर्वक कथन को नीचे प्रत्युत्पादित किया गया है –

> "....... वादी संख्या 2 के अधिवक्ता श्री एम. एस. चंदेल द्‌वारा :
>
> मैं अभिलेख के साथ संपूर्ण फाइल नहीं लाया हूं । मैं केवल वे दस्तावेज लाया हूं, जिनको फाइल से दस्तावेज लिए जाने के पश्चात् तलब किया गया था । आज तक, जी.एल.आर. के अनुसार, प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/ए., **राकेश मोहेन्द्रा** का नाम उपस्थित है, उनका नाम तारीख 29 अगस्त, 2011 के आदेश द्‌वारा हटा दिया गया था । मैं प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/बी. की मूल प्रति नहीं लाया हूं । यह सत्य है कि प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/बी. पर श्री पी. सी. ढांडा के हस्ताक्षर नहीं हैं । स्वैच्छयापूर्वक : ये पठनीय नहीं हैं । प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/सी. पर हस्ताक्षर हैं किंतु यह हस्ताक्षर पठनीय नहीं है । उक्त दस्तावेज पर प्रमाणित करने वाले अधिकारी के हस्ताक्षर पठनीय नहीं है क्योंकि यह दस्तावेज गीला हो गया था । मैं नहीं कह सकता इन दस्तावेजों पर किसके हस्ताक्षर हैं । प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/ई. पर शपथकर्ता के स्थान पर हस्ताक्षर भी पानी के कारण अपठनीय प्रतीत होते हैं । प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/एफ. पर भी अस्पष्ट हस्ताक्षर मौजूद हैं और अंतिम पृष्ठ पर केवल टेकचंद पठनीय है । यह कहना गलत है कि अंतिम

पृष्ठ पर प्रमाणित करने वाले प्राधिकारी के हस्ताक्षर नहीं है । स्वैच्छयापूर्वक : ये सभी अस्पष्ट हैं किंतु पठनीय नहीं है । अंतिम पृष्ठ पर मुहर भी पठनीय नहीं है । प्रथम और द्वितीय पृष्ठ पर मुहर नहीं है । हमारे तरफ से कोई पारिवारिक निपटारा नहीं हुआ है, किंतु केवल पारिवारिक निपटारे की स्वीकृति दी गई है । मैं नहीं जानता कि राकेश मोहिन्द्रा के कितने भाई हैं । यह सत्य है कि प्रदर्श डी. डब्ल्यू. 2/एच. के मूल दस्तावेज पर श्री अभय कुमार के हस्ताक्षर नहीं हैं । मैं नहीं जानता कि क्या श्री अभय कुमार सूद और राकेश मोहिन्द्रा आपस में सगे भाई हैं । ऊपरवर्णित दस्तावेज मेरी उपस्थिति में न तो निष्पादित किए गए थे और न ही तैयार किए गए थे । यह कहना असत्य है कि ऊपरवर्णित दस्तावेज कूटरचित हैं । यह कहना गलत है कि किसी कारणवश मैं संपूर्ण फाइल नहीं लाया हूं ।"

19. एहतेशाम अली **बनाम** जम्मा प्रसाद [(1921) एस. सी. सी. ऑनलाइन टी. सी. 65 = ए. आई. आर. 1922 पी. सी. 54] वाले मामले में प्राथमिक साक्ष्य के नष्ट हो जाने के मामले में द्वितीयक साक्ष्य की स्वीकार्यता पर विचार किए जाने कां प्रश्न विचारार्थ उद्भूत हुआ, जिसमें **लार्ड फिलिमोर** ने निर्णय पारित करते हुए मताभिव्यक्ति की –

> "इसमें कोई संदेह नहीं कि इस बात की कोई संभाव्यता नहीं है कि इस प्रकार का विलेख नष्ट भी हो सकता है, किंतु सामान्य मामलों में यदि साक्षी, जिसकी अभिरक्षा में दस्तावेज होना चाहिए, ने शपथपूर्वक उसके नष्ट हो जाने के बाबत कथन किया है, तो जब तक कि उसके शपथपूर्वक कथन के असत्य होने के बाबत कोई आशय हमारे संज्ञान में नहीं लाया जाता, उसका साक्ष्य विलेख के द्वितीयक साक्ष्य के रूप में स्वीकार किए जाने के बाबत अपर्याप्त साक्ष्य माना जाएगा ।"

20. यह सुस्थापित तथ्य है कि यदि कोई पक्ष द्वितीयक साक्ष्य पेश करने की इच्छा रखता है, तो न्यायालय पेश किए गए

दस्तावेज या उसकी अंतर्वस्तु के अधिसंभाव्य साक्षिक मूल्य का परीक्षण करने के लिए बाध्य होगा और द्वितीयक साक्ष्य में पेश किए गए दस्तावेज की स्वीकार्यता के प्रश्न को विनिर्णीत करेगा । तत्समय, संबंधित पक्ष को द्वितीयक साक्ष्य पेश करने के अधिकार को स्थापित करने के तथ्यात्मक आधार, जहां मूल दस्तावेज पेश नहीं किया जा सकता, को साबित करना होगा । यह समान रूप से सुस्थापित है कि न तो मात्र साक्ष्य में प्रस्तुत किए गए दस्तावेज की स्वीकार्यता उसका सबूत होती है और न ही उस दस्तावेज को मात्र प्रदर्श बना देने से उसको सबूत बनाने से किसी प्रकार की छूट मिलती है, जिसको अन्यथा रूप से विधि के अनुसार किया जाना अपेक्षित होता है ।"

12. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **एच. सिद्दीकी (मृतक) द्वारा विधिक उत्तराधिकारी** बनाम **ए. रामलिंगम**[1] वाले मामले में लिए गए निर्णय का अवलंब लिया गया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है :–

"10. 1872 के अधिनियम की धारा 65 के उपबंध पक्षों द्वारा द्वितीयक साक्ष्य पेश किए जाने के लिए उपबंधित करते हैं । तथापि, यह अनुक्रम अनेक परिसीमाओं के अध्यधीन है । किसी ऐसे मामले में, जहां मूल दस्तावेज किसी भी समय बिंदु पर पेश नहीं किए गए और न ही द्वितीयक साक्ष्य पेश किए जाने के लिए कोई तथ्यात्मक आधार सृजित किया गया, न्यायालय के लिए यह अनुज्ञेय नहीं हैं कि किसी पक्ष को द्वितीयक साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा प्रदान करे । अत: किसी दस्तावेज की अंतर्वस्तु से संबंधित द्वितीयक साक्ष्य अननुज्ञेय है, जब तक कि मूल दस्तावेज पेश न किए जाने का संज्ञान न ले लिया जाए, ताकि इसको धारा में उपबंधित एक या अन्य मामलों की श्रेणी के अंतर्गत लाया जा सके । द्वितीयक साक्ष्य को आधारभूत साक्ष्य द्वारा प्रमाणित किया जाना चाहिए कि अभिकथित प्रति ही मूल दस्तावेज की सत्य प्रति है ।

[1] ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 1492.

मात्र साक्ष्य में किसी दस्तावेज को स्वीकार किए जाने से वह दस्तावेज सबूत नहीं बन जाता । इसलिए, दस्तावेजी साक्ष्य का विधि अनुसार साबित किया जाना अपेक्षित होता है । न्यायालय के ऊपर किसी दस्तावेज को द्वितीयक साक्ष्य में स्वीकार किए जाने के प्रश्न को निर्णीत करने की बाध्यता होती है, इसके पहले कि उस दस्तावेज को साक्ष्य में स्वीकार किया जाए ।"

13. इसके अतिरिक्त माननीय उच्चतम न्यायालय ने **यू. श्री** बनाम **यू. श्रीनिवास**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया :–

"13. इसके पहले कि हम परित्याग और मानसिक क्रूरता के बाबत निकाले गए निष्कर्षों की युक्तियुक्तता पर विचार करें, हम इस निवेदन पर विचार करना उचित समझते हैं कि क्या उस पत्र की फोटोकापी, जिसका पत्नी द्वारा अपने पिता को लिखा जाना अधिकथित किया गया है, को द्वितीयक साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता था । जैसाकि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से दर्शित होता है, न्यायालय द्वारा उक्त पत्र को पिता से तलब किया गया था, जिसने इस पत्र की विद्यमानता को ही विवादित किया था । विद्वान् कुटुम्ब न्यायालय और साथ ही उच्च न्यायालय ने मत व्यक्त किया कि जब वह व्यक्ति, जिसके कब्जे में दस्तावेज है और वह उस दस्तावेज को पेश नहीं करता, तो इसे द्वितीयक साक्ष्य पेश किए जाने के प्रयोजनार्थ समुचित आधार माना जा सकता है ।

14. इस संदर्भ में, हम अशोक दुलीचंद **बनाम** मदाहवालाल दुबेर [(1975) 4 एस. सी. सी. 664 = ए. आई. आर. 1975 एस. सी. 1748] वाले मामले में दिए गए विनिश्चय को निर्दिष्ट करना लाभदायक समझते हैं, जिसके पैरा 7 में यह अभिनिर्धारित किया गया है –

"7. ..... भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के खंड (क) के अनुसार द्वितीयक साक्ष्य किसी दस्तावेज की

---

[1] (2013) 2 एस. सी. सी. 114 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 415.

विद्यमानता, दशा या अंतर्वस्तु के बाबत दी जा सकती है, जब मूल दस्तावेज दर्शित किया जाता है या यह अवधारणा की जाती है कि वह किसी ऐसे व्यक्ति के कब्जे या नियंत्रण के अधीन है जिसके विरुद्ध उस दस्तावेज को साबित किया जाना ईप्सित है या उस व्यक्ति की पहुंच के बाहर है या न्यायालय की प्रक्रिया के अध्यधीन नहीं है या किसी ऐसे व्यक्ति के कब्जे में है जो उसको पेश करने के लिए विधित: बाध्य है और जब धारा 66 में उल्लिखित सूचना भेजे जाने के पश्चात् वह व्यक्ति उसको पेश नहीं करता । तत्पश्चात् न्यायालय ने मामले के तथ्यों को संबोधित किया और यह मत व्यक्त किया : [**अशोक दुलीचंद** वाला मामला (1975) 4 एस. सी. सी. 664 = ए. आई. आर. 1975 एस. सी. 1748 पृष्ठ 667 पैरा 7]

> 'आवेदक ने अपने मामले को धारा 65 के खंड (क) की परिधि के अंतर्गत लाए जाने के प्रयोजनार्थ, इसके पहले कि प्रत्यर्थी संख्या 1 का परीक्षण साक्षी के रूप में किया जाता, तारीख 4 जुलाई, 1973 को आवेदन यह प्रार्थना करते हुए फाइल किया कि उक्त प्रत्यर्थी को उस मूल पांडुलिपि को प्रस्तुत करने के लिए आदेशित किया जाए जिसकी अपीलार्थी ने फोटोकापी फाइल की थी । अपीलार्थी द्वारा यह प्रार्थना भी की गई कि यदि प्रत्यर्थी संख्या 1 इस बात से इनकार करता है कि उक्त पांडुलिपि उसके द्वारा लिखी गई थी, तो फोटोकापी का परीक्षण हस्तलेखा विशेषज्ञ द्वारा कराया जाना चाहिए । अपीलार्थी ने अपने आवेदन के समर्थन में शपथपत्र भी फाइल किया, तथापि, उस शपथपत्र में कहीं पर भी यह अभिकथित नहीं किया गया कि मूल दस्तावेज जिसकी फोटोकापी अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई, प्रत्यर्थी संख्या 1 के कब्जे में थी । इस बात को इंगित करने के लिए अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री उपलब्ध नहीं थी कि मूल दस्तावेज प्रत्यर्थी संख्या 1 के कब्जे में था ।

अपीलार्थी इस बात को स्पष्ट कर पाने में विफल रहा कि वे परिस्थितियां क्या थीं, जिनके अधीन फोटोकापी तैयार की गई और उस समय मूल दस्तावेज के कब्जे में कौन था जब उस दस्तावेज की फोटोकापी तैयार की गई । प्रत्यर्थी संख्या 1 ने अपने शपथपत्र में उस दस्तावेज के कब्जे में होने या उसके संबंध में कुछ भी करने से इनकार किया है ।

इस बात का उल्लेख किया जाता है कि उच्च न्यायालय ने इस पृष्ठभूमि में यह निष्कर्ष अभिलिखित किया कि अपीलार्थी द्वारा द्वितीयक साक्ष्य पेश किए जाने के प्रयोजनार्थ कोई भी आधार फोटोकापी के स्वरूप में सृजित नहीं किया गया और यह न्यायालय उक्त विश्लेषण में कोई त्रुटि नहीं पाता ।"

14. विधि के पूर्वोक्त प्रतिपादना के सावधानीपूर्वक परिशीलन से ये स्पष्ट हो जाता है कि जहां मूल दस्तावेज किसी भी समयबिंदु पर पेश नहीं किए गए हैं और न ही द्वितीयक साक्ष्य पेश किए जाने के लिए कोई तथ्यात्मक आधार सृजित किया गया है, तो न्यायालय के लिए यह अनुज्ञेय नहीं है कि वह किसी पक्ष को द्वितीयक साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा प्रदान करें, अर्थात् किसी दस्तावेज की अंतर्वस्तु के संबंध में द्वितीयक साक्ष्य अग्राहय है, जब तक कि मूल दस्तावेज पेश न कर दिया जाए ।

15. हमारे समक्ष उपस्थित मामले में वादियों ने वादपत्र में यह प्रकथन करते हुए कि वादियों और प्रतिवादियों ने विक्रय विलेख निष्पादित करने के पश्चात् मूल विक्रय विलेख की प्रति राजस्व प्राधिकारियों को दे दी थी, और इस तथ्य के आधार पर विक्रय विलेख की विद्यमानता सम्यक् रूप से स्थापित हो जाती है, जिसे द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किया जाना ईप्सित है । इसलिए निचले विद्वान् न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष कि वादी यह दर्शित करने में विफल रहे कि द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ ईप्सित दस्तावेज विद्यमान्य नहीं है । प्रतिवादी संख्या 1

द्वारा फाइल किए गए लिखित कथन के पैरा 2 में विक्रय विलेख, जिसको इसमें इसके पश्चात् निर्दिष्ट किया गया है, को विधितः विधिमान्य और असली दस्तावेज नहीं माना गया है, किंतु इसकी विद्यमानता के संबंध में कोई विनिर्दिष्ट इनकार भी नहीं है । यह प्रश्न कि क्या द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किए जाने के लिए ईप्सित विक्रय विलेख कूटरचित दस्तावेज है या नहीं, का निर्णय केवल पश्चात्वर्ती प्रक्रम पर किया जा सकता है, जब दोनों पक्षों को साक्ष्य पेश करने का अवसर प्रदान किया जाएगा । इस प्रक्रम पर अधिनियम की धारा 65 के अधीन फाइल किए गए आवेदन पर विचार करते हुए इस न्यायालय से यह अपेक्षित नहीं है कि वह मामले के गुणागुण पर विचार करे, इसके विपरीत इस न्यायालय से मात्र यह अपेक्षित है कि वह द्वितीयक साक्ष्य को पेश करते हुए साबित किए जाने के लिए आशयित दस्तावेज की विधिमान्यता के प्रश्न पर विचार करे ।

16. जैसाकि इस निर्णय में ऊपर उल्लेख किया गया है, आवेदकों/वादियों ने वादपत्र के पैरा संख्या 6 और 7 में सुस्पष्ट रूप से प्रकथन किया है कि वादियों और प्रतिवादियों दोनों ने ही विक्रय विलेख निष्पादित करने के पश्चात् मूल विक्रय विलेख की प्रति संबद्ध राजस्व प्राधिकारियों को हस्तगत कर दी थी, किंतु प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा इस प्रकथन से सुस्पष्ट रूप से इनकार नहीं किया गया है । प्रतिवादी संख्या 1 ने मात्र यह अभिकथन किया है कि वह वादग्रस्त भूमि का स्वामी और कब्जेदार है । विक्रय विलेख की सत्यापित प्रति, जिसे द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किया जाना ईप्सित है, को आवेदन के साथ सम्यक् रूप से प्रस्तुत किया गया है, जिसकी प्रमाणिकता और वास्तविकता को प्रतिवादियों द्वारा आवेदन के उत्तर में फाइल किए गए अपने जवाब में चुनौती नहीं दी है । ऊपरनिर्दिष्ट निर्णय में न्यायालय ने सुस्पष्ट रूप से मताभिव्यक्ति की है कि यदि पक्ष द्वितीयक साक्ष्य पेश करना चाहते हैं, तो न्यायालय उस दस्तावेज या उसकी अंतर्वस्तु के अधिसंभाव्य मूल्य का परीक्षण करने के लिए बाध्य होगी, जिसे न्यायालय के समक्ष पेश किया गया है और द्वितीयक साक्ष्य के रूप में पेश किए गए दस्तावेज की ग्राह्य के प्रश्न को निर्णीत करेगी । माननीय उच्चतम न्यायालय ने

आगे अभिनिर्धारित किया कि न तो साक्ष्य में किसी दस्तावेज की मात्र ग्राह्य उस दस्तावेज का सबूत होती है और न ही वह दस्तावेज मात्र प्रदर्श बना दिए जाने से सबूत के रूप में छूट प्राप्त हो जाता है, जिसे अन्यथा रूप से विधि अनुसार सबूत के रूप में साबित किया जाना अपेक्षित होता है । हमारे समक्ष उपस्थित मामले में भी, यदि किसी दस्तावेज को साबित किए जाने के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदन को मंजूर कर लिया जाता है, तो प्रतिवादियों के हितों पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा, जो अन्यथा भी किसी भी परिस्थिति में उस दस्तावेज का खंडन करने का अवसर पाएंगे ।

17. हमारे समक्ष उपस्थित मामले में, यदि आवेदन में समाविष्ट प्रकथनों को संपूर्णता में पढ़ा जाता है, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि वादियों ने तारीख 15 दिसंबर, 1986 के विक्रय विलेख को द्वितीय साक्ष्य पेश करते हुए साबित करने की अनुज्ञा की न्यायालय से ईप्सा की ।

18. जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है, तारीख 15 दिसंबर, 1986 के विक्रय विलेख की विद्यमानता के तथ्य को विनिर्दिष्ट रूप से कभी भी नकारा नहीं गया, साथ ही प्रतिवादियों ने इसके आधार पर विभाजन कार्यवाहियों के लिए आवेदन किया है ।

19. इस प्रक्रम पर अधिनियम की धारा 66 के उपबंधों को लाभदायक रूप से उद्धृत किया जा रहा है :-

> "66. **पेश करने की सूचना के बारे में नियम** – धारा 65, खंड (क) में निर्दिष्ट दस्तावेजों की अंतर्वस्तु का द्वितीयक साक्ष्य तब तक न दिया जा सकेगा जब तक ऐसे द्वितीयक साक्ष्य देने की प्रस्थापना करने वाले पक्षकार ने उस पक्षकार को, जिसके कब्जे में या शक्त्यधीन वह दस्तावेज है या उसके एटोरनी या प्लीडर को उसे पेश करने के लिए ऐसी सूचना, जैसी कि विधि द्वारा विहित है, यदि विधि द्वारा कोई सूचना विहित नहीं हो तो ऐसी सूचना, जैसी न्यायालय मामले की परिस्थितियों के अधीन युक्तियुक्त समझता न दे दी हो :
>
> परंतु ऐसी सूचना निम्नलिखित अवस्थाओं में से किसी में

अथवा किसी भी अन्य अवस्था में, जिसमें न्यायालय उसके दिए जाने से अभिमुक्ति प्रदान कर दे, द्वितीयक साक्ष्य को ग्राह्य बनाने के लिए अपेक्षित नहीं की जाएगी –

'(1) जबकि साबित किया जाने वाला दस्तावेज स्वयं एक सूचना है,

(2) जबकि प्रतिपक्षी को मामले की प्रकृति से यह जानना ही होगा कि उसे करने की उससे अपेक्षा की जाएगी,

(3) जबकि यह प्रतीत होता है या साबित किया जाता है कि प्रतिपक्षी ने मूल पर कब्जा कपट या बल द्वारा अभिप्राप्त कर लिया है,

(4) जबकि मूल प्रतिपक्षी या उसके अभिकर्ता के पास न्यायालय में है,

(5) जबकि प्रतिपक्षी या उसके अभिकर्ता ने उसका खो जाना स्वीकार कर लिया है,

(6) जबकि दस्तावेज पर कब्जा रखने वाला व्यक्ति न्यायालय की आदेशिका की पहुंच से बाहर है या ऐसी आदेशिका के अध्यधीन नहीं है' ।"

20. विधि के पूर्वोक्त उपबंधों के सावधानीपूर्वक परिशीलन से यह ज्ञात होता है कि धारा 66 के अधीन सूचना का आत्यंतिक प्रयोजन मात्र दूसरे पक्ष, जिसके कब्जे या शक्त्यधीन वह दस्तावेज है, के संज्ञान में यह लाना है कि उसे दस्तावेज पेश करना है ताकि उस पक्ष को उस दस्तावेज को पेश करने के द्वारा अपनी प्रतिरक्षा में सर्वोत्तम साक्ष्य सुनिश्चित करने का अवसर प्रदान किया जा सके । यद्यपि, हमारे समक्ष उपस्थित मामले में प्रस्तुत किए गए आवेदन में ऐसा कोई विनिर्दिष्ट प्रकथन नहीं किया गया है कि दस्तावेज, जिसको द्वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किया जाना ईप्सित है, प्रतिवादियों के कब्जे में है, फिर भी यह अभिकथित किया गया है कि प्रश्नगत दस्तावेज राजस्व प्राधिकारियों को नामांतरण प्रमाणित किए जाने के प्रयोजनार्थ हस्तगत

कर दिया गया था, किंतु इन सब बातों के बावजूद अधिनियम की धारा 65 के अधीन मात्र आवेदन का फाइल किया जाना प्रतिवादियों को प्रश्नगत दस्तावेज को प्रस्तुत करने की पर्याप्त सूचना थी, यदि वह दस्तावेज उनके कब्जे में था । अधिनियम की धारा 66 के अधीन सूचना का जारी न किया जाना निचले न्यायालय के लिए आवेदन को अस्वीकृत किए जाने का कारण नहीं हो सकता था, विशेष रूप से जब यह वादियों का विनिर्दिष्ट पक्षकथन नहीं था कि द्‌वितीयक साक्ष्य के रूप में साबित किए जाने के लिए ईप्सित दस्तावेज प्रतिवादियों के कब्जे में है । इसलिए, इस न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि प्रतिवादियों ने प्रश्नगत विक्रय विलेख की सत्यापित प्रति को अभिलेख पर प्रस्तुत करते हुए उस दस्तावेज की विद्‌यमानता को साबित कर दिया है, जिसे उनके द्‌वारा राजस्व प्राधिकारियों को नामांतरण को सत्यापित किए जाने के प्रयोजनार्थ हस्तगत किया जाना आशयित था ।

21. वर्तमान याचिका को ऊपर की गई विस्तृत चर्चा और माननीय उच्चतम न्यायालय द्‌वारा अधिकथित विधि को ध्यान में रखते हुए मंजूर किया जाता है और तारीख 16 अगस्त, 2017 को 2017 की सी. एम. ए. संख्या 233 में हिमाचल प्रदेश के जिला कांगड़ा के इंदोरा के सिविल न्यायाधीश (कनिष्ठ वर्ग) द्‌वारा तारीख 16 जुलाई, 2017 को पारित आदेश को अपास्त किया जाता है । वादी द्‌वारा अधिनियम की धारा 65 के अधीन द्‌वितीयक साक्ष्य पेश किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल किए गए आवेदन को तद्‌नुसार मंजूर किया जाता है ।

22. यदि कोई आवेदन लंबित हो, तो उसे निस्तारित किया जाता है । यदि कोई अंतरिम निदेश लागू हो, तो उसे रिक्त किया जाता है । यदि कोई अभिलेख प्राप्त किया गया हो, तो उसे तुरंत वापस भेज दिया जाए ।

पुनरीक्षण याचिका मंजूर की गई ।

शु.

<u>संसद् के अधिनियम</u>

वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) अधिनियम, 1963

(1963 का अधिनियम संख्यांक 37)

[8 अक्तूबर, 1963]

उन कर्मकारों को, जिन्हें कोई वैयक्तिक क्षति हुई है, प्रतिकर संदत्त करने का दायित्व नियोजकों पर अधिरोपित करने और ऐसे दायित्व के विरुद्ध नियोजकों के बीमे का उपबंध करने के लिए

अधिनियम

भारत गणराज्य के चौदहवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :-

अध्याय 1

प्रारम्भिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ - (1) यह अधिनियम वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) अधिनियम, 1963 कहा जा सकेगा ।

(2) इसका विस्तार सम्पूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख[1] को प्रवृत्त होगा जिसे केन्द्रीय सरकार अधिसूचना द्वारा नियत करे ।

2. परिभाषाएं - इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, -

(क) "नियोजक" के अन्तर्गत कोई व्यक्ति-निकाय, चाहे वह निगमित हो या नहीं, और नियोजक का कोई प्रबन्ध-अभिकर्ता तथा मृत नियोजक का विधिक प्रतिनिधि आते हैं और जब कि किसी कर्मकार की सेवाएं उस व्यक्ति द्वारा, जिसके साथ कर्मकार ने सेवा या शिक्षुता की संविदा की है, अन्य व्यक्ति को अस्थायी तौर पर उधार दे दी गई है या भाड़े पर दी गई है, तब "नियोजक" से

---

[1] 1-11-1965 : देखिए अधिसूचना सं. सा. का. आ. 3382, तारीख 18-10-1965, भारत का राजपत्र, भाग 2, अनुभाग 3(ii), पृ. 3570.

उस समय तक, जब तक वह कर्मकार उस अन्य व्यक्ति के लिए काम करता रहता है, वह पश्चात्कथित व्यक्ति अभिप्रेत है ;

(ख) "निधि" से धारा 13 के अधीन गठित वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) निधि अभिप्रेत है ;

(ग) "अभिलाभपूर्वक लगे हुए व्यक्ति" और "वैयक्तिक क्षति" के वे ही अर्थ होंगे जो वैयक्तिक क्षति (आपात उपबन्ध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) में उन पदों को क्रमश: समनुदिष्ट हैं ;

(घ) "अधिसूचना" से शासकीय राजपत्र में प्रकाशित अधिसूचना अभिप्रेत है ;

(ङ) "आंशिक नि:शक्तता" से जहां कि नि:शक्तता अस्थायी प्रकृति की है वहां, ऐसी नि:शक्तता अभिप्रेत है जिससे कर्मकार की उस नियोजन में उपार्जन करने की सामर्थ्य कम हो जाती है जिसमें वह उस समय, जब क्षति हुई, लगा हुआ था और जहां कि नि:शक्तता स्थायी प्रकृति है वहां ऐसी नि:शक्तता अभिप्रेत है जिससे किसी भी ऐसे नियोजन में उसकी उपार्जन करने की सामर्थ्य कम हो जाती है जिसे ग्रहण करने के लिए वह उस समय समर्थ था :

परन्तु अनुसूची में विनिर्दिष्ट हर क्षति के या क्षतियों के किसी समुच्चय के बारे में वहां, जहां कि नि:शक्तता का प्रतिशत या संकलित प्रतिशत, जैसा वह अनुसूची में ऐसी क्षति या क्षतियों के समुच्चय के सामने विनिर्दिष्ट है, सौ प्रतिशत से कम होता है, यह समझा जाएगा कि उसके परिणामस्वरूप स्थायी आंशिक नि:शक्तता हुई है ;

[1][(च) "आपात की कालावधि" से, संविधान के अनुच्छेद 352 के खण्ड (1) के अधीन –

(i) 26 अक्तूबर, 1962 को निकाली गई आपात की

---

[1] 1971 के अधिनियम सं. 75 की धारा 2 द्वारा (25-12-1971 से) खण्ड (च) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

उद्घोषणा के संबंध में, 26 अक्तूबर, 1962 को आरम्भ होने वाली और 10 जनवरी, 1968 को, अर्थात् उस तारीख को जिसको कि भारत सरकार के गृह मंत्रालय की अधिसूचना सं. सा. का. नि. 93, तारीख 10 जनवरी, 1968 द्वारा उक्त आपात समाप्त हुआ घोषित किया गया था, समाप्त होने वाली कालावधि अभिप्रेत है ;

(ii) 3 दिसम्बर, 1971 को निकाली गई आपात की उद्घोषणा के संबंध में, 3 दिसम्बर, 1971 को आरम्भ होने वाली और ऐसी तारीख को जिसे केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, उस तारीख के रूप में घोषित करे जिसको कि उक्त आपात समाप्त हो जाएगा, समाप्त होने वाली कालावधि अभिप्रेत है ;]

(छ) "विहित" से धारा 22 के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित अभिप्रेत है ;

(ज) "पूर्ण नि:शक्तता" से ऐसी नि:शक्तता अभिप्रेत है, चाहे वह अस्थायी प्रकृति की हो या स्थायी प्रकृति की, जो किसी कर्मकार को ऐसे सब काम के लिए असमर्थ कर देती है जिसे करने के लिए वह उस समय समर्थ था जब क्षति हुई थी :

परन्तु अनुसूची में विनिर्दिष्ट हर क्षति के या क्षतियों के समुच्चय के बारे में वहां, जहां कि नि:शक्तता का प्रतिशत या संकलित प्रतिशत, जैसा वह अनुसूची में ऐसी क्षति या क्षतियों के समुच्चय के सामने विनिर्दिष्ट है, सौ प्रतिशत या उससे अधिक होता है, यह समझा जाएगा कि उसके परिणामस्वरूप स्थायी पूर्ण नि:शक्तता हुई है ;

(झ) "स्कीम" से धारा 8 की उपधारा (1) में निर्दिष्ट वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) स्कीम अभिप्रेत है ;

(ञ) "मजदूरी" से कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 (1923 का 8) में यथापरिभाषित मजदूरी अभिप्रेत है, और मासिक मजदूरी

का वही अर्थ है जो इस पद को कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 की धारा 5 द्वारा समनुदिष्ट है और इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए इसका हिसाब उस रीति से किया जाएगा जो उक्त धारा में अधिकथित है ;

(ट) "कर्मकार" से (उस व्यक्ति से, जिसका नियोजन नैमित्तिक प्रकृति का है और जो नियोजक के व्यापार या कारबार के प्रयोजनों के लिए नियोजित होने से अन्यथा नियोजित है, भिन्न) कोई व्यक्ति अभिप्रेत है जो धारा 3 में विनिर्दिष्ट नियोजनों में से किसी में नियोजित है ।

अध्याय 2

अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर

3. कर्मकार जिन्हें यह अधिनियम लागू होता है – वे कर्मकार, जिन्हें यह अधिनियम लागू होता है, ये हैं –

(क) किसी ऐसे नियोजन या नियोजन-वर्ग में नियोजित कर्मकार जो [1][भारत रक्षा नियम, 1962 के नियम, 126कक या भारत रक्षा नियम, 1971 के नियम 119], के अधीन आवश्यक सेवा है या घोषित किया गया है ;

(ख) कारखाना अधिनियम, 1948 (1948 का 63) की धारा 2 के खण्ड (ड) में यथापरिभाषित कारखाने में नियोजित कर्मकार ;

(ग) खान अधिनियम, 1952 (1952 का 35) के अर्थ के अंदर की किसी खान में नियोजित कर्मकार ;

(घ) किसी महापत्तन में नियोजित कर्मकार ;

(ङ) बागान श्रम अधिनियम, 1951 (1951 का 69) की धारा 2 के खण्ड (च) में यथापरिभाषित बागान में नियोजित कर्मकार ;

---

[1] 1971 के अधिनियम सं. 75 की धारा 3 द्वारा (25-12-1971 से) कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(च) केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचना द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट नियोजन में नियोजित कर्मकार ।

4. अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर किसके द्वारा और कैसे संदेय होगा – (1) ऐसी शर्तों के अध्यधीन जैसी कि स्कीम में विनिर्दिष्ट की जाएं, अभिलाभपूर्वक लगे हुए व्यक्ति को, जो ऐसा कर्मकार हो, जिसे यह अधिनियम लागू होता है, हुई वैयक्तिक क्षति की बाबत, वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन उपबंधित किसी अनुतोष के अतिरिक्त, नियोजक द्वारा वह प्रतिकर संदेय होगा जिसकी रकम और किस्म धारा 7 द्वारा उपबंधित है :

परन्तु जहां कि किसी नियोजक ने धारा 9 की उपधारा (1) द्वारा अपेक्षित रूप में बीमा पालिसी ली हुई हो और उस पर प्रीमियम के रूप में सब संदाय, जो तत्पश्चात् उसके द्वारा शोध्य हों, स्कीम के उपबंधों के अनुसार कर दिए हों, अथवा जहां कि धारा 9 की उपधारा (1) के या धारा 10 की उपधारा (2) के उपबंधों के द्वारा नियोजक से बीमा कराने की अपेक्षा नहीं की गई है, वहां केन्द्रीय सरकार, नियोजक की ओर से, इस उपधारा के अधीन प्रतिकर संदत्त करने के नियोजक के दायित्व को ग्रहण करेगी और उसका निर्वहन करेगी ।

(2) इस अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर स्कीम में इस निमित्त किए गए उपबंधों के अनुसार संदेय होगा ।

(3) यह धारा सरकार पर आबद्धकर होगी ।

5. इस अधिनियम के और 1962 के अधिनियम 59 के अधीन से अन्यथा प्रतिकर प्राप्त करने के अधिकार पर परिसीमा – जहां कि किसी व्यक्ति को किसी ऐसी वैयक्तिक क्षति की बाबत, जिसकी बाबत प्रतिकर इस अधिनियम के अधीन संदेय है, नियोजक से इस अधिनियम के और वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के उपबंधों के अलावा प्रतिकर (चाहे वह उपदान, पेन्शन या अनुकंपा-संदाय के रूप में हो या अन्यथा या नुकसानी प्राप्त करने का अधिकारी हो, वहां उस अधिकार का विस्तार ऐसे प्रतिकर या नुकसानी के केवल उतने भाग

तक होगा जितना इस अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर की रकम से अधिक हो ।

6. सरकार के कर्मचारियों के संबंध में विशेष उपबंध – जहां कि सरकार के नियोजन में के किसी व्यक्ति को, सरकार से, अपनी सेवा की शर्तों को विनियमित करने वाले नियमों के अधीन, उस अधिनियम के या वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के उपबंधों के अलावा, किसी ऐसी वैयक्तिक क्षति की बाबत, जिसकी बाबत प्रतिकर इस अधिनियम के अधीन संदेय हो, कोई धनराशि चाहे वह असाधारण पेन्शन, उपदान या अनुकंपा-संदाय के रूप में हो या नुकसानी के रूप में, प्राप्त करने का अधिकार हो, वहां इस अधिनियम या वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, उस व्यक्ति को उन नियमों के अधीन अनुज्ञेय धनराशि प्राप्त करने का अधिकार होगा और यदि ऐसे अनुज्ञेय धनराशि इस अधिनियम और वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 के अधीन संदेय रकम से कम हो, तो उसको यह अतिरिक्त अधिकार भी होगा कि वह न नियमों के अधीन अनुज्ञेय धनराशि और इस अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर की रकम के अन्तर के बराबर रकम प्राप्त करे ।

7. प्रतिकर की रकम – (1) इस अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर इस प्रकार होगा :–

(क) जहां कि क्षति के परिणामस्वरूप मृत्यु हो जाती है वहां वैसे ही मामले में कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 (1923 का 8) के अधीन संदेय रकम में से वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन संदेय रकम का एकमुश्त मूल्य घटाकर शेष रकम ;

(ख) जहां कि क्षति के परिणामस्वरूप पूर्ण नि:शक्तता हो जाती है, वहां वैसे ही मामले में कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 (1923 का 8) के अधीन संदेय रकम में से वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन संदेय रकम का एकमुश्त मूल्य घटाकर शेष रकम ;

(ग) जहां कि भूमि के परिणामस्वरूप स्थायी आंशिक नि:शक्तता हो जाती है, वहां –

(i) ऐसी क्षति की दशा में जो अनुसूची में विनिर्दिष्ट है उस प्रतिकर का, जो स्थायी पूर्ण नि:शक्तता की दशा में संदेय होता, ऐसा प्रतिशत जैसा नि:शक्तता के प्रतिशत के रूप में उसमें विनिर्दिष्ट है ;

(ii) ऐसी क्षति की दशा में जो अनुसूची में विनिर्दिष्ट नहीं है, उस प्रतिकर का ऐसी नि:शक्तता के लिए अनुसूची में विनिर्दिष्ट प्रतिशत जैसी वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन बनाई गई स्कीम के अधीन कार्य कर रहे सक्षम चिकित्सा प्राधिकारी द्वारा तत्समान कोटि की ठहराई जाए ;

(iii) जहां कि एक से अधिक क्षतियां होती हैं, वहां उन क्षतियों की बाबत संदेय संकलित प्रतिकर, किन्तु ऐसे कि यह प्रतिकर किसी भी दशा में उस प्रतिकर से अधिक न हो, जो तब संदेय होता जब उन क्षतियों के परिणामस्वरूप स्थायी पूर्ण नि:शक्तता हो गई होती ;

(घ) जहां कि क्षति के परिणामस्वरूप अस्थायी नि:शक्तता, चाहे पूर्ण या आंशिक हो जाती है, वहां कर्मकार प्रतिकर अधिनियम, 1923 (1923 का 8) के अधीन वैसे ही मामले में संदेय अर्धमासिक संदाय, किन्तु हर एक मामले में जब तक वह वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन बनाई गई स्कीम के अधीन संदाय प्राप्त करता रहे तब तक उस संदाय में से वह रकम घटाकर जो उक्त स्कीम के अधीन संदेय हो ।

(2) जहां कि कर्मकार की मासिक मजदूरी पांच सौ रुपए से अधिक है, वहां इस अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर वह रकम होगी जो उस कर्मकार की दशा में, जिसकी मासिक मजदूरी चार सौ रुपए से अधिक है, उपधारा (1) के उपबंधों के अधीन संदेय हो ।

अध्याय 3

वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) स्कीम

8. वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) स्कीम – (1) केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा, एक स्कीम प्रवर्तन में लाएगी जो वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) स्कीम कही जाएगी, जिसके द्वारा इस अधिनियम के प्रयोजनों को प्रभावी बनाने के लिए आवश्यक सब बातों के लिए उपबंध किया जाए और जिसके द्वारा केन्द्रीय सरकार, उन कर्मकारों के नियोजकों के संबंध में, जिन्हें यह अधिनियम लागू होता है, इस अधिनियम के और स्कीम के अधीन उनके द्वारा कर्मकारों के प्रति उपगत दायित्वों के विरुद्ध ऐसे नियोजकों का बीमा करने का जिम्मा ले :

[1][परन्तु आपात की विभिन्न कालावधियों के संबंध में विभिन्न स्कीमें प्रवर्तित की जाएंगी ।]

(2) स्कीम यह सुनिश्चित करेगी कि केन्द्रीय सरकार का स्कीम के अधीन बीमाकर्ता के रूप में कोई भी दायित्व केन्द्रीय सरकार की ओर से कार्य करने वाले किसी व्यक्ति द्वारा दी गई विहित प्ररूप की बीमा पालिसी द्वारा अवधारित कर दिया जाए ।

(3) स्कीम यह उपबंध कर सकेगी कि वह उस तारीख को, जो उसमें विनिर्दिष्ट की जाए, प्रवर्तन में आएगी या प्रवर्तन में आ गई समझी जाएगी ।

(4) स्कीम केन्द्रीय सरकार द्वारा किसी भी समय संशोधित की जा सकेगी ।

(5) उपधारा (1) के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, स्कीम –

(क) इस अधिनियम और स्कीम के अधीन संदेय प्रतिकर के संदाय को विनियमित करने वाले उपबंध बना सकेगी, जिनके अंतर्गत स्कीम की किसी अपेक्षा के उल्लंघन के लिए दो हजार रुपए से अनधिक जुर्माने द्वारा दंड का उपबंध आता है ;

---

[1] 1971 के अधिनियम सं. 75 की धारा 4 द्वारा (25-12-1971 से) अंत:स्थापित ।

(ख) वे व्यक्ति जिनको और वे अनुपात और रीति जिनमें इस अधिनियम के अधीन संदाय किए जाएंगे, विनिर्दिष्ट करने वाले उपबंध बना सकेगी ।

(ग) वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन संदेय रकम का एकमुश्त मूल्य अवधारित करने के लिए उपबंध बना सकेगी ;

(घ) वे दशाएं या परिस्थितियां विनिर्दिष्ट कर सकेगी जिनमें कर्मकार इस अधिनियम के अधीन संदेय प्रतिकर के लिए निर्हकित हो जाएगा, और स्कीम के अधीन दी गई बीमा पालिसी की इसे एक अभिव्यक्त या विवक्षित शर्त बना सकेगी कि ऐसी विनिर्दिष्ट की अवज्ञा में किया गया प्रतिकर का संदाय पालिसी के अंतर्गत नहीं आएगा ;

(ङ) वे दशाएं या परिस्थितियां विनिर्दिष्ट कर सकेगी जिनमें किसी कर्मकार को संदेय प्रतिकर उस दशा में विधारित किया, रद्द किया, घटाया या पुनर्विलोकित किया जा सकेगा जिसमें वैयक्तिक क्षति (आपात उपबंध) अधिनियम, 1962 (1962 का 59) के अधीन बनाई गई स्कीम के अधीन किया गया अधिनिर्णय विधारित किया, रद्द किया, घटाया या पुनर्विलोकित किया जाए ;

(च) उन दशाओं के लिए उपबंध कर सकेगी जिनमें किसी नियोजक ने, इस अधिनियम द्वारा अधिरोपित पूरे दायित्व का या उसके किसी भाग का जिम्मा स्वेच्छा से लिया हो ;

(छ) स्कीम के अधीन किसी बीमा पालिसी पर शोध्य कुल प्रीमियम का अंतिम निर्धारण या तो नियोजक द्वारा पहले ही किए जा चुके सब प्रीमियम के अग्रिम संदायों के समतुल्य के रूप में, या नियोजक द्वारा दिए गए अग्रिम संदायों की रकम जिन कालावधियों के संबंध में नियत की गई थी उनके लिए नियोजक के कुल मजदूरी बिलों के प्रतिशत के रूप में, या आपात की कालावधि के अवसान के अव्यवहित पूर्वगामी बारह से अन्यून और पन्द्रह से

अनधिक मास की कालावधि के लिए नियोजक के कुल मजदूरी बिल के प्रतिशत के रूप में किए जाने का उपबंध कर सकेगी और किसी ऐसी पालिसी पर शोध्य कुल प्रीमियम के निर्धारण के लिए उपबंध कर सकेगी जिसका प्रवृत्त रहना आपात की कालावधि के अवसान के पूर्व ही इस कारण समाप्त हो गया हो कि नियोजक इस कारबार से निकल गया है ;

(ज) किसी बीमा पालिसी पर शोध्य कुल प्रीमियम की किसी नियोजक से वसूली के लिए उपबंध कर सकेगी, जिसके अंतर्गत किसी विहित कालावधि के लिए उसके कुल मजदूरी बिलों के प्रतिशत पर आधारित रकम के कालिक अग्रिम संदायों द्वारा वसूली के लिए, हर एक नियोजक द्वारा ऐसे किए गए संदायों के अलग-अलग निधियों में रखे जाने के लिए, और अंतिम रूप से निर्धारित कुल प्रीमियम का ऐसे कालिक संदायों के योग के विरुद्ध अंतिम समायोजन किए जाने के लिए उपबंध आता है :

परन्तु जहां कि विहित कालावधि के कुल मजदूरी बिलों पर आधारित कालिक संदाय की रकम आठ रुपए से कम हो वहां उसे बढ़ाकर आठ रुपए कर दिया जाएगा :

परन्तु यह और कि ऐसे कालिक संदायों में से प्रथम संदाय, पूर्वोक्त आठ रुपए के न्यूनतम के अध्यधीन रहते हुए उस दर से होगा जो केन्द्रीय सरकार इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे :

परन्तु यह और कि ऐसे कालिक संदाय वर्ष की हर एक तिमाही में एक बार से अधिक बार नहीं होंगे :

परन्तु यह और कि प्रथम कालिक संदाय के पश्चात् के किसी भी कालिक संदाय के दर, पूर्वोक्त आठ रुपए के न्यूनतम के अध्यधीन रहते हुए, वह होगी जो कि केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के अधीन के अपने दायित्व पर विचार करने के पश्चात् समय-समय पर नियत करे, और केन्द्रीय सरकार, जहां कि निधि में की कुल रकम को ध्यान में रखते हुए यह अपेक्षा हो वहां किसी कालिक संदाय को या तो अधित्यक्त या मुल्तवी कर सकेगी ।

9. अनिवार्य बीमा – (1) ऐसे कर्मकारों का हर नियोजक जिन्हें यह अधिनियम लागू होता है या बाद में लागू कर दिया जाए, किसी ऐसे नियोजक के सिवाय जिसका इस अधिनियम के प्रारम्भ होने के पश्चात् किसी तिमाही के लिए कुल मजदूरी बिल पन्द्रह सौ रुपए से कभी अधिक न हुआ हो, उस तारीख के पूर्व जो विहित की जाएं या उसके प्रथम बार ऐसा नियोजक बनने के पश्चात् उस कालावधि के अवसान के पूर्व, जो विहित की जाए, इस स्कीम के अनुसार निकाली गई एक बीमा पालिसी लेगा, जिसके द्वारा वह, अपने पर इस अधिनियम द्वारा अधिरोपित सब दायित्वों के विरुद्ध बीमा, आपात की कालावधि के अवसान के पूर्व की उस तारीख तक के लिए, यदि कोई हो, जिसको वह ऐसा नियोजक न रह जाए जिससे यह धारा लागू होती है, किया जाए ।

(2) जो कोई उपधारा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करेगा, या उस उपधारा द्वारा यथा अपेक्षित बीमा पालिसी लेकर उस पर प्रीमियम के रूप में ऐसा संदाय करने में, जो स्कीम के उपबंधों के अनुसार उसके द्वारा तत्पश्चात् शोध्य हो, असफल रहेगा, वह जुर्माने से, जो दो हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा और ऐसे दोषसिद्ध किए जाने के पश्चात् के हर ऐसे दिन के लिए, जिसको वह उल्लंघन या असफलता चालू रहे, अतिरिक्त जुर्माने से भी दंडनीय होगा जो एक हजार रुपए तक का हो सकेगा ।

(3) यह धारा सरकार पर आबद्धकर न होगी ।

10. मालिक और ठेकेदार – (1) जहां कि कोई व्यक्ति (जिसे इस धारा में मालिक कहा गया है) अपने व्यापार या कारबार के अनुक्रम में या के प्रयोजनों के लिए, उन कर्मकारों की सेवाओं का उपयोग करे जिनकी सेवाएं अस्थायी रूप से उसे उधार या भाड़े पर किसी अन्य ऐसे व्यक्ति के साथ ठहराव द्वारा, जिससे कि उन कर्मकारों ने सेवा या शिक्षुता की संविदाएं की हों, दी गई हों, अथवा अपने व्यापार या कारबार के अनुक्रम में या के प्रयोजनों के लिए, किसी अन्य व्यक्ति के साथ उस अन्य व्यक्ति द्वारा या के अधीन किसी ऐसे सम्पूर्ण कार्य या उसके किसी भाग के निष्पादन के लिए संविदा करे, जो मामूली तौर पर

मालिक के व्यापार या कारबार का भाग हो (जिन ऐसे दोनों अन्य व्यक्तियों में से हर एक को इस धारा में ठेकेदार कहा गया है) वहां मालिक ठेकेदार से, धारा 11 के अधीन कार्य करने वाले केन्द्रीय सरकार के उस अभिकर्ता का नाम अभिप्राप्त करेगा जिससे बीमा कराने का वह आशय रखता हो और ठेकेदार के साथ अपने ठहराव या संविदा के अस्तित्व की रिपोर्ट उस अभिकर्ता को देगा ।

(2) इस अधिनियम में अन्यत्र अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, किसी ऐसी दशा में, जैसी उपधारा (1) में निर्दिष्ट है, वहां जहां कि ठहराव या संविदा एक मास से कम की अवधि के लिए हो, ठेकेदार के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि वह अपने द्वारा नियोजित उन कर्मकारों की बाबत इस अधिनियम द्वारा उस पर अधिरोपित दायित्वों के लिए बीमा कराए, जिनकी सेवाएं किसी ऐसे ठहराव पर उधार या भाड़े पर दी गई हों, या किसी ऐसी संविदा के अधीन के कार्य के निष्पादन में उपयोग में लाई गई हों, जो उपधारा (1) में निर्दिष्ट हैं ।

(3) स्कीम, ठेकेदार द्वारा मालिक को किसी ऐसी जानकारी का प्रदाय किए जाने के लिए उपबंध कर सकेगी जो इस धारा के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने को समर्थ बनाने के लिए आवश्यक हो, जिसके अंतर्गत स्कीम की किसी अपेक्षा के उल्लंघन के लिए दो हजार रुपए में अनधिक के जुर्माने द्वारा दंड का उपबंध आता है ।

11. केन्द्रीय सरकार द्वारा अभिकर्ताओं का नियोजन – केन्द्रीय सरकार, अधिसूचना द्वारा किसी व्यक्ति का, इस अधिनियम के किन्हीं प्रयोजनों के लिए उसके अभिकर्ता के रूप में कार्य करने के लिए नियोजन कर सकेगी या ऐसा नियोजन प्राधिकृत कर सकेगी और ऐसे नियोजित व्यक्ति को उतना पारिश्रमिक दे सकेगी जितना वह सरकार ठीक समझे ।

12. कुछ बीमा कारबार का प्रतिषेध – (1) उस तारीख के पश्चात् जिसको स्कीम प्रवर्तन में लाई जाए, कोई भी व्यक्ति उस व्यक्ति के रूप में के सिवाय, जिसे स्कीम के अनुसरण में पालिसियां देने के लिए केन्द्रीय सरकार ने अपने अभिकर्ता के रूप में प्राधिकृत किया है, भारत

के नियोजकों का उन दायित्वों के लिए बीमा करने का कारबार नहीं चलाएगा जिनके विरुद्ध बीमा का उपबंध स्कीम करती हो ।

(2) उपधारा (1) में की कोई भी बात, किसी ऐसी बीमा पालिसी को, जो उस तारीख के पहले की गई हो जिसको स्कीम प्रवर्तन में लाई जाए और उस तारीख के पश्चात् चालू रहे, अथवा किसी ऐसी बीमा पालिसी को, जो ऐसे दायित्वों के बारे में हो, जो इस अधिनियम द्वारा अधिरोपित दायित्वों से आधिक्य में हो, लागू नहीं होती है ।

(3) जो कोई उपधारा (1) के उपबंधों का उल्लंघन करेगा, वह जुर्माने से, जो पांच हजार रुपए तक का हो सकेगा और अतिरिक्त जुर्माने से, जो प्रथम दिन के पश्चात् हर ऐसे दिन के लिए, जिसको उल्लंघन चालू रहे, एक हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

13. वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) निधि – (1) केन्द्रीय सरकार वैयक्तिक क्षति (प्रतिकर बीमा) निधि कही जाने वाली एक निधि को (जिसे एतस्मिन् पश्चात् "निधि" कहा गया है), हर एक वित्तीय वर्ष में इतनी राशियां, जितनी आवश्यक समझी जाएं, संसद् द्वारा इस निमित्त विधि द्वारा सम्यक् विनियोग कर दिए जाने के पश्चात् अंतरित कर सकेगी, जो राशियां केन्द्रीय सरकार द्वारा स्कीम के अधीन बीमा प्रीमियमों के रूप में या धारा 18 के अधीन अपराधों के शमन पर किए गए संदायों के रूप में, या इस अधिनियम के अधीन किसी अभियोजन में अधिरोपित जुर्माने में से न्यायालय द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 (1898 का 5) की धारा 545 के अधीन दिलवाए गए व्ययों या प्रतिकर के रूप में, या स्कीम के अधीन अधिरोपित शास्तियों के रूप में, केन्द्रीय सरकार द्वारा प्राप्त राशियों से अधिक नहीं होगी ।

(2) इस निधि में से वे सब राशियां संदत्त की जाएंगी जो केन्द्रीय सरकार द्वारा इस अधिनियम या स्कीम के अधीन के अपने दायित्वों के निर्वहन के लिए, या स्कीम के प्रयोजनों के लिए नियोजित अभिकर्ताओं के पारिश्रमिक और व्ययों के केन्द्रीय सरकार द्वारा संदाय के लिए, या स्कीम के प्रशासन-खर्च के केन्द्रीय सरकार द्वारा संदाय के लिए अपेक्षित हों :

परन्तु निधि में से कोई भी संदाय सरकार द्‌वारा नियोजित कर्मकारों को प्रतिकर का संदाय करने के सरकार के किसी दायित्व के निर्वचन में नहीं किया जाएगा ।

(3) यदि किसी ऐसे समय जब निधि में से कोई संदाय किया जाना हो, निधि में जमा राशि, उस संदाय के लिए अपेक्षित राशि से कम हो तो कमी के बराबर रकम, संसद् द्‌वारा विधि द्‌वारा किए गए सम्यक् विनियोग के पश्चात्, भारत की संचित निधि में से अग्रिम के रूप में निधि में जमा कर दी जाएगी ।

(4) यदि किसी समय निधि में जमा रकम उस राशि से अधिक हो, जो निधि में से संदत्त किए जाने के लिए केन्द्रीय सरकार की राय में संभाव्यत: अपेक्षित हो, तो आधिक्य का व्ययन ऐसी रीति से किया जाएगा जैसी केन्द्रीय सरकार ठीक समझे ।

(5) केन्द्रीय सरकार, निधि में प्राप्त और उसमें से संदत्त सभी राशियों का लेखा ऐसे प्ररूप में और ऐसी रीति में, जैसी विहित की जाए, तैयार करेगी और या तो प्रतिवर्ष या ऐसे लघुतर अंतरालों पर, जैसे उसमें विनिर्दिष्ट किए जाएं, प्रकाशित करेगी ।

अध्याय 4

प्रकीर्ण

14. जानकारी अभिप्राप्त करने की केन्द्रीय सरकार की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार द्‌वारा इस निमित्त प्राधिकृत कोई व्यक्ति, यह अभिनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए कि क्या इस अधिनियम की तथा स्कीमों की अपेक्षाओं का अनुपालन किया गया है, किसी नियोजक से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह उसे ऐसे लेखें, पुस्तकें या अन्य दस्तावेजें प्रस्तुत करे या ऐसी जानकारी दे या ऐसे प्रमाणपत्र दे जैसे वह व्यक्ति युक्तियुक्त रूप से आवश्यक समझे ।

(2) जो कोई किसी व्यक्ति के इस धारा के अधीन की उसकी शक्तियों के प्रयोग में जानबूझकर बाधा डालेगा या तद्धीन न की गई किसी अपेक्षा का अनुपालन करने में युक्तियुक्त प्रतिहेतु के बिना

असफल रहेगा, वह उस हर एक अवसर के बारे में, जिसको ऐसी कोई बाधा या असफलता होती है, जुर्माने से, जो एक हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

(3) जो कोई इस धारा के अधीन अपनी बाध्यताओं के तात्पर्यित अनुपालन में जानते हुए या लापरवाही से ऐसा कथन करेगा, जो किसी तात्विक विशिष्टि में मिथ्या हो, वह जुर्माने से, जो एक हजार रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

15. असंदत्त प्रीमियम की वसूली – (1) धारा 9 की उपधारा (2) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, जहां कि कोई व्यक्ति इस अधिनियम और स्कीम द्वारा अपेक्षित रूप में या अपेक्षित पूरी रकम तक बीमा कराने में असफल रहा है और तद्द्वारा वह प्रीमियम के रूप में किसी ऐसे धन के संदाय से, जो उसे ऐसी असफलता न होने की दशा में स्कीम के उपबंधों के अनुसार संदत्त करना होता, बच निकला है, वहां केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत कोई आफिसर उस रकम का, जिसके संदाय से वह ऐसे बच निकला है, अवधारण कर सकेगा और ऐसे अवधारित रकम ऐसे व्यक्ति द्वारा देय होगी और उपधारा (2) में उपबंधित रूप में उससे वसूलीय होगी ।

(2) स्कीम के अधीन की गई बीमा पालिसी पर प्रीमियम के रूप में, स्कीम के उपबंधों के अनुसार देय धनराशि और उपधारा (1) के अधीन देय के रूप में अवधारित की गई रकम भू-राजस्व की बकाया के रूप में वसूलीय होगी ।

(3) कोई भी व्यक्ति, जिसके विरुद्ध उपधारा (1) के अधीन अवधारण किया जाए, विहित कालावधि के भीतर, ऐसे अवधारण के विरुद्ध अपील केन्द्रीय सरकार को कर सकेगा, जिसका विनिश्चय अन्तिम होगा ।

16. प्रतिकर का वहां संदाय जहां कि नियोजक बीमा करने में असफल रहा हो – जहां कि कोई नियोजक, धारा 9 की उपधारा (1) द्वारा अपेक्षित रूप में बीमा पालिसी लेने में असफल रहा हो, या उस

उपधारा द्वारा अपेक्षित रूप में बीमा पालिसी लेकर, उस पर के उन प्रीमियमों का संदाय करने में असफल रहा हो, जो स्कीम के उपबंधों के अनुसार तत्पश्चात् उसके द्वारा शोध्य हों, वहां किसी ऐसे प्रतिकर का संदाय, जिसके संदाय के लिए वह इस अधिनियम के अधीन दायी हो, निधि में से किया जाएगा, और ऐसे संदत्त राशि, ऐसे संदत्त राशि से अनधिक ऐसी रकम की शास्ति सहित, जो केन्द्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत आफिसर द्वारा अवधारित की जाए, निधि में संदाय के लिए जमा किए जाने के लिए, नियोजक से भू-राजस्व की बकाया के रूप में वसूलीय होगी ।

17. अभियोजनों पर निर्बंधन – इस अधिनियम के अधीन दंडनीय किसी अपराध के लिए किसी व्यक्ति के विरुद्ध कोई भी अभियोजन, केन्द्रीय सरकार या उस सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा या की सम्मति से संस्थित किए जाने के सिवाय संस्थित नहीं किया जाएगा ।

18. अपराधों का शमन – धारा 9 की उपधारा (2) के अधीन दंडनीय किसी अपराध का, केन्द्रीय सरकार या उस सरकार द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा शमन, ऐसी धनराशि के जैसी, यथास्थिति, केन्द्रीय सरकार या वह प्राधिकारी ठीक समझे, निधि में जमा किए जाने के लिए संदाय पर, अभियोजन के संस्थित किए जाने के पूर्व या पश्चात् किया जा सकेगा ।

19. कोई भी दंड अधिरोपित करने की मजिस्ट्रेट की शक्ति – जहां कि इस अधिनियम के विरुद्ध किसी अपराध का विचारण प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट या प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा किया जाए, वहां अपराध का विचारण करने वाला मजिस्ट्रेट, इस अधिनियम द्वारा प्राधिकृत कोई भी दंडादेश, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 (1898 का 5) में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, पारित कर सकेगा ।

20. विधिक कार्यवाहियों का वर्जन – (1) कोई भी वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही इस अधिनियम के अधीन सद्भावपूर्वक की गई

या की जाने के लिए आशयित किसी बात के लिए किसी व्यक्ति के विरुद्ध नहीं होगी ।

(2) किसी ऐसे धन के प्रतिदाय के लिए, जो इस अधिनियम के अधीन ली गई या ली गई तात्पर्यित बीमा पालिसी पर प्रीमियम के रूप में संदत्त किया गया हो या संदत्त किया गया तात्पर्यित हो, किसी सिविल न्यायालय में कोई भी वाद, केन्द्रीय सरकार के या धारा 11 के अधीन उसके अभिकर्ता के रूप में कार्य करने वाले किसी व्यक्ति के विरुद्ध न चल सकेगा ।

21. नियोजकों को छूट देने की शक्ति – केन्द्रीय सरकार, यदि उसका समाधान हो जाए कि बीमाकर्ताओं के साथ नियोजक ने इस अधिनियम के प्रारम्भ के पहले ऐसी संविदा कर ली है जिसमें इस अधिनियम द्वारा उस नियोजक पर अधिरोपित दायित्व सारतः आ जाते हैं, उस नियोजक को, उसकी प्रार्थना पर इस अधिनियम के उपबंधों से छूट तब तक के लिए देगी जब तक वह संविदा चालू रहे ।

22. नियम बनाने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार, इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए नियम अधिसूचना द्वारा बना सकेगी ।

(2) पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऐसे नियम निम्नलिखित विहित कर सकेंगे –

(क) वे सिद्धान्त जिनका अनुसरण नियोजक का कुल मजदूरी बिल अभिनिश्चित करने में किया जाना है, जिनके अंतर्गत उसमें से मजदूरी की कतिपय कोटियों के, या मजदूरी की परिभाषा में सम्मिलित कतिपय तत्वों के अपवर्जन के लिए उपबंध आता है ;

(ख) धारा 8 की उपधारा (2) में निर्दिष्ट बीमा पालिसियों का प्ररूप ;

(ग) धारा 8 की उपधारा (5) के खंड (छ) में निर्दिष्ट कालावधि ;

(घ) धारा 9 की उपधारा (1) में निर्दिष्ट तारीख और कालावधि ;

(ङ) धारा 13 की उपधारा (5) में निर्दिष्ट लेखा का प्ररूप और उसे तैयार और प्रकाशित करने की रीति ;

(च) धारा 15 की उपधारा (3) में निर्दिष्ट कालावधियां ;

(छ) कोई अन्य विषय जो विहित किया जाना है या किया जाए ।

23. कठिनाइयों के निराकरण की शक्ति – यदि इस अधिनियम के उपबंधों को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उद्भूत हो और विशिष्टत: यदि इस बारे में कि क्या इस अधिनियम के अधीन कोई प्रतिकर संदेय है, या उसके परिणाम के बारे में कोई संदेह उद्भूत हो, तो केन्द्रीय सरकार, आदेश द्वारा, ऐसा उपबंध कर सकेगी या ऐसा निदेश दे सकेगी, जो इस अधिनियम के उपबंधों से असंगत न हों, और जो उसे संदेह या कठिनाई के निराकरण के लिए आवश्यक या समीचीन प्रतीत हो ; और या ऐसे मामलों में केन्द्रीय सरकार का विनिश्चय अंतिम होगा ।

24. [1][प्रत्येक स्कीम और नियम का संसद् के समक्ष रखा जाना] – इस अधिनियम के अधीन बनाई गई हर स्कीम और हर नियम बनाए जाने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र, संसद् के हर एक सदन के समक्ष, उस समय जब वह सत्र में हो, कुल मिलाकर तीस दिन की कालावधि के लिए, जो एक सत्र में या दो या अधिक क्रमवर्ती सत्रों में समाविष्ट हो सकेगी, रखा जाएगा और यदि उस सत्र के जिसमें वह ऐसे रखा गया हो या पूर्वोक्त क्रमवर्ती सत्रों के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस स्कीम या नियम में कोई उपान्तर करने के लिए सहमत हो जाएं या दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह स्कीम या नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात्, यथास्थिति, वह स्कीम या नियम ऐसे उपान्तरित रूप में ही प्रभावशील होगा या उसका कोई भी प्रभाव न होगा, किन्तु ऐसे कि ऐसा कोई उपान्तर या बातिलकरण उस स्कीम या नियम के अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होगा ।

---

[1] 2005 के अधिनियम सं. 4 की धारा 2 और अनुसूची द्वारा (11-1-2005 से) कतिपय शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

अनुसूची

[धाराएं 2 और 7(1) देखिए]

क्षति का वर्णन	**नि:शक्तता का प्रतिशत**
1	2
ऊर्ध्व शाखा	
दोनों हाथों की या सभी अंगुलियों और अंगूठों की हानि	100
स्कंध से दक्षिण भुजा का विच्छेदन	90
स्कंध से वाम भुजा का विच्छेदन	90
स्कंध से नीचे विच्छेदन, जबकि स्थूणक अंसकूट के सिरे से 6 इंच अधिक हो (दक्षिण)	80
स्कंध से नीचे विच्छेदन, जबकि स्थूणक 6 इंच से अधिक न हो (दक्षिण)	90
स्कंध से नीचे विच्छेदन, जबकि स्थूणक 6 इंच से अधिक न हो (वाम)	80
स्कंध से नीचे विच्छेदन, जबकि स्थूणक अंसकूट के सिरे से 6 इंच से अधिक हो (वाम)	70
कोहनी से या कोहनी से नीचे विच्छेदन, जबकि स्थूणक 5 इंच से अधिक न हो (दक्षिण)	80
कोहनी से या कोहनी के नीचे से विच्छेदन, जबकि स्थूणक 5 इंच से अधिक न हो (वाम)	70
कोहनी से नीचे विच्छेदन, जबकि स्थूणक 5 इंच से अधिक हो (दक्षिण)	70

कोहनी से नीचे विच्छेदन, जबकि स्थूणक 5 इंच से अधिक हो (वाम)	50
अंगूठे की हानि (दक्षिण)	50
अंगूठे की हानि (वाम)	40
चार अंगुलियों की हानि (दक्षिण)	50
चार अंगुलियों की हानि (वाम)	40
किसी भी हाथ की दो अंगुलियों की हानि	20
अध: शाखा	
दो या अधिक अंगों की हानि	100
दोनों पादों का विच्छेदन	100
नितम्ब पर या नितम्ब से नीचे एक टांग का विच्छेदन, जबकि स्थूणक 5 इंच से अधिक न हो	90
दोनों पादों का लिसफ्रेंक आपरेशन	80
नितम्ब से नीचे विच्छेदन, जबकि स्थूणक 5 इंच से अधिक हो	80
प्रपदांगुल्यस्थि संधि के निकट से दोनों पादों का विच्छेदन	80
प्रपदांगुल्यास्थि संधि से दोनों पादों की सब अंगुलियों की हानि	40
निकटस्थ अंतरागुल्यस्थि संधि के निकट दोनों पादों की सब अंगुलियों की हानि	30
निकटस्थ अंतरागुल्यस्थि संधि से दूर दोनों पादों की सब अंगुलियों की हानि	20

मध्य-उरु से नीचे घुटनों से या घुटनों के नीचे से टांग का विच्छेदन, जबकि स्थूणक 4 इंच से अधिक न हो	70
घुटने से नीचे टांग का विच्छेदन, जबकि स्थूणक 4 इंच से अधिक हो	60
एक पाद का लिसफ्रेंक विच्छेदन	40
प्रपदांगुल्यस्थि संधि के निकट एक पाद से विच्छेदन	30
निकटस्थ अंतरागुल्यस्थि संधि के निकट से एक पाद की सब अंगुलियों की हानि, जिसके अंतर्गत प्रपदांगुल्यस्थि संधि से विच्छेदन आता है	20
अन्य विनिर्दिष्ट क्षति	
हाथ और पाद की हानि	100
अन्य नि:शक्तताएं	
चेहरे की बहुत गम्भीर विद्रुपिता	100
वाक् शक्ति की पूर्ण हानि	70
वेधन के बिना क्षति से संधि-गति का सीमित निर्बन्धन, या अस्थिभंग से अंग की सीमित क्रिया, या ह्रासित क्रिया के साथ किसी भी हाथ के अंगूठे या 2 या अधिक अंगुलियों का विवृत्त अस्थिभंग	20

अनुकूलनतम, अर्थात् अधिकतम उपयोगिता की स्थिति में संधिग्रह

भुजा	**दक्षिण**	**वाम**
स्कंध	40%	30%
कोहनी	40%	30%
मणिबंध	30%	20%

टांग		
नितम्ब		60%
घुटना		40%
टखना		30%

त्रुटिपूर्ण दृक् शक्ति

दृष्टि की हानि		100%
एक नेत्र की हानि, जबकि कोई अन्य उपद्रव न हो और दूसरा नेत्र प्रसामान्य हो		40%
एक नेत्र की दृष्टि की हानि, उपद्रव या विद्रूपिता सहित, जब दूसरा नेत्र प्रसामान्य हो		40%
एक नेत्र की दृष्टि की हानि, जब कि उपद्रव या विद्रूपिता न हो और दूसरा नेत्र प्रसामान्य हो		30%

दृक् शक्ति की त्रुटि की अन्य मात्राएं

जबकि अधिकतम अभिप्राप्य तीक्ष्णता निम्नलिखित हो			निर्धारण प्रतिशत	जबकि एक नेत्र निकाल दिया जाए, बचे हुए नेत्र में चश्मे के साथ या बिना अभिप्राप्य अधिकतम तीक्ष्णता निम्नलिखित हो		निर्धारण प्रतिशत
	एक नेत्र में	दूसरे नेत्र में				
1.	6/6	6/24	15.19	1.	6/6	40
	या	6/36	20	2.	6/9	
2.	6/9	6/60		3.	6/12	
	या	3/60				

3.	6/12	कुछ नहीं	30	4.	6/18	50
4.	6/18	6/18	15.19	5.	6/24	70
5.	6/18	6/24	30	6.	6/36	80
6.	6/18	6/36	40	7.	6/60	90
7.	6/18	6/60		8.	3/60	
8.	6/18	6/60				
9.	6/18	कुछ नहीं	50			
10.	6/24	6/24	30	9.	कुछ नहीं	100
11.	6/24	6/36	40			
12.	6/24	6/60	50			
13.	6/24	3/60				
14.	6/24	कुछ नहीं	70			
15.	6/36	6/36	50			
16.	6/36	6/60	60			
17.	6/36	3/60				
18.	6/36	कुछ नहीं	80			
19.	6/60	6/60	80			
20.	6/60	3/60				
21.	6/60	कुछ नहीं	90			
22.	3/60	3/60	80			
23.	5/60	कुछ नहीं	90			
24.	कुछ नहीं	कुछ नहीं	100			

त्रुटिपूर्ण श्रवण शक्ति

निर्धारण दोनों कर्णों का एक साथ उपयोग करके प्राप्त श्रेणी पर आधारित होना चाहिए ; इस प्रकार प्राप्त श्रेणी के लिए समुचित निर्धारण प्रतिशत अंतिम स्तम्भ में दिया गया है ।

प्राप्त श्रवण शक्ति की श्रेणी	एक साथ उपयोग करके, दोनों कर्णों का निर्धारण
1. पूर्ण बधिरता	80%
2. उद्ध्वनि 3 फुट के परे न हो	70%
3. बातचीत की आवाज, 1 फुट से अधिक दूर नहीं	60%
4. बातचीत की आवाज, 3 फुट से अधिक दूर नहीं	40%
5. बातचीत की आवाज, 6 फुट से अधिक दूर नहीं	20%
6. बातचीत की आवाज, 9 फुट से अधिक दूर नहीं –	
(क) एक कर्ण पूर्णतया बधिर	20%
(ख) अन्यथा	20% से कम

इसलिए वह मामला जिसमें दक्षिण कर्ण ने श्रेणी 4 प्राप्त की हो, वाम कर्ण ने श्रेणी 2 प्राप्त की हो और दोनों कर्णों ने मिलकर श्रेणी 3 प्राप्त की हो, इस प्रकार अभिलिखित किया जाना चाहिए –

$द_4$ $वा_2$ $द+वा_3$ निर्धारण 60 प्रतिशत ।

ऊपर दिए हुए निर्धारण में, छोटी-छोटी व्याधियों को, जैसे शिरोवेदना, चक्कर आना, कर्ण क्ष्वेड, अनिद्रा आदि, जो कि साधारणतया बधिरता के साध रहती हैं, ध्यान में रखा गया है ।

Cover-III

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	290.00
4.	मानव अधिकार – डा. शिवदत्त शर्मा – 2006	340	120	60.00
5.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान (सिंधी भाषा में)	1998	कीमत रु. 45/-
4. बहुभाषी संविधान शब्दावली	1986	कीमत रु. 12/-

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Website : www.lawmin.nic.in

Email : am.vsp-molj@gov.in

Cover-IV

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के चयनित क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन https://bharatkosh.gov.in/product/ product पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in